॥ श्री हित ॥

रसिक अनन्य श्री हरिराम व्यास कृत

श्रीव्यास वाणी

सम्पूर्ण

प्रकाशक :

हित साहित्य प्रकाशन

श्री हिताश्रम सत्सङ्ग—भूमि

गान्धी मार्ग, वृन्दावन—281121

।। श्री हित ।।

रसिक अनन्य श्री हरिराम व्यास कृत

श्रीव्यास वाणी

सम्पूर्ण

प्रकाशक :

हित साहित्य प्रकाशन

श्री हिताश्रम सत्सङ्ग – भूमि

गान्धी मार्ग, वृन्दावन – २८११२१

प्रकाशकीय

रसिक सन्त श्रीहितध्रुवदासजी की सुप्रसिद्ध कृति 'बयालीसलीला' को भावानुवाद सहित प्रकाशित करने के कुछ ही समय पश्चात् यह व्यास वाणी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत की जा रही है। इसका प्रथम प्रकाशन ई॰ स॰ १९३५ में श्रीहित राधावल्लभीय वैष्णव महासभा द्वारा हुआ था। इसके उपरान्त कुछ अन्य संस्करण भी प्रकाशित हुए। इन सभी संस्करणों में पाठ-भेद सम्बन्धी अनेक मतभेद पाये जाते हैं। यहाँ हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि कुछ बहुचर्चित विवादित पाठ भेदों में हमारा प्रयास श्री व्यास वाणी की प्राचीनतम हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर पाठकों के समक्ष वस्तुस्थिति रखने का है न कि मत विशेष के पोषण का।

श्रीव्यास वाणी के पश्चात् श्री 'रसिक पदरेणु' जी महाराज द्वारा बृहद् रूप में लिखे जा रहे ' श्रीहित हरिवंश चरित्र' को हम यथा समय पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करेंगे।

श्री जगदीश शरण जी ने इस वाणी की प्रूफ रीडिंग में महत्वपूर्ण योगदान दिया है एतदर्थ हम उनके आभारी हैं। राधा प्रेस के संचालक श्री व्यासनन्दन शर्मा का सहयोग प्रशंसनीय है।

श्री हरिराम व्यास; एक परिचय

श्री हरिराम व्यास विक्रम की सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में व्रज-वृन्दावन में आकर बसने वाली उन महान विभूतियों में से एक थे, जिन्होंने वृन्दावन-रस भक्ति के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। गो॰ श्री नाभाजी ने—जो व्यास जी के समकालीन थे—'भक्तमाल' में इनका संक्षिप्त परिचय देते हुए इन्हें भगवद् भक्तों का भजन करने वाला कहा है —

काहू के आराध मच्छ कच्छ सूकर नरहरि।
वामन परसा-धरन सेतु-बन्धन जु सैलकर।।
एकनि के यह रीति नेम नवधा सौं लाये।
सुकुल सुमोखन सुवन अच्युत गोत्री जु लड़ाये।।
नवगुनौं तोरि नूपुर गुह्यौ महत सभा मधि रास के।
उत्कर्ष तिलक अरु दाम कौ भक्त इष्ट अति व्यास के।।

छप्पय ६२

श्री ध्रुवदास जी ने विक्रम की १७वीं शताब्दी के मध्य काल में रचित अपने 'भक्त नामावली' ग्रन्थ में व्यास जी का परिचय लोक-वेद की श्रृङ्खलाओं को तोड़कर श्री राधावल्लभ लाल का भजन करने वाले तथा उनके प्रसाद में अनन्य निष्ठा रखने वाले रसिक भक्त के रूप में दिया है —

भर किशोर दोउ लाड़िले, नवल प्रिया नव पीय।
प्रगट देखियत जगमगे, रसिक व्यास के हीय।।
कहनी करनी करि गयौ, एक व्यास इहि काल।
लोक वेद तजि कै भजे, श्री राधावल्लभ लाल।।
प्रेम मगन नहिं गन्यों कछु, बरना-बरन विचार।
सबनि मध्य पायौ प्रकट, लै प्रसाद रस सार।।

भक्त नामावली ४१ — ४३

व्यास जी का विस्तृत चरित्र श्री भगवत मुदित कृत 'रसिक अनन्यमाल में प्राप्त होता है। इन्होंने श्री प्रबोधानन्द सरस्वती रचित

'वृन्दावन-महिमामृत' के एक शतक का व्रजभाषा पद्यानुवाद वि॰ सं॰ १७०७ में किया था।[१] इस प्रकार ये व्यास जी के लगभग समकालीन सिद्ध होते हैं। भगवत मुदित जी श्री गोविन्द देव मन्दिर के अधिकारी श्री हरिदास पण्डित के शिष्य थे। गौड़ीय वैष्णव होते हुए भी श्री राधावल्लभीय रस रीति में इनकी समान निष्ठा थी। वृन्दावन-शतक के अनुवाद के प्रारम्भ में इन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ श्री हरिवंश महाप्रभु की भी वन्दना की है तथा समाप्ति में अपने भजन को हित संगियों के रङ्ग में रँगा हुआ कहा है –

इष्ट चंद गोवन्दवर, राधा जीवन प्राण धन।
हित सङ्गी रङ्गी भजन, कहत सुनत कल्याण वन।।

भगवत मुदित जी ने रसिक अनन्यमाल की रचना वि॰ सं॰ १७१० के आसपास की थी। इसके प्रथम दोहे में भी इन्होंने श्री चैतन्य देव तथा श्री हिताचार्य की एक साथ वन्दना की है –

प्रणवौं श्री चैतन्यवर, नित्यानन्द सरूप।
श्री हरिवंश प्रताप बल, बरनौं कथा अनूप।।

इस ग्रन्थ में ३६ राधावल्लभीय रसिकों के चरित्र दिये हुये हैं, जिसमें व्यास जी का भी चरित्र है। इसका भावानुवाद इस प्रकार है –

सर्वप्रथम मैं श्री चैतन्यदेव के चरणों में प्रणाम करता हूँ जो समस्त सुखों की राशि हैं और इसके फलस्वरूप हृदय में होने वाले आनन्द सहित व्यास जी का चरित्र गाने की इच्छा करता हूँ। श्री हित हरिवंश जी के चरणों में प्रणाम करके अब मैं व्यास जी की गाथा आरम्भ करता हूँ।

श्री सुमोखन सुकुल कुलीन महानुभाव थे। उनका ऐसा प्रभाव था कि राजा और प्रजा दोनों उनके अधीन थे। उनके पुत्र थे श्री हरिराम व्यास। वे कुलानुरूप आचरण करने वाले तथा ऐसे गम्भीर

---

१. यह पद्यानुवाद बाबा बंशीदास जी गौड़ीय द्वारा प्रकाशित है।

थे कि उनके गाम्भीर्य की कोई थाह नहीं पाता था। पुराणों के अर्थ को वे इस प्रकार समझाते थे कि श्रोताओं में कोई संशय शेष नहीं रहता था। व्यास जी के मन में भव-सागर से पार उतारने वाले समर्थ गुरु प्राप्त करने की तीव्र लालसा होती थी --

सुकुल सुमोखन बड़े कुलीन। राजा परजा सबै अधीन।।
तिनके पुत्र व्यास कुलवन्त। अति गँभीर कोऊ लहै न अन्त।।
अर्थ पुराण सकल समुझावैं। संशय कोऊ रहन न पावैं।।
ऊँचौ मन गुरु करन विचारे। ऐसौं करौं जु पार उतारे।।

गुरु की खोज में वे कभी रैदास जी, कभी कबीर जी और इसी प्रकार पीपा जी, श्री जयदेव जी, श्री नामदेव जी, श्री रंका बंका तथा कभी आचार्य रामानन्द की परम्परा में दीक्षित होने का विचार बनाते। ये सब भक्तजन व्यास जी के समय तक भगवत धाम में प्रवेश कर चुके थे। कभी वे श्री वृन्दावन का गुणगान करते और यहाँ के रसिकों की रस-भक्ति में दीक्षित होने की लालसा करते। इसी अनिश्चय में उनकी ४२ वर्ष आयु व्यतीत हो गई। तभी एक दिन श्री हित प्रभु के परम कृपापात्र शिष्य श्री नवलदास जी वहाँ आये। व्यास जी ने अत्यन्त भाव-चाव पूर्वक उनका स्वागत किया और उन्हें अपने पास ठहरा लिया। नवलदास जी ने सत्सङ्ग - वार्ता के मध्य उन्हें श्रीहित जी का यह पद सुनाया —

आज अति राजत दम्पति भोर।[१]

---

१. आज अति राजत दंपति भोर।
सुरत रंग के रस में भीने नागरि-नवल किसोर।।
अंसनि पर भुज दिये विलोकत इन्दु वदन विवि ओर।
करत पान रस मत्त परस्पर लोचन तृषित चकोर।।
छूटी लटनि लाल मन करष्यौ ये याके चित्त चोर।
परिरम्भन चुम्बन मिलि गावत सुर मंदर कल घोर।।
पग डगमगत चलत बन विहरत रुचिर कुंज घनखोर।
(जै श्री) हित हरिवंश लाल-ललना मिलि हियौ सिरावत मोर।।
— श्री हित चौरासी — ३१

इसका व्यास जी पर विलक्षण प्रभाव पड़ा। पद में वर्णित किशोर-दम्पति की सुरतान्त छवि का चिन्तन करते हुए वे तन्मय हो गये। पद की अन्तिम पंक्ति पर वे विचार करने लगे कि श्यामा-श्याम युगल जिनका हृदय शीतल करने के लिये विहार करते हैं और जिन्होंने विधि-निषेध की दृढ़ शृङ्खलायें तोड़ दी हैं एवं जो प्रेमा-भक्ति की तुलना में योग यज्ञ जप तप व्रत आदि साधनों को कोई महत्व प्रदान नहीं करते वे श्रीहिताचार्य ही मेरे वाञ्छित गुरुदेव हैं।

यह पद व्यास विचारत भये। रोम-रोम तनमय है गये।।
जिनकौ हियौ सिरावत जोरी। विधि-निषेध शृंखला दृढ़ तोरी।।
जोग जग्य जप तप व्रत जितने। शुद्ध भक्ति बल गनत न तितने।।
ऐसी सुनी नवल मुख रीति। व्यास करी 'हित गुरु' सौं प्रीति।।

नवलदास जी से श्री हित रस रीति का श्रवण कर व्यास जी के संशय, भ्रम और उनसे उत्पन्न दुःख समाप्त हो गये एवं तन मन निर्मल श्रद्धा-भाव से प्रसादित हो गया। उन्होंने श्री हित महाप्रभु से दीक्षा लेने का निश्चय किया और कार्तिक मास के प्रारम्भ में नवलदास जी के साथ वृन्दावन आ गये। उस समय हित जी श्रीराधावल्लभ जी के लता मन्दिर परिसर में भोग (नैवेद्य) के लिये रसोई बना रहे थे। व्यास जी उनके दर्शन करके अत्यन्त आनन्दित हुये और सत्सङ्ग-चर्चा करने की इच्छा प्रकट की। उनका अनुरोध सुनकर श्रीहित प्रभु ने चूल्हे पर चढ़ा हुआ बर्तन उतार दिया और अग्नि बुझा दी।

कार्तिक लगत वृन्दावन आये। नवल रसिक सँग लिये सुहाये।।
मन्दिर माझँ गुसाँई पाये। दरशन करिकैं नैंन सिराये।।
हित जू प्रभु पाकहिं विस्तरहिं। व्यास कहहिं हम चरचा करहिं।।
तबही टोकनी धरी उतार। अग्नि बुझाई लगी न वार।।

यह देखकर व्यास जी ने कहा कि प्रभु रसोई क्रिया तो हाथ का धर्म है और कहना सुनना मुख एवं कानों का काम है अतएव आप ये दोनों क्रियायें एक साथ कीजिये। इस अवसर पर अन्तर्दृष्टा

श्रीमन्महाप्रभुपाद ने व्यास जी के मन के संशयों का भेदन करते हुए उन्हें एक स्वरचित पद के माध्यम से उपदेश प्रदान किया।[1] मन को एकाग्र करने की प्रेरणा देते हुए उन्होंने कहा कि इस एक मन को बहुत स्थलों पर बाँट कर भला बताओ कोई सुखी हुआ है। जार युवती जिस प्रकार अनेक पुरूषों की आशा करके सर्वत्र विपत्ति भोगती है, वैसी ही दशा चञ्चल मन की होती है। यह बात श्रीमद्भागवत के पिङ्गला द्वारा गाये हुए गीत में प्रसिद्ध ही है। क्या एक साथ दो घोड़ों पर कोई सवारी कर सकता है ? अथवा जैसे वेश्या-पुत्र को कोई अपना पुत्र मानने को तैयार नहीं होता, इसी प्रकार अनेक प्रसङ्गों में रस लेने वाला मन भी अन्ततः भटककर दुख का ही कारण बनता है। अतएव यह बात अच्छी तरह हृदय में बिठा लो कि संसार अपनी मोहकता दिखा कर जीव को ठगने वाला है तथा काल व्याल का ग्रास है। यदि अपना हित चाहो, तो इस नश्वर प्रपंच से मुख मोड़ कर श्यामा-श्याम के प्रेमी-भक्तों का सेवन करो।

श्री हितप्रभु का उपदेश हृदयङ्गम करते हुए व्यास जी ने आजीवन भक्तों का सेवन करने का निश्चय किया और करबद्ध होकर उनसे बोले कि अब आप मुझे अपने हितधर्म में दीक्षित कीजिये। तब पूर्ण श्रद्धा देखकर श्री हित प्रभु ने उन्हें द्वादशाक्षर निजमंत्र की दीक्षा प्रदान की। व्यास जी जो अपने साथ अनेक शास्त्र पोथियाँ लाये थे वे सब उन्होंने यमुना जी को समर्पित कर दी।

यह उपदेश व्यास कौं भयौ। दोउ कर जोरि पगन सिर नयौ।।
शिक्षा दै कैं दिक्षा दीजे। अब तौ मोहि आपुनौं कीजे।।

---

१. यह जु एक मन बहुत ठौर करि कहि कौने सचु पायौ।
जहाँ-तहाँ विपति जार जुवती लौं प्रगट पिंगला गायौ।।
द्वै तुरंग पर जोरि चढ़त हठ परत कौन पै धायौ।
कहि धौं कौन अंक पर राखै जो गनिका सुत जायौ।।
(जै श्री) हित हरिवंश प्रपंच बंच सब काल व्याल कौ खायौ।
यह जिय जानि श्याम-श्यामा पद कमल संगि सिर नायौ।।

श्रद्धा लखि निज मंत्र सुनायौ। भयौ व्यास के मन को भायौ।।
वाद हेत पोथी ही जोरीं। ते अब सब जमुना में बोरीं।।

अब वे हित रस रीति का सम्यक निर्वाह करते हुए निकुञ्ज-विलासी युगल दम्पति की उपासना करने लगे। युगल की रास-विलास मई लीला के आनन्द में उनका मन डूब गया और उन्होंने गुरूदेव तथा साधु भक्तों की सेवा का व्रत धारण कर लिया। माला-तिलकधारी विरक्त सन्तों के प्रति उनका गहरा भाव था और वे नित्य प्रति उनका चरणामृत और प्रसाद ग्रहण करते थे। उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर श्यामा-श्याम 'युगल किशोर' नाम से एक ही सुललित विग्रह धारण करके प्रगट हुए। व्यास जी ने श्री हित प्रभु द्वारा प्रवर्तित सेवा-पूजा पद्धति से उनके वाम भाग में श्री राधा की गादी विराजमान करके उनकी विधिवत् स्थापना की। श्री हरिवंश कृपा से प्राप्त नित्य-दूलह-दुलहिनी के इस मन मोहक स्वरूप की राग-भोग आदि उपचारों से वे दुलार पूर्वक सेवा करने लगे। वे स्वयं ही उनका शृङ्गार बनाते और उसे धारण करा कर ठाकुर युगल किशोर की अनुपम रूप-माधुरी निहारते रहते।

एक बार व्यास जी अनेक महतजनों के साथ रासलीलाभिनय का दर्शन कर रहे थे। रास में उद्दाम नृत्य करती हुई श्री राधा के चरण नूपुर की डोरी टूट गई। यह देख कर व्यास जी ने तत्काल अपना जनेऊ तोड़कर उसे गूँथ दिया और श्री राधा-चरण में धारण करा दिया। इस प्रकार उन्होंने दर्शा दिया कि वर्णाश्रम धर्म और वैदिक विधि विधान का अन्तिम फल श्री राधा चरणों की प्रीति है। जिन श्रीहित महाप्रभु की कृपा से व्यास जी को यह लाभ प्राप्त हुआ उनकी स्तुति इस पद द्वारा उन्होंने की है –

नमो नमो जय श्री हरिवंश।
रसिक अनन्य वेणु कुल मण्डन लीला मानसरोवर हंस।।

नमो जयति श्री वृन्दावन सहज माधुरी रास विलास प्रशंस।
आगम निगम अगोचर राधे चरण सरोज व्यास अवतंस।।

(पृष्ठ – १४)

व्यास जी ने श्रीराधावल्लभलाल को सर्वोपरि तत्त्व माना है और उन्हें सभी अवतारों का अवतारी कहा है –

राधावल्लभ मेरो प्यारो
सर्वोपरि सबहिन कौ ठाकुर सब सुखदानि हमारौ।।

× × ×

अवतारी सब अवतारन कौ महतारी-महतारौ।। (पृष्ठ – ३३)

व्यास जी को १८ वर्ष गुरूदेव का सानिध्य प्राप्त हुआ। श्रीहित प्रभु वि॰ सं॰ १६०६ में अंतर्धान हुए। इससे व्यास जी को अत्यन्त विरह-दुःख हुआ, जिसे उन्होंने दो पदों में व्यक्त किया है

हुतौ रस रसिकन को आधार (पृष्ट – ४०)
पैनी छवि कोउ कवि न बखानै (पृष्ट – ४०)

व्यास जी के बड़े पुत्र का नाम किशोर दास था। वृन्दावन-वास की इच्छा से वे भी पिता के पास आ गए थे। व्यास जी ने उन्हें स्वामी श्री हरिदास जी से दीक्षा दिलवा दी। किशोरदास जी ने स्वामी जी की रहन-सहन का अनुसरण करते हुए श्री कुञ्जबिहारी लाल का दृढ़ता पूर्वक भजन किया।

समय आने पर व्यास जी ने अपनी स्वामिनी श्री श्यामा जू की आज्ञा से निकुञ्ज प्रस्थान करने का निर्णय किया। अन्तिम समय में श्री युगल-किशोर की रूप छटा को नेत्रों में बसा कर एवं सभी सन्त-महन्तों को करबद्ध प्रणाम करते हुये उन्होंने पार्थिव देह त्याग कर निकुञ्ज लीला में प्रवेश किया।

अन्त में भगवत मुदित जी कहते हैं कि व्यास जी के इष्ट श्रीराधावल्लभ लाल एवं गुरु श्री हित हरिवंश महाप्रभु थे, यह उन्हीं की रचनाओं से स्पष्ट होता है। गुरु द्वारा किसी को शिष्य मानने से गुरु-शिष्य सम्बन्ध की पुष्टि नहीं होती, वरन् जब शिष्य उन्हें गुरु मानता

है, तभी यह सम्बन्ध प्रमाणित होता है। श्री हरिवंश महाप्रभु के प्रति अपनी रस-सिक्त गुरु भावना को व्यास जी ने पदों और साखियों में अनेकों बार व्यक्त किया है। उनकी ही कृपा से व्यास जी ने निकुञ्ज-लीला रूपी अपनी संजीवन-मूली को प्राप्त किया, इस बात को मैं कहाँ तक कहूँ यह तो विश्व-प्रसिद्ध ही है —

दोहा- श्रीराधावल्लभ इष्ट गुरु, श्री हरिवंश सहाइ।
व्यास पदनि तें जानियौ, हौं कहा कहौं बनाइ।।
गुरु कौ मान्यौ शिष्य नहीं, शिष्य मानै गुरु सोइ।
पद साखी करि व्यास ने, प्रगट करी रस भोइ।।
हित हरिवंश प्रताप तैं, पाई जीवन-मूरि।
'भगवत' कहि लिखि सकौं नहिं, रहे विश्व में पूरि।।

रसिक अनन्य माल में वर्णित व्यास-चरित्र के इन अंतिम तीन दोहों से स्पष्ट है कि व्यास जी के कुछ ही समय बाद उनके दीक्षा-गुरु सम्बन्धी प्रसङ्ग को विवादास्पद बना दिया गया था। इसीलिये भगवत मुदित जी उनकी रचनाओं का हवाला देते हुए कह रहे हैं कि इस प्रसङ्ग को उनके पद एवं साखियों से ही समझना चाहिये।

श्री वासुदेव गोस्वामी लिखित ''भक्त कवि व्यास जी'' उन पर गवेषणा पूर्ण लिखा हुआ कदाचित् एक ही ग्रन्थ है। इसे लेखक ने दो भागों में विभक्त किया है। पहले भाग में ६ अध्याय हैं जिनमें व्यास जी पर विपुल शोध सामग्री प्रस्तुत की गई है और दूसरे भाग में उनकी रचनाओं का संकलन है। ग्रन्थ में तत्कालीन वातावरण, इतिवृत्त का अध्ययन करने के सूत्र, जीवन-चरित्र एवं काव्य समीक्षा आदि विषयों को स्पष्ट करने का परिश्रम पूर्ण प्रयास किया गया है परन्तु व्यास जी के दीक्षा गुरु निर्धारित करने के प्रसङ्ग में लेखक तटस्थ समीक्षक नहीं रह पाये है। भगवत मुदित जी को उनका समकालीन मानते हुए भी लेखक ने रसिक अनन्य माल के व्यास-चरित्र को प्रमाण न मानकर उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में लिखे गये वंश-वर्णन, गुरु-शिष्य वंशावली और जन्म बधाईयों की सूचनाओं पर अपनी आस्था प्रकट की है।

ग्रन्थ के उत्तरार्ध में व्यास जी द्वारा रचित कहा जाने वाला एक 'गुरु मङ्गल' दिया हुआ है। इसे लेखक ने उनका अपने पिता श्री सुमोखन शुक्ल से दीक्षित होने का अन्तःसाक्ष्य माना है परन्तु मङ्गल की भाषा अपेक्षाकृत आधुनिक है और व्यास जी की रचनाओं से मेल नहीं रखती है। श्री राधा किशोर गोस्वामी द्वारा प्रकाशित व्यास वाणी के प्रारम्भ में श्री जुगलदास कृत 'व्यास जी का मङ्गल' दिया हुआ है। इन दोनों मङ्गलों की भाषा बिल्कुल एक है। गुरुमङ्गल की अन्तिम 'जुगल हिय दरसाइयौ' पंक्ति के जुगल शब्द से भी यह जुगलदास की रचना सिद्ध होती है। पाठकों से हमारा अनुरोध है कि गुरु मङ्गल का व्यास वाणी तथा जुगलदास कृत मङ्गल से भाषा परीक्षण वे स्वयं करके देखें। व्यास वाणी की हस्तलिखित प्रतियों में सर्वाधिक प्राचीन प्रतियाँ वि॰ सं॰ १७६१ तथा १८७६ की हैं। ये दोनों कोलारस जि॰ शिवपुरी में क्रमशः पं॰ वासुदेव जी खेमरिया तथा पं॰ व्रजवल्लभ जी के पास सुरक्षित हैं। इन प्रतियों में यह 'गुरु मङ्गल' प्राप्त नहीं होता। 'भक्तकवि व्यास जी' के लेखक ने अपने मत के पोषण के लिये व्यास जी कृत 'रास पञ्चाध्यायी' की इस त्रिपदी का भी हवाला दिया है —

कह्यौ भागवत शुक अनुराग। कैसे समझे बिन बड़भाग।
श्री गुरु सुकुल कृपा करी।।

परन्तु वि॰ सं॰ १७६१ वाली सर्वाधिक प्राचीन प्रति में यह त्रिपदी इस प्रकार दी हुई है —

कह्यौ भागवत शुक अनुराग। कैसे समझे बिन बड़भाग।
श्री हरिवंश कृपा बिना।।

जहाँ एक ओर यह पाठ प्राचीन है, वहीं दूसरी ओर त्रिपदी के शेष दो चरणों के सर्वथा अनुरूप भी है। अन्यत्र भी व्यास जी ने यही शब्द विन्यास प्रयोग किया है —

श्री हरिवंश कृपा बिना निमिष नहीं कहूँ ठौर।

व्यास वाणी के प्रकाशित संस्करणों में सिद्धान्त के पदों का प्रथम पद 'वन्दे श्री सुकुल पद पङ्कजन' से प्रारम्भ होता है परन्तु

वि॰ सं॰ १८७६ वाली प्रति में इसका पाठ 'वन्दे श्री शुक पद पङ्कजन' दिया हुआ है। श्रीमद्भागवत के प्रति व्यास जी की अत्यन्त निष्ठा थी एवं अन्यत्र भी उन्होंने इसी प्रकार शुकदेव जी का स्तुति-गान किया है।[1]

'वन्दे राधा रमण मुदारं' यह व्यास वाणी के उत्तरार्द्ध का मङ्गलाचरण पद है। सभी प्रकाशित संस्करणों में इसका द्वितीय चरण 'श्री गुरु सुकुल सहचरि ध्याऊँ दम्पति सुख रससारं' दिया हुआ है, किन्तु १८७६ वाली प्रति में इस पद में यह चरण प्राप्त नहीं होता। इसे प्रक्षिप्त मान लेने पर पद में एक चरण की कमी रह जाती है। परन्तु व्यास-वाणी में ऐसे कई पद उपलब्ध हैं, जिनमें एक चरण कम है।[2]

इसी प्रकार उक्त दोनों प्राचीन प्रतियों में जहाँ 'हित गुरु' और 'गुरु हरिवंश' पाठ है, वहाँ अनेक संस्करणों में 'श्री गुरु' और 'हित हरिवंश' पाठ प्रकाशित हुए हैं। कहीं-कहीं ऐसा भी हुआ है कि जहाँ 'गुरु' पाठ अस्वीकार करना सम्भव नहीं हो सका है, उस रचना को ही प्रक्षिप्त मान लिया गया है। प्रसाद-महिमा पर यह दोहा प्रसिद्ध है जो वि॰ सं॰ १७६१ की सर्वाधिक प्राचीन प्रति में भी पाया जाता है –

कोटि कोटि एकादशी, महाप्रसाद को अंश।
व्यासहिं यह परतीत है, जिनके गुरु हरिवंश।।

इसमें यदि गुरु के स्थान पर हित शब्द रख दिया जाय तो उत्तरार्ध अस्पष्ट हो जायेगा। अतएव इन संस्करणों में इस दोहे को प्रक्षिप्त मान लिया गया है।

श्री सुमोखन शुक्ल माध्व सम्प्रदाय में दीक्षित थे और श्री चैतन्य महाप्रभु के गुरू भाई श्री माधवदास जी के शिष्य थे। श्री मध्वाचार्य ने भगवान विष्णु को परात्पर माना है और उनका तथा उनके अवतारों के भजन का विधान किया है। सखी भाव पर आधारित निकुञ्जोपासना का उनके सिद्धान्त में कोई उल्लेख नहीं है। कालान्तर में व्यास जी

---

१. **नमो नमो जय शुकदेव वानी,** पृष्ट ३५
शुक नारद से भक्त न कोई, पृष्ट ३६

२. **कौन कौन अंगनि कौ रूप रङ्ग बरनौ,** पृष्ट ११२
देखो माई सोभा नागर नट की, पृष्ट ११४

को सुमोखन जी का शिष्यसिद्ध करने की प्रवृति प्रारम्भ होने से सुमोखन जी के साथ 'सहचरि' शब्द जोड़कर उन्हें सखी भाव भावित चित्रित किया जाने लगा। 'भक्त कवि व्यास जी' के पृष्ट १२६ पर एक प्रमाण के आधार पर सुमोखन जी को श्री नृसिंह का उपासक माना गया है। उनकी सम्प्रदाय परम्परा देखते हुये यह मत ठीक जँचता है, फिर भी लेखक ने व्यास जी को सुमोखन जी का शिष्य सिद्ध करने का भरसक प्रयास किया है। जबकि व्यास जी सखी-भाव से श्यामा-श्याम युगल की भक्ति करते थे और इस भाव की दीक्षा उन्हें श्री हित हरिवंश महाप्रभु से प्राप्त हुई थी। ग्रन्थ-लेखक ने व्यास जी पर लिखे गये नाभास्वामी जी के छप्पय को भी उनके माध्व होने का प्रमाण माना है, परन्तु इस छप्पय का उनके माध्वमतानुयायी होने से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। इसमें मुख्य रूप से दो तथ्य उल्लेखित हैं —

१. व्यास जी भक्तों को ही अपना इष्ट मानते थे।

२. उन्होंने वैदिक विधि-विधान के प्रतीक यज्ञोपवीत को तोड़कर उससे रास के मध्य श्री राधाचरण का नूपुर गूँथ दिया था।

भगवत मुदित कृत उनके चरित्र में हम देख चुके हैं कि व्यासजी को महाप्रभु श्री हित हरिवंश जी से भक्तों का भजन करने का उपदेश प्राप्त हुआ था, जिसका स्वयं उन्होंने एक साखी में इस प्रकार उल्लेख किया है —

रसिक कहैं सोई भली, बुरी न मानों लेश।
पद रज लै सिर पर धरौं यह व्यासै उपदेश।।

इस 'भक्त भजन' को ही नाभास्वामी ने व्यास जी के परिचय का मुख्य आधार बनाया है। छप्पय में उल्लिखित दूसरा तथ्य भी उनके माध्व-मतानुयायी होने की पुष्टि न करके उन्हें हितानुयायी ही सिद्ध करता है। श्री मध्वाचार्य शास्त्रीय विधि विधान के समर्थक आचार्य थे। जबकि श्री हित प्रभु द्वारा प्रेमाभक्ति के पथ में विधि-निषेध त्याग प्रसिद्ध ही है।

इसी प्रकार व्यास-वाणी में अनन्यता एवं आचार पद्धति के ऐसे अनेक उदाहरण है, जो उन्हें श्री हिताचार्य का शिष्य सिद्ध करते हैं, जैसे—

१. परिवारीयजनों द्वारा किये गये गणेश-पूजन का विरोध।[1]

२. प्रसाद निष्ठा के फलस्वरुप एकादशी त्याग।[2]

३. तिलक के लिये श्री वृन्दावन रज एवं श्याम वन्दनी का प्रयोग।[3]

अन्य देवताओं के पूजन से रहित अनन्यता पूर्वक स्व-इष्टाराधन एवं सुदृढ़ प्रसाद-निष्ठा ये श्री हित-सम्प्रदाय के मौलिक आदर्श हैं और इसमें वृन्दावन रज तथा श्याम बंदनी द्वारा तिलक करने का विधान स्वयं श्री हिताचार्य ने किया है। अपने एक शिष्य को लिखे गये पत्र में उन्होंने श्याम बंदनी और विहार चन्दन से उपमित वृन्दावनरज को तिलक के लिये ग्राह्य बताया है।[4] 'भक्त कवि व्यासजी' के लेखक ने पृष्ट ७० पर श्री हित हरिवंश जी को व्यास जी का सद्‌गुरु तथा सुमोखन जी को दीक्षा गुरु माना है परन्तु सद्‌गुरु की केवल भजन-पद्धति ही ग्रहण की जाती है जबकि आचार पद्धति एवं तिलक सम्बन्धी व्यवस्था में दीक्षा गुरु तथा सम्प्रदाय परम्परा का ही अनुसरण किया जाता है। हम देख चुके है कि व्यास जी ने इन सब विषयों में श्रीहिताचार्य को ही प्रमाण माना है अतएव वे ही उनके दीक्षागुरु एवं सद्‌गुरु सिद्ध होते हैं। लेखक ने पृष्ट ६१ पर यह विचार व्यक्त किया है कि व्यास जी अपनी जन्मस्थली ओरछा में ही युगल-भक्ति प्राप्त करके आप्त काम हो चुके थे, फिर उन्हें श्री वृन्दावन जाकर श्रीहितप्रभु से दीक्षा लेने की क्या आवश्यकता थी ? परन्तु व्यास-वाणी के अन्तःसाक्ष्य ही नवलदास जी की प्रेरणा से श्री हरिवंश प्राप्ति एवं श्रीहरिवंश प्राप्ति से आप्त कामता का डिण्डिम घोष कर रहे हैं–

उपदेस्यौ रसिकन प्रथम, तब पाये हरिवंश।
जब हरिवंश कृपा करी, मिटे व्यास के संश।।

---

१. **मरैं वे जिन मेरे घर गनेस पुजायौ,** पृष्ट ६२

२. **करैं व्रत एकादशी, महाप्रसादते दूरि,** पृष्ट १२

३. **मोहि वृन्दावन रज सौं काज।**
माला मुद्रा, श्याम बंदनी तिलक हमारौ साज।। पृष्ट ५१

४. **श्याम-बंदिनी विहार चन्दन लेनौं।**

मोह माया के फन्द बहु व्यासहिं लीन्हों घेरि।
श्री हरिवंश कृपा करी, लीनों मोकों टेरि।।

हम पूर्व में कह चुके हैं कि श्री सुमोखन जी के गुरुदेव श्री माधवदास जी माध्वमतानुयायी थे। व्यास जी द्वारा इनकी स्तुति में रचे गये एक पद से अनुमान होता है कि उन्हें बाल्यावस्था में श्री माधवदास जी का सत्सङ्ग प्राप्त हुआ था।[1] सुमोखन जी स्वयं भगवान नृसिंह के उच्चकोटि के उपासक थे। पिता के भक्ति-भाव का स्वभावतः व्यास जी पर अमिट प्रभाव पड़ा। घर में ही प्राप्त होने वाले सत्सङ्ग से उनका मन भक्ति-संस्कारों से सम्पन्न हो गया, फलतः उन्हें इन संस्कारों को पल्लवित करने के लिये गुरु की आवश्यकता अनुभव हुई और वे गुरु की खोज में लग गये। नवलदास जी का सङ्ग प्राप्त होने पर व्यास जी की इस खोज को विश्राम मिला एवं वे बृन्दावन आकर श्री हित हरिवंश महाप्रभु से दीक्षा लेकर स्थायी रूप से यहीं भक्ति साधना में लीन हो गये।

हमारी संस्कृति में सर्वत्र माता-पिता को शिक्षा गुरु के रूप में स्थान दिया गया है। बाल्यकाल में जो शिक्षाएँ माता-पिता से प्राप्त होती हैं, उन्हीं पर बालक के भविष्य का प्रासाद खड़ा होता है। माता-पिता यदि ऐहिक उन्नति में ही मानव-जन्म की सार्थकता मानते हों तो बालक की प्रवृति भी उसी दिशा में अग्रसर होती है। श्री सुमोखन जी स्वयं भक्त थे और उनके यहाँ श्री माधवदास जी जैसे सन्त भक्तों का आना-जाना बना रहता था अतएव व्यास जी को भक्ति संस्कार एवं पारमार्थिक ज्ञान अपनी पैतृक विरासत के रूप में बचपन से ही प्राप्त हुए। अपने पिता के प्रति उनका गहरा श्रद्धा-भाव था सुमोखन जी का पुत्र होने में वे स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करते थे 'जो हौं सत्य सुकुल को जायो' इस पंक्ति से उनका यह भाव स्पष्ट होता है। अन्य स्थलों पर उन्होंने अपने पिता को कृतज्ञता पूर्वक शिक्षा गुरु के रूप में स्मरण किया है किन्तु इससे सुमोखन जी को उनका दीक्षा गुरु

---

१. श्री माधवदास शरण में आयौ, पृष्ठ १८

मानना सर्वथा भूल है। व्यास जी के अनेक पद एवं साखियाँ स्पष्टतः श्री हित प्रभु को ही उनका दीक्षा गुरु सिद्ध करती हैं।

"भक्त कवि व्यास जी" के लेखक ने व्यास जी के जन्म और निकुञ्ज गमन आदि सम्वतों को भी उपलब्ध प्राचीन प्रमाणों से हटकर निर्धारित किया है।[1] इतना ही नहीं पृष्ट ७२ पर लेखक ने व्यास जी के एक पद के आधार पर श्री हिताचार्य का निकुञ्ज गमन वि॰ सं॰ १६०९ के बहुत बाद सिद्ध करने का प्रयास किया है। इस पद की सम्बन्धित पँक्तिया इस प्रकार हैं –

राधे जु अरु नवल स्यामघन, विहरत वन-उपवन वृन्दावन।

❀ ❀ ❀

हरिवंशी हरिदासी बोलीं, नहिं सहचरि समाज कोऊ जन।
व्यासदासि आगै ही ठाड़ी सुख निरखत बीते तीनों पन।।

पृष्ठ संख्या २०४

इसमें 'बीते तीनों पन' से उक्त लेखक ने यह सिद्ध करना चाहा है कि वृद्धावस्था में रचित इस पद के रचना काल तक श्री हरिवंश जी एवं श्री हरिदास जी दोनों व्यास जी के सम्मुख विद्यमान थे परन्तु सावधानी पूर्वक इन पंक्तियों का अर्थ ग्रहण करने पर जो तात्पर्य सामने आता है वह लेखक से बिल्कुल विपरीत अर्थ वाला है। इसमें व्यास जी यह कह रहे हैं कि निकुञ्ज-स्थित श्री हरिवंशी एवं श्री हरिदासी दोनों सखियाँ मुझे बुला रही हैं यह कहकर कि अब पृथ्वी पर कोई सहचरि विद्यमान नहीं है अर्थात् रस भक्ति के प्रचार के लिये आई हुई सभी सहचरियाँ वापस निकुञ्ज में आ गई है अतः तुम भी आ जाओ। इसके उत्तर में व्यास जी कह रहे हैं कि यह व्यासदासी आगे ही खड़ी है अर्थात् निकुञ्ज गमन को उत्सुक है और श्यामा-श्याम के विहार-सुख का अवलोकन करते हुये अब मेरी तीनों वय बीत चलीं है।

---

1. इस विषय की विस्तृत जानकारी के लिये देखिये –
श्री हित हरिवंश गोस्वामी; सम्प्रदाय और साहित्य (द्वितीय सं॰ पृष्ट ३१२)
लेखक – आचार्य श्री ललिता चरण गोस्वामी

अतएव स्पष्ट है कि इस पद की रचना श्री हरिवंश जी एवं श्रीहरिदास जी के निकुञ्ज प्रस्थान के पश्चात हुई है।

श्री भगवत मुदित जी रचित व्यास-चरित्र के आधार पर उनका जन्म सम्वत् प्रामाणिक रूप से १५४९ तथा वृन्दावन आगमन सम्वत् १५९१ सिद्ध होता है। वृन्दावन आकर व्यास जी पुनः कहीं नहीं गये और दीर्घायु प्राप्तकर वि॰ सं॰ १६५५ के लगभग उनका निकुञ्जगमन हुआ।

श्री व्यास वाणी पूर्वार्ध और उत्तरार्ध क्रम से दो खण्डों में विभक्त है। पूर्वार्ध को सिद्धान्त खण्ड कहा गया है और इसमें साखियों एवं सिद्धान्त सम्बन्धी पदों का समावेश है। उत्तरार्ध में श्यामा-श्याम युगल की श्रृंगारलीला के पद संकलित हैं।

व्यासजी की उपदेश-शैली सरल एवं हृदय स्पर्शी है। वर्णन की स्पष्टता और निर्भीकता के सन्दर्भ में वे कबीरजी के समकक्ष हैं। कपटी गुरुओं, मनमुखी शिष्यों और दम्भी उपदेशकों की उन्होंने खूब खबर ली है। रोचक शैली में फटकार लगाना उनकी अपनी विशेषता है जिसमें कहीं-कहीं हास्य का भी पुट पाया जाता है :-

गुरुहि न मानत चेली चेला।
गुरु रोटा पानी सौं घूँटत, सिष्य के दूध पिवैं कुकरेला।।
सिष्यनि के सोने के बासन, गुरु कैं कुँड़ी कुँड़ेला।
चोर चिकनियनि कौ बहु आदर, गुरु कौं ठेली ठेला।।
सिष्य तौ माँखी चूसा सुनियत, गुरु पुनि खाल उचेला।
वह कायर यह कृपन हठीलौ, ईंट मारि दिखरावत भेला।।

पृष्ट ८९

साधुओं की उपेक्षा करके सगे-सम्बन्धियों को महत्व देने वाले गृहस्थों के लिये उनका यह पद प्रसिद्ध है –

हरि भक्तन तें समधी प्यारे।
आये संत दूरि बैठारे, फोरत कान हमारे।।
दूर देस ते सारे आये, ते घर में बैठारे।

भक्तनि दीजै चून चननि कौ, इनकौं सिलवट न्यारे।।

पृष्ट ५९

श्रीहिताचार्य द्वारा प्रवर्तित श्री वृन्दावन रस सिद्धान्त के अनुयायी होने से व्यास जी की रचनाओं में वृन्दावन निष्ठा प्रखर रूप से उभरी है। वृन्दावन के प्रति उनका इतना गहन लगाव है कि वे उसे 'घर बात' मानते हैं –

श्री वृन्दावन मेरी घर बात।
जाहि पीठि दै दीठि करौं कित जित तित दुखित जीव बिललात।।

पृष्ट ५२

श्री वृन्दावन की भूमि, रज, वृक्ष, लता, यमुना आदि विषयों पर उन्होंने अनेक पद रचे हैं। यहाँ तक कि एक पद में यहाँ के साग की भी प्रशंसा की है –

रुचत मोहि वृन्दावन कौ साग।
कंद मूल फल फूल जीविका मैं पाई बड़भाग।।

पृष्ट १८

यहाँ के फले फूले लता द्रुमों में उन्हें मुस्कराते हुए दम्पति दिखाई देते हैं तथा किंशुक-माधुरी में अबीर-गुलाल से रंगे हुये –

सन्तत शरद बसंत बेलि द्रुम झूलत फूलत पात।
नन्द-नँदन वृषभानुनन्दिनी मानहुँ मिलि मुसकात।।

⊛ ⊛ ⊛

किंशुक नवल नवीन माधुरी बिगसत हित उरझात।
मानहुँ अबिर गुलाल भरे तन दम्पति रति अकुलात।।

पृष्ट २१

साहित्यिक भावों में व्यासजी ने मान पर सबसे अधिक पद रचे हैं। मानिनि श्री राधा और विरहातुर नन्दनन्दन के अनेक सुन्दर शब्द चित्र उन्होंने प्रस्तुत किये हैं। मानापनोदन के प्रयासों में कवि ने कई मनोहर लीलाओं की उद्भावना की है। श्री राधा के सम्मुख सखियाँ

दम्पति का वेष धारण करके मान-लीला का अभिनय करती हैं, जिससे श्री राधा मान छोड़कर प्रसन्न मुखी हो जाती हैं –

दम्पति कौ सौ रूप भेष धरि सहचरि वृन्दावन महँ खेलत।

❀ ❀ ❀

व्यास दासि रस रासि हँसी तब चास्यौ लटकि रहे।।

पृष्ट १८०

नन्दनन्दन द्वारा स्वयं अपनी दूती का वेष धारण करके, किसी अन्य नायिका पर आसक्त होने का वर्णन सुनाकर मानिनी श्री राधा में कौतूहल उत्पन्न करते हुये उन्हें प्रसन्न करना –

सुनि राधा मोहन हौं दूती कपट वचन कहि कहि बौराई।
तोहि मनावन मोहि पठै पुनि दूती एक अनत दौराई।।

पृष्ठ १७८

व्यास जी ने एक पद में श्रीकृष्ण जन्म अवसर पर श्री राधा के भी आने का उल्लेख किया है जो पुराणों का अनुसरण है किन्तु शेष सभी जन्म-बधाई पदों में ब्रज-वृन्दावन की भावना स्वीकार करते हुए वय-क्रम में नन्दनन्दन को श्री राधा से बड़ा बताया गया है –

गोपी गावति मंगलचार।
कान्ह कुँवर प्रगटे जसुदा कें बाजत बैनु पखावज तार।।

❀ ❀ ❀

राधा लै वृषभान घरनि मनि आई चञ्चल अञ्चल हार।

पृष्ट २३२

श्री राधा जन्म बधाई पदों में व्यासजी अत्यन्त भाव-विभोर दिखाई देते हैं तथा अधिकांश पदों में वर्णित समारोह में किसी न किसी रूप में अपनी उपस्थिति का भान कराते हैं –

वह देखो वृषभान भवन पर विमल ध्वजा फहराई ।

पृष्ट २३७

इस पंक्ति में वे न केवल अपनी उपस्थिति का परिचय दे रहे हैं, वरन् वर्ण्य विषय के साथ अपने तादात्म्य के प्रभाव से श्री वृषभान-भवन पर फहराती इस विमल ध्वजा का दर्शन पाठक को भी करा रहे हैं। ध्वजा फहरान द्वारा श्री वृषभान भवन के लोकोत्तर गौरव तथा वहाँ के सुख रंग को ध्वनित किया गया है, जो कवि-प्रतिभा का व्यञ्जना व्यापार कहा जाएगा। उन्होंने श्री राधा जन्म के अवसर पर किशोर दम्पति की नित्य लीला की ओर यह कहकर भावुकों का ध्यान खींचा है कि इस महोत्सव में श्यामसुन्दर को कुंज-केलि का रसमय राज्य बधाई में प्राप्त हुआ है –

बधाई बाजति रावल आजु।

जाचक परम धनिक भये पायौ धनिक इन्दिरा लाजु।
व्यास स्वामिनी श्यामहिं दीनौं कुञ्ज केलि रस राज।।

पृष्ठ २३७

रास-पञ्चाध्यायी व्यास जी की प्रसिद्ध और उत्कृष्टतम रचना है। नन्ददास जी की पञ्चाध्यायी के साथ इसकी तुलना करने पर यह किसी भी दृष्टि से उससे न्यून सिद्ध नहीं होती। प्रारम्भ में श्री कृष्ण और गोपियों के मनोहर संवाद हैं जिनमें त्रिपदी-छन्द के कारण आकर्षक लयबद्धता बन पड़ी है। उसके पश्चात रास लीला का वर्णन किया गया है। भागवतोक्त रास-प्रकरण में इन दोनों प्रसंगों के मध्य श्रीकृष्ण के अन्तर्धान होने तथा गोपियों के विरह का उल्लेख है, जिन्हें व्यासजी ने यह कहकर छोड़ दिया है कि –

'रस में विरस जु अन्तरधान'

वे वंशीवट की छाया में होने वाले इस भागवत प्रसिद्ध महारास का वर्णन करते समय भी 'नित्य रास' को नहीं भूलते हैं और यह कहकर कि वंशीवट के निकट ही 'श्री राधा रति गृह कुञ्जन अटा' स्थित है, उसकी सूचना दे देते हैं –

''निकट कल्पतरु वंशीवटा। राधा रति गृह कुंजन अटा।''
रास रसिक गुन गाइ हौं।

रास के पदों में नृत्य-संगीत के ठेठ शास्त्रीय पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग उनके संगीत ज्ञान को दर्शाता है। कहा जाता है कि उन्होंने संगीत पर भी एक ग्रन्थ की रचना की थी।

व्यासजी का रचना क्षेत्र निकुञ्ज तक ही सीमित नहीं है, उन्होंने व्रज-लीला के भी अनेक मनोहारी चित्र अंकित किये हैं। नन्द नन्दन का सखाओं के साथ वन भोजन, गोरस बेचने जाने वाली गोपी से दान माँगना और पनघट की छेड़छाड़ के कई मनोरम दृश्य उनकी वाणी में पाये जाते हैं। इनकी एक विशेषता यह है कि ये वर्णन लोक-जीवन के अत्यन्त निकट प्रतीत होते हैं। व्यास-वाणी की मतवाली गोपी नन्दलाल पर इतना प्रेमाधिकार रखती है कि वह न केवल उनसे जल-गगरी उठवाना चाहती है वरन् इण्डुरी[1] भी उनके पीताम्बर की ही बनाना चाहती है –

देहु पीतपट करहु इण्डुरी छाड़हु छैल अचगरी।

पृष्ठ २६९

कुछ पदों में गोपी खण्डिता के रूप में भी वर्णित है, किन्तु इन पदों की सँख्या बहुत कम है।

श्री वृन्दावन के रस-सिद्ध भक्त कवियों की यह विशेषता है कि वे वर्ण्य विषय में निमग्न होकर काव्य रचना करते हैं। इसीलिये विषय की अनुभूति और उसके प्रति प्रखर निष्ठा इन कवियों के प्रत्येक शब्द में अनुस्यूत है। व्यास वाणी में ये विशेषतायें पूर्ण मात्रा में विद्यमान हैं। यह कवि कल्पना प्रसूत काव्य नहीं है वरन् अनुभव प्रसूत है अथवा यों कहें कि उन्होंने अपने अनुभव को ही शब्दों का परिवेष देकर वाणी-काव्य का रूप दिया है। यही कारण है कि इसमें अद्‌भुत प्रभावोत्पादकता है। व्यास जी के पद एवं साखियाँ पाठक को इनमें वर्णित विषय के निकट खींच लाने में पूर्ण समर्थ हैं और यह इनकी सर्वोपरि विलक्षणता है।

---

१. बोझा उठाते समय सिर पर रखी जाने वाली कपड़े की गोल गद्दी।

व्यास वाणी की भाषा सरस और प्रवाहयुक्त है। अनेक स्थलों पर यह काव्य की अपेक्षा बोलचाल की भाषा के अधिक निकट प्रतीत होती है। एक-दो स्थलों पर तुकान्त शब्दों में प्रथमा विभक्ति दिखाकर उन्हें संस्कृत रचना की प्रकृति में ढाला गया है। अनुप्रास मिलाने के लिये शब्दों में तोड़-मरोड़ कई पदों में दिखाई देती है। व्यास जी की भाषा में बुन्देलखण्डी शब्दों का प्रचुर प्रयोग है जैसे गटी, डँड़िया, सारी, गुदरवी, उकाढ़ी, चचरि चुरी, चचमान, लोई, ढोवा, वोट इत्यादि। एकाध स्थल पर लगाया, रिझाया, गाया जैसे प्रयोग हैं जो खड़ी बोली के हैं। मध्ययुगीन काव्य भाषा में फारसी शब्द अपना स्थान बनाते देखे जाते हैं किन्तु व्यास जी इनसे प्रायः बचकर ही चले हैं, फिर भी कहीं कहीं ये प्रयुक्त हैं, जैसे तालिम, अजगैवी, महल आदि।

व्यास जी ने अलंकारों को प्रयास पूर्वक ग्रहण नहीं किया है, वरन् उनकी वाणी में अलंकारों का प्रयास हीन, सहज-सुन्दर समावेश यत्र-तत्र हुआ है। किन्तु वह अलंकार-बोझिल नहीं है। वस्तुतः जो काव्य रस-भाव प्रधान होता है, उसमें अलंकारों की अनिवार्य आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि वह 'काव्यात्मा-रस' से ही पर्याप्त चमत्कार और शोभा को प्राप्त कर लेता है। व्यास वाणी के उत्तरार्ध में रूपक को सर्वाधिक स्थान मिला है। सांग रूपक का निर्वाह वे इतनी कुशलता से करते हैं कि उनकी स्फुरणाओं और उन्हें काव्य-नियोजित करने की प्रशंसा करनी पड़ती है। श्यामा-श्याम की श्रृंगार-क्रीड़ा को युद्ध के रूपक से निरूपित करते हुए उन्होंने एक पद में वर्म, चतुरंगी सेना, दुन्दुभी, ध्वजा-पताका, चमर, तोवर, शक्ति, शूल, घूघी, टोपा, कवची इत्यादि युद्ध—सामग्री को जुटा दिया है। इस प्रकार के पदों में कवि को ओज गुण भरने में भी पर्याप्त सफलता मिली है—

दसन शक्ति नख शूलन वरषति अधर कपोल विदारे।
घूँघट घूघी मुकुट टोपा कवची कंचुक भये न्यारे।।

पृष्ठ २१५

और फिर युद्ध का परिणाम इस प्रकार सामने आता है —

जीती नागरि हारे मोहन भुज संकल में घेरे।

⊛ ⊛ ⊛

प्रनय कोप बोली, कितव अपराध किये तैं मेरे।
परम उदार व्यास की स्वामिनी छौंड़ि दिये करि चेरे।।

(वहीं)

कुछ अन्य अलंकारों का दिग्दर्शन इस प्रकार है :-

व्यतिरेक – (उपमान से उपमेय की विलक्षणता)

देखत नैन सिरात गात सब नागरता की खानि।
कोटि चन्द्रमनि मन्द करत मोहन मुख मृदु मुसकानि।।
खंजन मीन मृगज कञ्जनि मन हरति चितै नैंनानि।
कोटि काम कोदंडनि खंडित भ्रू-भंगनि की नीवानि।।

⊛ ⊛ ⊛

बाहु विलोकत उपजी सकुच मृणाल भुजंग लतानि।
दशननि देखि दुरी दामिनि दास्यौ उर अति अकुलानि।।

पृष्ठ १२२

प्रतीप – (उपमानोपमेय भाव का विपर्यय)

सन्तत शरद बसन्त बेलि द्रुम झूलत फूलत घात।
नन्दनन्दन वृषभानु नन्दिनी मानहुँ मिलि मुसकात।।

⊛ ⊛ ⊛

किंशुक नवल नवीन माधुरी विगसत हित उरझात।
मानहुँ अबीर गुलाल भरे तन दम्पति रति अकुलात।।

पृष्ठ २१

यहाँ प्रतीप और उत्प्रेक्षा का अंगांगिभाव संकर है।

रूपकातिशयोक्ति – (उपमान द्वारा उपमेय का आत्मसातकरण)

चन्द्र बिम्ब पर वारिज फूले।
तापर फनि के शिर पर मनिगन तर मधुकर मधुमद मिलि झूले।।
तहाँ मीन कच्छप शुक खेलत वंशीहि देखि न भये विकूले।
विद्रुम दास्यौ में पिक बोलत, केसरि नख पद नारि गरूले।।

पृष्ठ १३२

आवति सखि चन्दा साथ अँध्यारी।
घन दामिनी चकोर चातिक मिलि मोरति राका प्यारी।।
गज मराल केहरी कदली सर बक चकवा शुक सारी।
खञ्जन मीन मकर कच्छप मृग मधुप भुजंगिनि कारी।।

पृष्ठ १४३

उत्प्रेक्षा – (उपमेय की उपमान के रूप में सम्भावना)

देखो माई शोभा नागरि नट की।
मानौं चपल दामिनी जामिनि मेह सनेहनि अटकी।।

⊛ ⊛ ⊛

परिरम्भन चुंबन करि करधरि अधर सुधामधु गटकी।
मनौं चकोर मिथुन मधु पीवत बन गति विधु संकट की।।

पृष्ठ १४४

इनके अतिरिक्त व्यास वाणी में बिनोक्ति, अपह्नुति, दीपक, स्वभावोक्ति आदि अलंकार भी कहीं-कहीं दिखाई देते हैं। शब्दालंकारों में अनुप्रास के विभिन्न भेदों के अनेक प्रयोग सुलभ हैं। जबकि अन्य शब्दालंकार विरल ही हैं। यमक का एक उदाहरण देखिए –

जाति अहिरी आहि कुंवर संग सुघर अहिरी गावती।

पृष्ठ २५२

व्यास वाणी की विस्तृत समीक्षा के लिए एक स्वतन्त्र और व्यापक अध्ययन अपेक्षित है। यहाँ केवल उस पर विहंगम दृष्टिपात मात्र किया गया है।

– स्वामी हितदास
'रसिक पद रेणु'

पदानुक्रमणिका (पूर्वार्द्ध)

●

पदानुक्रमणिका (उत्तरार्द्ध)

(ख)

(ग)

(ह)

रसिक अनन्य श्री हरिराम व्यास

श्री व्यास वाणी (पूर्वार्द्ध)

साखी

श्रीराधावल्लभ व्यास के, इष्ट मित्र गुरुदेव।
श्री हरिवंश प्रगट कियौ, कुंज महल रस भेव।। १ ।।

व्यास आस हरिवंश की, तिनहीं कौ बड़भाग।
वृंदावन की कुंज में, सदा रहत अनुराग।। २ ।।

(श्री) राधावल्लभ श्रुति सुनौं, सुमिरौं कहौं सु टेर।
(श्री) राधावल्लभ व्यासकैं, एक गाँठ सत-फेर।। ३ ।।

(श्री) राधावल्लभ ध्याइकैं, और ध्याइयै कौंन।
व्यासहि देत बनै नहीं, बरी-बरी प्रति लौंन।। ४ ।।

(श्री) राधावल्लभ परम धन, व्यासहि फबि गई लूट।
खरचत हूँ निघटै नहीं, भरे भँडार अटूट।। ५ ।।

(श्री) राधावल्लभ मूल अरु, और फूल दल डार।
व्यास इनहिं तैं होत हैं, अंस कला अवतार।। ६ ।।

व्यास न व्यापक देखियै, निर्गुन परै न जानि।
तब भक्तनि हित औतरे, (श्री) राधावल्लभ आनि।। ७ ।।

व्यास भक्तिकौ फल लह्यौ, (श्री) वृंदावनकी धूरि।
हित हरिवंश प्रताप तें, पाई जीवनि-मूरि।। ८ ।।

हित हरिवंश कृपा बिना, निमिष नहीं कहुँ ठौर।
व्यासदास की स्वामिनी, प्रगटी सब सिरमौर।। ९ ।।

स्वामिनि प्रगटी सुख भयौ, सुर पुहुपनि वरषाइ।
हित हरिवंश प्रताप तें, मिले निसान बजाइ।। १० ।।

मोह माया के फंद बहु, व्यासहि लीनौं घेरि।
हित हरिवंश कृपा करी, लीन्हौं मोकौं टेरि।। ११ ।।

धर्म मिट्यौ अब कृपा करि, दई भजन रसरीति।
रसिक कुँवर दोउ लाड़िले, व्यासहि बाढ़ी प्रीति।।१२।।

व्यासहि अब जिनि जानियौ, लोक वेद कौ दास।
राधावल्लभ उर बसे, औरनि तें जु उदास।।१३।।

व्यासहि बाँमन जिनि गनौं, हरिभक्तन कौ दास।
(श्री) राधावल्लभ कारनैं, सह्यौ जगत उपहास।।१४।।

व्यास विकाने स्याम घर, रसिकन कीनौं मोल।
जरी जेवरी[1] ह्वै रहै, काम न आवै झोल[2]।।१५।।

मो मन अटक्यौ स्यामसौं, गड़्यौ रूपमें जाइ।
चहलैं[3] परि निकसै नहीं, मनौं दूबरी गाइ।।१६।।

व्यास जु मूरति स्यामकी, नख-सिख रही समाइ।
ज्यौं मैंहदी के पातमें, लाली लखी न जाइ।।१७।।

रे भैया हो व्यास कौं, जिन कोऊ पछिताइ।
हरिसौं हेत न छूटिहै, जित बछरा तित गाइ।।१८।।

उपदेस्यौ रसिकन प्रथम, तब पाये (श्री) हरिवंश।
जब हरिवंश कृपा करी, मिटे व्यास के संश।।१९।।

रसिक कहैं सोई भली, बुरी न मानौं लेस।
पद-रज लै सिर पर धरौं, यह व्यासै उपदेस।।२०।।

नैंन न मूँदे ध्यानकौं, किये न अंगनि-न्यास।
नाँचि गाइ रासहिं मिले, बसि वृंदावन व्यास।।२१।।

काहू के बल भजनकौ, काहू के आचार।
व्यास भरोसे कुँवरि के, सोवत पाँव पसार।।२२।।

हरि हीरा गुरु जौहरी, व्यासहि दियौ बताइ।
तन मन आनँद सुख मिलै, नाम लेत दुख जाइ।।२३।।

---

१. जली हुई रस्सी २. राख ३. दलदल

आदि अंत अरु मध्य में, यह रसिकनि की रीति।
संत सबै गुरुदेव हैं, व्यासहि यह परतीति।।२४।।

स्वान प्रसादहि छ्वै गयौ, कौआ गयौ विटारि।
दोऊ पावन व्यासकैं, कहै भागौत विचारि।।२५।।

कोटि-कोटि एकादसी, महा प्रसादकौ अंश।
व्यासहि यह परतीति है, जिनके गुरु हरिवंश।।२६।।

व्यासै बहुत कृपा करी, दीनी भक्ति अनन्य।
कुल-कृत सब साँचौ भयौ, जहाँ भयौ उतपन्य।।२७।।

मेरे मन आधार प्रभु, श्रीवृंदावन चंद।
नितप्रति यह सुमिरत रहौं, व्यासहि मन आनंद।।२८।।

(श्री) वृंदावन की माधुरी, रसिकनि की घर-बात।
चारु चरन अंकित सदा, निरखि व्यास बलिजात।।२९।।

वृंदावनकी लता द्रुम, सघन फूल अरु पात।
विहरति राधा लाड़िली, निरखि व्यास बलिजात।।३०।।

व्यास राधिका-रवन बिनु, कहूँ न पायौ सुक्ख।
डारनि-डारनि मैं फिर्‌यौ, पातनि-पातनि दुक्ख।।३१।।

कोटि ब्रह्म ऐश्वर्यता, वैभवता की वारि।
व्यासदासकी कुँवरिकौं, अब को सकै निहारि।।३२।।

व्यास बसेरौ कुंजमें, वंसीवट की छाँह।
हरि भगतन कौ आसरौ, राधावर की वाँह।।३३।।

खरौ- खरौ सब लेत हैं, परखि पारखू सार।
खोटे व्यास अनन्य कौ, गाहक नंदकुमार।।३४।।

व्यास बड़ाई और की, मेरै मन धिक्कार।
रसिकनि की गारी भली, यह मेरौ सिंगार।।३५।।

वृंदावन कौ वास करि, छाँड़ि जगतकी आस।
व्यास सु रसिकन हिलमिलै, ह्वै नव जनम प्रकास।।३६।।

व्यास सु रसिकन की रहनि, बहुत कठिन है वीर।
मन आनंद घटै न छिन, सहैं जगतकी पीर।।३७।।

व्यास रसिक तासौं कहैं, काटै माया-फंद।
हरिजन सौं हिलमिल रहै, कबहुँन व्यापत द्वंद।।३८।।

व्यास कठिन कलिकाल है, नाम रूप अवगाहि।
रसिकन सैं तजि अंतरौ, नर तन हीरा पाहि।।३९।।

व्यास रसिकजन ते बड़े, व्रज तजि अनत न जाहिं।
वृंदावन के स्वपच लौं, जूँठनि माँगैं खाँहि।।४०।।

व्यास बड़ाई लोक की, कूकर की पहिचानि।
प्यार कियैं मुख चाटही, वैर कियैं तनु हानि।।४१।।

मुहरैं मेवा अनत के, मिथ्या भोग विलास।
वृंदावन के स्वपच की, जूँठनि खैयै व्यास।।४२।।

वृंदावन कौ चूहरौ, बेचि खातु है सूप।
ताकी सरवरि ना करै, आन गाँऊँ कौ भूप।।४३।।

व्यास मिठाई विप्र की, तामें लागै आगि।
वृंदावन के स्वपच की, जूठनि खैयै मागि।।४४।।

वृंदावन के स्वपच कौ, रहियै सेवक होइ।
तासौं भेद न कीजियै, पीजै पद-रज धोइ।।४५।।

व्यास कुलीननि कोटि मिलि, पंडित लाख पचीस।
स्वपच भक्तकी पानहीं, तुलै न तिनके सीस।।४६।।

व्यास स्वपच बहु तरिगये, एक नाम लवलीन।
चढ़े नाव अभिमान की, बूड़े बहुत कुलीन।।४७।।

व्यास बड़ाई छाँड़िकैं, हरि चरनन चित जोरि।
एक भक्त रैदास पर, वारौं बाँमन कोरि।।४८।।

नामा के कर पै पियौ, खाई व्रज की छाक।
व्यास कपट हरि ना मिलै, नीरस अपरस पाक।।४९।।

व्यास जाति तजि भक्ति कर, कहत भागवत टेरि।
जातिहि भक्तिहि ना बनैं, ज्यौं केरा ढिंग बेरि।।५०।।

सब तजि भजियै स्याम कौ, श्रुति स्मृतिकौ सार।
व्यास प्रगट भागौतमें, भृगु जु कियौ निरधार।।५१।।

व्यास न कथनी कामकी, करनी है इक सार।
भक्ति बिना पंडित वृथा, ज्यौं खर चन्दन-भार।।५२।।

व्यास विदित चतुराइयनि, उपदेसै संसार।
करनी नाव चढ़े विना, क्यौं करि पावै पार।।५३।।

व्यास विवेकी सन्त जन, कहनि रहनिमें एक।
कहनि कहैं करनी करैं, ज्यौं पाथर की रेक।।५४।।

व्यास सदा हरिजन बड़े, जिनकौ हृदय गँभीर।
अपनौं सुख चाहत नहीं, हरत पराई पीर।।५५।।

व्यास बड़े हरिके जना, सदा रहत भरपूर।
खात खवावत घटत नहीं, ज्यौं समुद्र के पूर।।५६।।

व्यास बड़े हरिके जना, जिनके उर कछु नाहिं।
त्रिभुवन पति जिनके सुवस, और कहौ किहिं माहिं।।५७।।

व्यास बड़े हरिके जना, जिनकौ हरि सो मित्त।
निसिदिन ते माते रहैं, सदा प्रफुल्लित चित्त।।५८।।

व्यास बड़े हरिके जना, जिनके हरि आधार।
निसिदिन हरिके भजनमें, घटत न कबहूँ प्यार।।५९।।

व्यास बड़े हरिके जना, हरिकौ अरप्यौ आप।
निसिदिन अति उल्लास मन, मुखमें हरि जस जाप।।६०।।

व्यास बड़े हरिके जना, हरिहि नवावत माथ।
जिनके हियमें वसत हैं, तीनलोक के नाथ।।६१।।

व्यास बड़े हरिके जना, हरि जस में भये लीन।
तन मन वचसा हरि बिना, और कछू नहिं कीन।।६२।।

व्यास भक्त चंदन जहाँ, सो वन सकल सुगंध।
निकट बाँसकुल वहिर्मुख, तिनमें होइ न गंध।।६३।।

हौं वलिहारी भक्तकी, कस्यौ बहुत उपकार।
हरि सो धन हिरदै धस्यौ, छुटा दियौ संसार।।६४।।

हरिजन आवत देखिकैं, फूले अंग न माइ।
तन मनलै आगे मिलै, हिलिमिलि हरिगुन गाइ।।६५।।

जिनके मुख गोपालजी, पावन हरिगुन गीत।
तिनकौ जुग-जुग जानियौ, व्यासदास के मीत।।६६।।

व्यास विवेकी भक्त सौं, दृढ़ करि कीजै प्रीति।
अविवेकी कौ संग तजि, यहै भक्तिकी रीति।।६७।।

पूत मूत कौ एक मग, भक्त भयौ सो पूत।
व्यास वहिर्मुख जो भयौ, सो सुत मूत कपूत।।६८।।

श्रीहरि भक्ति न जानहीं, मायाही सौं हेत।
जीवत है हैं पातकी, मरिकैं है हैं प्रेत।।६९।।

व्यास एकही बात गही, राधावल्लभ धाम।
और अनेक सुभक्त सौं, मेरौ नाहिन काम।।७०।।

राधावल्लभ मधुर रस, जाकैं, हिय नहिं व्यास।
मानुष देही रतनसी, भली विगारी तास।।७१।।

कर्म करैं भव तरन कौं, उलटे पर भव माँहि।
पैंड़ौ व्यास अनन्य कौ, जौ पै जान्यौ नाँहि।।७२।।

वेद पुरानन हूँ पढ़े, करैं सुकर्म सँजोइ।
व्यास जु जन्म अनन्य बिनु, एकौ गति नहिं होइ।।७३।।

आन धर्म में मिलि करैं, श्रीहरि भजन समान।
जैसैं रतन अमोल कर, जानत नाहिं अजान।।७४।।

जम की मार बुरी अहै, छुटै न और उपाइ।
दृढ़ करिकै हरि भक्ति है, तब हरि भक्त सहाइ।।७५।।

देखा देखी भक्ति कौ, व्यास न होइ निबाह।
कुल कन्या की हीसकौं, गनिका करै विवाह।।७६।।

व्यासदास की भक्ति में, नीरस करैं उपाउ।
ज्यौं सिंहनिके चेंटुवनि[1], दाबन कहै बिलाउ[2]।।७७।।

व्यास भाव बिनु भक्ति नहिं, नहीं भक्ति बिनु प्रेम।
कहा झूँठी बातनि कहैं, कसैं कहावै हेम।।७८।।

प्रेम अतनु या जगत में, जानैं विरला कोइ।
व्यास सतनु क्यौं परसि है, पचिहारयौ जग रोइ।।७९।।

भाव भक्ति बिनु चौहँटौ[3], जहाँ भक्ति तहाँ दोइ।
व्यास एकता तब लखै, जबै एक चित होइ।।८०।।

व्यास भक्ति सहगामिनी, टेरैं कहत पुकारि।
लोक लाज तबही गई, बैठी मूँड़ उघारि।।८१।।

साधुन की सेवा कियैं, हरि पावत संतोष।
साधु विमुख जे हरि भजैं, व्यास बढ़ै दिन रोष।।८२।।

सती सूरमा सन्तजन, इन समान नहिं और।
अगम पंथ पै पग धरैं, डिगैं न पावैं ठौर।।८३।।

---

१. बच्चे २. बिल्ला ३. चौराहा

व्यास निरन्तर भजन कर, वा निष्काम सकाम।
हाँसी साँचे क्रोध कर, बटुक बीज हरि नाम।।८४।।

व्यास नाम सम नाम है, नाम समान न कोइ।
नामी तें प्रगट्यौ विदित, तदपि गरूवौ होइ।।८५।।

व्यास भजन करिवौ करौ, भक्तनिसौं करि हेत।
यह मनसौ निस्चैं करि, वृंदावन सौ खेत।।८६।।

नर देही द्वारौ खुल्यौ, हरि पावन की घात।
व्यास फेरि नहिं लगतु है, तरुवर टूट्यौ पात।।८७।।

व्यास विभौ के मीत सब, अंतकाल कोउ नाँहि।
तातें तुम हरिकौं भजौ, हरिहि गहैंगे वाँहि।।८८।।

व्यास विषै वन वढ़ि रह्यौ, नीच संग जल धार।
हरि-कुठार सौं प्रीति करि, कटत न लागै वार।।८९।।

हरि हीरा निरमोल है, निरधन गाहक व्यास।
ऊँचौ फल क्यौं बावनहि, चौंप करत उपहास।।९०।।

व्यास न साधन और सब, हरि सेवा समतूल।
पत्रनि-पत्रनि जल भिदै, सींचत तरुवर मूल।।९१।।

व्यास अहंता ममत तजि, संपति प्रभुकी जानि।
ताही करि गुरु हरि भजहु, भक्तनिकौ सनमानि।।९२।।

व्यास भक्तिकौ वन घनौं, सन्त लगे फल-फूल।
पत्रनि-पत्रनि जल भिद्यौ, तरुवर शाखा मूल।।९३।।

व्यास जु मन चरननि लगै, तनके लगै न काज।
तन मन करि सब तजि भजै, ताहि प्रेम की लाज।।९४।।

व्यास दीनता के सुखहि, कह जानैं जग मंद।
दीन भये तें मिलत हैं, दीनवंधु सुखकंद।।९५।।

व्यास न कबहूँ उपजि है, विषयिनि कैं अनुराग।
साधु-चरन रज पान बिनु, मिटै न उरकौ दाग[1]।।९६।।

व्यास भागवत जो सुनैं, जाकैं तन मन स्याम।
वक्ता सोइ जानिये, जाकैं लोभ न काम।।९७।।

व्यास रसिक सब चलि बसे, नीरस रहे कु-वंस।
वग ठगकी संगति भई, परिहरि गये जु हंस।।९८।।

व्यास भक्त घर-घर फिरै, हरि प्रभुकी तजि सर्म।
पति खोवै परघर गयैं, ज्यौं पातशाह की हर्म[2]।।९९।।

तजिकैं रसिक अनन्यता, विधि निषेध लये घेरि।
व्यासदास के भवन तें, भक्ति गई दै टेरि।।१००।।

रसिक अनन्य कहाइकैं, पूजैं ग्रह गन्नेस।
व्यास क्यौं न तिनके सदन, जम गन करैं प्रवेस।।१०१।।

व्यास जहाँ प्रभुकौ भजन, होते रास विलास।
ते कामिनि वस ह्वै गये, ऊत[3] पितर के दास।।१०२।।

खाइ सोइ सुख मानहीं, कामिनि उर लपटाइ।
व्यासदास अचिरज कहा, ते जमलोकै जाइ।।१०३।।

नारी नागिनि बाघनी, ना कीजै विश्वास।
जो वाकी संगति करै, अन्त जु होइ विनास।।१०४।।

व्यास पराई कामिनी, कारी नागिनि जानि।
सूँघतही मरि जाहुगे, गरुड़मंत्र[4] नहिं मानि।।१०५।।

व्यास कनक अरु कामिनी, तजियै भजियै दूरि।
हरिसौं अंतर पारिहैं, मुख दै जैहैं धूरि।।१०६।।

व्यास कनक अरु कामिनी, ये लाँबी तरवारि।
चले हुते हरि भजनकौं, बीचहि लीनैं मारि।।१०७।।

---

१. दाग २. बेगम ३. भूत-प्रेत ४. सर्व विष उतारने वाला मंत्र

व्यास पराई कामिनी, लहसुन की-सी वानि।
भीतर खाई चौरिकैं, बाहर प्रगटी आनि।।१०८।।

व्यास वचन मीठे कहैं, खरबूजा की भाँति।
ऊपर देखौ एकसो, भीतर तीनौं पाँति।।१०९।।

मुँह मीठी बातैं कहैं, हिरदै निपट कठोर।
व्यास कहौ क्यौं पाइहौ, नागर नंदकिशोर।।११०।।

जुगलचरन हिय ना धरै, मिलै न संतनि दौरि।
व्यासदास ते जगत में, परे पराई पौरि।।१११।।

खाइ सोइ सुख मानिकै, हरि चरननि चितलाइ।
व्यासदास तेई बड़े, पुर वैकुंठहिं जाइ।।११२।।

जौ हरि चरननि चित रहै, तन जु कहौं किनि जाहु।
तनु चरननि मन अनतही, ताहि न व्यास पत्याहु।।११३।।

झूँठ मसकरी मन लगै, हरि भजिवे कौं झेर[1]।
व्यासदास की पौरि तें, भक्ति भजी दै टेरि।।११४।।

मोहन मुखिया जगतमें, सो कहुँ पैयति नाहि।
काम प्रेम के कहन कौं, रसना उठति कुकाहि[2]।।११५।।

व्यास न तासु प्रीति करि, जाहि आपनी पीर।
पर पीरक सौं प्रीति करु, दुख सहि मेटै भीर।।११६।।

कनक रतन भूषन वसन, मिथ्या अनत विलास।
बेटी हाट सिंगारि कैं, वसि वृंदावन व्यास।।११७।।

व्यास भक्तकी कुबति गहि, गुरू गोविन्दहि मारि।
कै या ब्रतहि निवाहियै, कै माला तिलक उतारि।।११८।।

व्यास डगर में परिरहौ, सुनि साकत कौ गाँव।
मनसा वाचा करमना, पाप महा जौ जाँव।।११९।।

---

१. विलम्ब २. व्याकुल

व्यास बाघ भुज भैंटियै, सहियै जियकी हानि।
साकत भगत न भैंटियै, पूरवली[1] पहिचानि।।१२०।।

साकत सगौ न भैंटियै, व्यास सु कंठ लगाइ।
परमारथ लै जायगौ, रहै पाप लपटाइ।।१२१।।

व्यास विगूचे ते गये, साकत राँध्यौ खाइ।
जीवत विष्टा स्वान की, मरै नरक लै जाइ।।१२२।।

साकत सगौ न भैंटियै, इन्द्र कुवेर समान।
सुंदर गनिका गुनभरी, परसत तनुकी हान।।१२३।।

साकत भैया शत्रु सम, वेगहि तजियै व्यास।
जौ वाकी संगति करै, करिहै नरक निवास।।१२४।।

नाम जपत कन्या भली, साकत भलौ न पूत।
छेरीके गल गलथना[2], जामें दूध न मूत।।१२५।।

साकत घरनी छाँड़ियै, वैश्या करियै नारि।
हरिदासी जो ह्वै रहै, कुलहि न आवै गारि।।१२६।।

साकत बाँभन मसकरा[3], महा पतित जगमांझ।
पिता नपुंसक किन भयौ, माता भई न बाँझ।।१२७।।

साकत बाँभन जिन मिलौ, वैष्णव मिलु चंडाल।
जाहि मिलै सुख पाइयै, मनौं मिले गोपाल।।१२८।।

साकत सूकर कूकरा, इनकी मति है एक।
कोटि जतन परबोधियै, तऊ न छाँड़ें टेक।।१२९।।

व्यास वधायैं श्राद्धमें, पतित नृपति ग्रह दान।
व्यास विवेकी भक्तजन, तजत विमुखकौ धान।।१३०।।

व्यास आस जौलगि हियैं, जग-गुरु जोगी दास।
आस विहूँनौं जगतमें, जोगी गुरु जग-दास।।१३१।।

---

१. पहिले की २. बकरी के गले में लटकने वाली थैली ३. अपनी हँसी कराने वाला

व्यास आस कै माँगिवौ, हरिहू हरुवौ होइ।
वामन है बलिकैं गये, जानत हैं सब लोइ[1]।।१३२।।

व्यास आस इत जगतकी, उत चाहत हिय स्याम।
निलज अधम सकुचत नहीं, चाहत है अभिराम।।१३३।।

करै वरत एकादशी, महा प्रसाद तें दूरि।
बाँधे जमपुर जाँइगे, मुख में परि है धूरि।।१३४।।

अपनैं-अपनैं मत लगे, वादि मचावत सोर।
ज्यौं-त्यौं सवकौ सेवनें, एकै नंदकिसोर।।१३५।।

व्यास जगत अभिमानसौं, नख सिख उमग्यौ जाइ।
ते नर वृष के भानुलौं, आपुहिं धूरि उड़ाइ।।१३६।।

व्यास भक्तकैं जाइयै, देखत गुनकौ हेत।
सूरा है तो उठि मिलै, नातर हारै खेत[2]।।१३७।।

व्यास भलौ अवसर मिलौ, यह तन गुरु मुख पाइ।
फिरि पाछैं पछिताइगौ, चौरासी में जाइ।।१३८।।

व्यास वसैं वनखण्डमें, करैं निरंतर ध्यान।
तिनकौं हरि कैसैं मिलैं, भक्तनसौं अभिमान।।१३९।।

वैर करै हरिभक्तसौं, मित्र करै संसार।
भक्त कहावै आपते, मिटै न जमकौ द्वार।।१४०।।

व्यासदास से पतित सौं, भृगुकौ पलटौ लेहु।
उनि उर दीनौं एक पग, तुम उर दोनौं देहु।।१४१।।

व्यास जगतमें रसिक जन, जैसैं द्रुम पर चंद।
सतचित अरु आनंद मै, भेद न जानत मंद।।१४२।।

व्यास चंद आकास में, जलमें आभामंद।
जलज मंद यह कहत हैं, जो हम सो यह चंद।।१४३।।

---
१. लोग २. रण क्षेत्र

महाप्रलै अबही भई, वृंदावन करि वास।
पर्‌यौ रहै निहचिंत मन, छाँड़ि जगतकी आस।।१४४।।
व्यास न सुख संसार में, जो सिर छत्र फिरात।
रैन घना धन देखियै, भोर नहीं ठहरात।।१४५।।
व्यास विझूका[1] खेतकौ, दुःख न काहू देइ।
जो निसंक ह्वै जाइ सो, वस्तु घनेरी लेइ।।१४६।।

१ पक्षियों को डराने के लिये खेत में बनाया हुआ कृत्रिम मनुष्य

।। श्रीहित राधावल्लभो जयति।।
।। श्रीहित हरिवंशचन्द्रो जयति।।

राग सारंग —

पद

वन्दे श्रीशुक पद पङ्कजन[1]।
सत्त चित्त आनंद की निधि गई हिय की जरन।।
नित्य वृंदाविपिन संतत युगल मम आभरन।
व्यास मधुपहि दियौ सरबस प्रेम सौरभ सरन।।१।।

श्री राधावल्लभ नमो-नमो।
कुंजनि कुंज पुंज रतिरस में रूपरासि जहाँ नमो-नमो।।
सुखसागर गुन नागर रसनिधि रस सुधंग रंग नमो-नमो।
स्याम सरीर कमल दल लोचन दुख मोचन हरि नमो-नमो।।
वृंदाविपनि चंद नँद नंदन, आनँद कंद सुख नमो-नमो।
सर्वोपरि सर्वोपम निसि दिन व्यासदास प्रभु नमो-नमो।।२।।

राग गौरी —

नमो-नमो जै श्रीहरिवंश।
रसिक अनन्य वेनुकुल मंडन लीला मानसरोवर हंस।।
नमो जयति श्रीवृंदावन सहज माधुरी रास विलास प्रसंस।
आगम निगम अगोचर (श्री) राधे चरन सरोज व्यास अवतंस।।३।।

राग सारंग —

सदा वृंदावन सबकी आदि।
रसनिधि सुखनिधि जहाँ विराजत नित्य अनंत अनादि।।
गौरस्याम को शरन हरन दुख कंद मूल मुंजादि।
शुक, पिक, केकी, कोक, कुरंग, कपोत मृगज सनकादि।।

---

१. पं० ब्रजवल्लभ जी, गोपाल मन्दिर, कोलारस, जिला शिवपुरी म०प्र० के पास सुरक्षित बि०सं०१८७६ की प्रति में यही पाठ है। अनेक प्रतियों में इसका पाठ 'वन्दे श्री सुकुल पद पंकजन' छपा हुआ है।

कीट, पतंग, विहंग, सिंह, कपि, तहाँ सोहत जनकादि।
तरु, तृन, गुल्म, कल्पतरु, कामधेनु, गौ वृष धर्मादि।।
मोहन की मनसा तें प्रगटित अंशकला कपिलादि।
गोपिन कौ नित नेम प्रेम पदपंकज जल कमलादि।।
राधा दृष्टि सृष्टि सुन्दरि की वरनत जयदेवादि।
मथुरा मंडल के जादवकुल अति अखंड देवादि।।
द्वादसवनमें तिलु-तिलु मुक्ती अरु तीरथ गंगादि।
कृष्ण जन्म अचला न चलै जो होहि प्रलै मन्वादि।।
गिरि गहवर वीथी रति रनमें कालिंदी सलितादि।
सहज माधुरी मोद विनोद सुधा सागर ललितादि।।
सबै संत सेवत निरवैरनि लखि माया नासादि।
शेष अशेष पार नहिं पावत गावत शुक व्यासादि।।४।।

कहतहूँ बनै न व्रजकी रीति।
यह सुख शुक सनकादिक माँगत माया मोहहि जीति।।
सब गोपाल उपासिक तन मन वृंदावन सौं प्रीति।
एक गोविंद चंद लगि छाँड़ी लोक वेदकी भीति।।
सहज सनेह देहगति विसरी वाढ़ी सहज समीति।
संम्पति सदा रहत विपदा मँहि मोहन की परतीति।।
अगनित प्रलय पयोधि बढ़तहू मिटी न घोष वसीति[1]।
व्यास विहारहि विहरत वन में अवतार गये सब बीति।।५।

वृंदावन की सोभा देखत मेरे नैन सिरात।
कुंजनि कुंज पुंज सुख वरषत हरषत सबके गात।।
राधा मोहन के निजु मन्दिर महा प्रलय नहिं जात।
ब्रह्मा ते उपज्यौ न, अखंडित कबहूँ नाहिं नसात।।
फनिपर रवि तर नहिं विराट महँ नहिं संध्या नहिं प्रात।
माया काल रहित नित नूतन सदा फूल फल पात।।

१ गौ-पालकों की बस्ती

निर्गुन सगुन ब्रह्मतें न्यारौ विहरत सदा सुहात।
व्यास विलास रास अद्‌भुत गति निगम अगोचर बात।।६।।

वृंदावन की बलाइ लैऊँ हौं।
देखत जाहि राधिका मोहन सुख पावत रौं-रौं।।
सीतल छाँह सुवास कुसुम फल जमुना जल रस सौं।
विटप वेलि प्रति केलि प्रगट विटप वधू प्रताप नदौं।।
शुक, पिक, अलि, केकि मराल खग मृग मन माँह बँधौं।
व्रज वासिन की पद रज तन मन सुख सागर हि सचौं।।
छवि निधि व्यासहि फवि गई भक्ति क्यौं छिन छाँड़ि सकौं।।७।।

छबीली वृंदावन की धरनि।
सदा हरित सुख भरित मोहनी मोहन परसत करनि।।
धवल धेनु छवि नवल ग्वाल फवि सोभित द्रुम की जरनि।
रंग भरी अँग अंग विराजति पल्लव लव-लव धरनि।।
चंद्रक[1] चारु सिंगार केकि नट नाचत मिलि नागरनि।
गुन अगाध राधा हरि गाइ बजावत सुख सागरनि।।
कुंज-कुंज कमनीय कुसुम सयनीय केलि आचरनि।
कुच गहि चुंबन करि दुख मेटि, भेटि भुज आँकौ भरनि।।
पावक पवन चंद तारा जहँ आभासत नहिं तरनि[2]।
व्यास स्वामिनी कौ बल-वैभव कहि न सकत कवि डरनि।।८।।

प्यारी श्रीवृंदावन की रैनु।
जाहि निरख मोहन सुख पावत हरषि बजावत वैनु।।
जहां तहां राधा चरननिं के अंक विराजत अैनु।
राजभोग संयोग जहाँ तहाँ दंपति के रति सैनु।।
रसिक अनन्यनि को मुख मंडन दुख खंडन सुख चैनु।
मधु मकरंद चंद रस वरषत गो धन को निज फैनु।।
कुंजनि पुंजनिकी छबि निरखत रति भूली पति मैनु।
व्यास दास को कुँवर किशोरी वाँयौ दाहिनौ नैनु।।९।।

---

१. मोर पंख २. सूर्य

प्यारे श्रीवृंदावन के रूख।
जिन तर राधा मोहन विहरत देखत भागत भूख।।
माया काल न व्यापै जिन तर सींचै प्रेम पियूष।
कोटि गाय बाँभन हत शाखा तोरत हरिहि विदूष[1]।।
रसिकनि पारजात सूझत है बिमुखनि ढाँक पिलूख।
जौ भजियै तौ तजियै पान मिठाई मेवा ऊख।।
जिनके रस वस है गोपिन तजि सुख संपति गृह तूष[2]।
मनि कंचनमय कुंज विराजत, रंध्रनि चंद्र मयूष।।
जिहि रस भोजन तज्यौ परीक्षित उपजौ शुकहिं अतूष[3]।
व्यास पपीहा बन घन सेयौ दुख सलिता सर सूष।।१०।।

छबीली श्री वृंदावन की बेलि।
आनँद कंद मूल सुखमय फल फूल सुधा मधु झेलि।
राधारवन भवन मनमोहन निरख बढ़ावति केलि।।
मलयज, मृगज, कपूर, धूरि, कुंकुम, सौरभ रस झेलि।
तहाँ विराजत हंस हंसिनी अंस बाहु पर मेलि।।
अलि कुल नैन चषक रस पीवत कोटि मुक्ति पग पेलि।
व्यास स्वामिनी पियहिं स्ववश करि विरमति नाहिन खेल।। ११।।

विराजै श्री वृंदावन की बेलि।
फूलनि द्रुम भरि ताहि भेंटि, दुख मेटि अंस भुज मेलि।।
अरूझि नाह की बाँहनि कुंचित केस सुदेस नवेलि।
कल फल पीन पयोधर पियके हिय दुख सागर झेलि।।
किसलय बदन विहसि चुंबन करि पुलकि-पुलकि करि केलि।
आनँद नीर नैन मधु वरषत हरषत कोटिक खेलि।।
पट भूषन नव कुसुम पत्र छवि रवि पावस अवहेलि।
व्यास राधिका-रवन भवन कौ निरखत है पग पेलि।।१२।।

१. दुख २. तिनके के समान ३. अतृप्ति

श्री वृंदावन प्रगट सदा सुख चैन।
कुंजनि कुंज पुंज छबि बरषत आनँद कहत बनै न।।
कुसुमित नमित विटप नव शाखा, सौरभ अति रस ऐंन।
मधुप, मराल, केकि, शुक, पिक धुनि सुनि व्याकुल मन मैन।।
स्यामा-स्याम फिरत घन वीथिन होत अचानक ठैन।
पुलकित गात सम्हारन भुजमें भैंटत बात कहैन।।
अति उदार सुकुमारि नागरी रोम रोम सुख दैन।
हाव भाव अँग-अंग विलोकत धन्य व्यास के नैन।।१३।।

मैदा मिश्री मुहरें मेरैं (श्री) वृंदावन की धूरि।
जहाँ राधारानी मोहन राजा राज रह्यौ भरि पूरि।।
कनक कलस करुवा महमूदी खासा व्रज-कमरनि की चूरि।
व्यासहिं गुरु हरिवंश बताई अपनी जीवनि मूरि।।१४।।

रुचित मोहि वृंदावन कौ साग।
कंद मूल, फल, फूल, जीविका मैं पाई बड़ भाग।।
घृत, मधु, मिश्री, मेवा, मैदा, मेरे भावै छाग[1]।
एक गाय पै वारौं कोटिक ऐरावति से नाग[2]।।
जमुना जल पर वारौं सोमपान से कोटिक जाग।
श्रीराधा पति पर वारौं कोटि रमा के सुभग सुहाग।।
साँची माँग किसोरी के सिर मोहन के सिर पाग।
बंसीवट पर वारौं कोटिक देव कल्पतरु बाग।।
गोपिन की प्रीतिहि नहिं पूजति शुक नारद अनुराग।
कुंज केलि मीठी है विरह भक्ति सीठी ज्यौं आग।।
व्यास विलास रास रस पीवत मिटैं हृदय के दाग।।१५।।

---

१. बकरी का दूध २. हाथी

मीठी वृंदावन की सेवा।
स्यामास्यामहि नीकी लागत ज्यौं बालकहि कलेवा।।
बेलि हमारी कुल देवी सब विटप गुल्म सब देवा।
और धरम अकरम से लागत बिनु माला ज्यौं लगत जनेवा।।
कुंजनि-कुंजनि कुसुम पुंज रचि सैन ऐंन मधु मेवा।
मनि कंचन भाजन भरि सौंधे अंग धूप कौ खेवा।।
विहरत सदा दुलहिनी-दूलहु अंग अंग मधु रस पेवा[१]।
व्यास रास आकास फिरत दोऊ मानहु प्रेम परेवा[२]।।१६।।

मोसो पतित न अनत समाइ।
याही तें मैं वृंदावन कौ सरन गह्यौ है आइ।।
बहुतनि सौं मैं हित करि देख्यौ अनत न कहूँ खटाइ।
कपट छाँड़ि मैं भक्ति कराई दारा सुतनि नचाइ।।
भक्त पुजाये लीला करि सबही की जूँठनि खाइ।
ता ऊपर विरचे सब मोसौं कोटि कलंक लगाइ।।
अजहूँ दाँत पन्हैंया गहि तिनहू के चाटौं पाइ।
तऊ न तिन्हैं परतीति व्यास की सत छाँड़ै पति जाइ।।१७।।

कहाँ हौं वृंदावन तजि जाउँ।
मोसे नीच पोच[३] कौं अनत न हरि बिनु और न ठाउँ।।
सुख पुंजनि कुंजनि के देखत विषय विषै क्यौं पाउँ।
एक आगि को डाढ्यौ[४] दूजी आगि माँझ न बुझाउँ।।
एक प्रसन्न न मोपर निसि दिन छिन-छिन सबै कुदाउँ[५]।
राधारवन सरन बिनु अब हौं काके पेट समाउँ।।
भोजन छाजन की चिंता नहिं मरिवेहु न डराउँ।
सिर पर सिंदुर व्यास धर्‌यौ अब है है स्याम सहाउँ।।१८।।

---

१. पेय २. (हंस) पक्षी ३. हीन, निर्बल ४. जला हुआ, ५. विश्वासघाती

मेरे तनसों वृन्दावन सों हरि जिन होहु विछोह।
अरु यह साधु संग जिनि छूटौ व्रज वासिनु सौं छोह।।
देहु कृपाल कृपा करि मोकौं राधा पति सौं मोह।
विषई विषय कनक कामिनि सौं मोहि करौ निरमोह।।
चार चरन रज पारस परस्यौ चाहत हौं मन लोह।
रागादिक वैरनि में व्यासहिं मोहन करहु निलोह।।१९।।

करलै करुआ कुंज सहाइक।
पीलू पैचू सागु सौगरे छाँछि सदा मन भाइक।।
विहरत स्यामास्याम सनेही दीननि के सुखदाइक।
वृंदावन की रैनु धेनु तरु तीर सेइवे लाइक।।
अभिमानीनि सजा दै रोकत व्रजवासी हरि पाइक[1]।
कामकेलि सुखके रखवारे हरषत वरषत साइक।।
मगन सवै आनन्दसिंधु महँ नंदादिक व्रज-नाइक।
व्यास रास भूमिहि नहिं परसत नीरस माया माइक।।२०।।

ऐसेही वसिये व्रज वीथिनि।
साधुन के पनवारे चुनि-चुनि उदर पोषियतु सीथिनि।।
घूरनि में के बीनि चिनगटा रक्षा कीजै सीतनि।
कुंज-कुंज प्रति लता लोटि उड़ि रज लागै अंगीतिनि[2]।।
नित प्रति दरस स्याम स्यामा कौ नित जमुना जल पीतनि।
ऐसैही व्यास होत तन पावन इहि विधि मिलत अतीतिनि[3]।।२१।।

माला हरिमंदिर तें पावन वृंदावन की रैंनु।
भक्त भागवतहूँ तें प्यारी रसिकनि मोहन वैनु।।
महाप्रसाद स्वाद तें मीठौ गाइन कौ पय फैनु।
साधुसंग तें अधिकु जानिवौ ग्वाल मंडली धैनु।।
वर मथुरा वैकुंठलोक तें सुखद निकुंजनि ऐनु।
शुक नारद सनकादिकहू तें दुर्लभ मोहन सैनु।।

१. सेवक २. अंगो पर ३. दुर्लभ तत्व

सुनौ न देखौ भयौ न ह्वै है राधासम रस चैनु।
व्यास वल्लभवपु वेदनि हूँ तें माँग्यौ मोहन मैनु।।२२।।

राग देवगन्धार

श्रीवृंदावन देखत नैन सिरात।
इन मेरे लोभी नैननि में सोभा सिंधु न मात।।
संतत सरद वसंत वेलि द्रुम झूलत फूलत घात।
नंदनँदन वृषभानुनंदिनी मानहुँ मिलि मुसकात।।
ताल[1] तमाल रसाल साल[2] पल-पल चमकत फल पात।
मनहुँ गौरमुख विधुकर रंजित सोभित साँवल गात।।
किंसुक नवल नवीन माधुरी विगसत हित उरझात।
मानहुँ अविर गुलाल भरे तन दंपति रति अकुलात।।
बैठे अलि अरबिंद विंब पर मुख मकरंद चुचात।
मानहुँ स्याम कुच कर गहि अधर सुधा पीवत बलिजात।।
नाचत मोर कोकिला गावत कीर वक सुरति सुहात।
मनहुँ रास रस नाचैं दोऊ विछुरिन जानत प्रात।।
त्रिभुवन के कवि कहि न सकत कछु अद्‌भुत गति की बात।
व्यास बात नहिं मुख कहि आवै ज्यौं गूँगहि गुर खात।।२३।।

मन रति वृंदावन सौ कीजै।
खायौ पीयौ भस्यौ भूँज्यौ अब जीवन कौ फल लीजै।।
काज अकाज जानि सब आपुनौ दाउ सँवारौ दीजै।
देखि धेनु सुनि बैनु रैनु तजि धृक-धृक जग जौ जीजै।।
जमुना तट वंसीवट निकट रहत जु यह तन छीजै।
वरषत स्यामास्याम रास रस व्यास नैन भरि पीजै।।२४।।

---

१. ताड़ का वृक्ष २. एक प्रसिद्ध वृक्ष का नाम

राग धनाश्री

माया काल न रहत वृंदावन रसिकन की रजधानी।
सदा राज ब्रजराज लाडिलौ राधाजू संतत रानी।।
मथुरामंडल देस सुबस गढ़ गोवर्द्धन सुखदानी।
रास भंडार सुभोग रहत अति पावन जमुना पानी।।
वंसीवट छत्र, पुलिन सिंघासन मृदंग अलि पिक बानी।
कटि-काछिनी, टिपारौ बाँधैं मोरन सुधंग ठानी।।
निर्भय राज पंथ चिर वीथिन महल निकुंज रवानी।
प्रतीहार[1] ब्रजवासी रोकत सपनैंहूँ न जात अभिमानी।।
हरिवंशी हरिदासी महलिनि साधु सनातन जानी।
वेगि खबर करि व्यास गुदरवी[2] पिछलीहू पहिचानी।।२५।।

सदा वनको राजा भगवान।
जाकौ अंत अनंत न जानत करि मुखचतुर वखान।।
जो प्रभाव भक्ति रजधानी राधारानी प्रान।
कुंजमहल श्रीवृंदावन धन गोपी रूप निधान।।
प्रेम-प्रजा ब्रजवासी अनुचर ग्वाल ग्वालि संतान।
माइ यसोदा नंद पिता सुखदाता श्रीवृषभान।।
विटप छत्र छाया मृदु राजत सिंघासन सभा सुजान।
मंत्री मदन सहायक संतत लायक विषय प्रधान।।
नटवा मोर और कल कोकिल मधुप सुरन बंधान।
भेरि भारही[3] झरना कलरव मधुर मृदंग निसान।।
राजभोग संयोग सदा गति रास विलास सु-गान।
यह सुख व्यास दास कौं निसिदिन दीनौं कृपा-निधान।।२६।।

यह वृंदावन मेरी सम्पति।
इहलोक परलोक वृंदावन मेरौ पुरुषारथ परमारथ गथु[4] गति।।

१. द्वारपाल २. निवेदन ३. सुरीली आवाज वाला एक पक्षी ४. पूँजी

साधन साधु संतत वृन्दावनु राग रंग गुन गुनी जहाँ अति।
भक्ति भागवत वृंदावन मेरौ मातपिता भैय्या गुरु संमति।।
मंदिर जग मोहन मन कोठो वृंदावन सेवा मेवा निति[१]।
दाता दान मान वृंदावन छिन छूटै न रहै प्रान पति।।
जहाँ निकुंज पुंज सुख विहरत राधा मोहन मोहे काम रति।
तहाँ व्यास वनिता भयौ चाहत चार्‌यौ वेद करत मत आरति।।२७।।

वन परमारथ गथ[२] हरि मेरौ।
अरथ करतु अनरथ मो कहँ मारतु है घरही में घेरौ।।
कियौ अनन्य बीच नीच है आइ फव्यौ रसिकनि कौ टेरौ।
व्यास आस कै स्याम भरोसै दुखके बीज बयैं रस खेरौ।।२८।।

(श्री)वृंदावन की सोभा देखत विरले साधु सिरात।
विटप वेलि मिलि केलि करत रस रंग अंग लपटात।।
भुज-साखनि परिरंभन चुंवन देत परसि मुख पात।
कुच-फल सदय हृदय पर राजत फूल दसन मुसकात।।
कोटर[३] श्रवन सुनत मृदु कुंजनि किसलय नैन चुचात।
नित्य विहारहिं खग सुर गाइनि गावत सुरभि सुवात।।
इहि रस जिनके तन मन राचे तिनहि न और सुहात।
व्यास विलास सिंधु लोभिन के उर सरवर न समात।।२९।।

देखौ (श्री)वृंदाविपिन प्रभाइ।
सब तीरथ धामनि फिर आवत देखत उपजत भाइ।।
श्रीजमुना तट लता भवन रज छिन-छिन बाढ़त चाइ।
मगन होत जब सुधि बुधि बिसरत कहूँ चलत नहिं पाइ।।
यह रस चाखि और सुख भूले फूलत लखि मन अति गहराइ।
अचरज कहा व्यास सुख वरनत थके रसिक ताहि गाइ।।३०।।

---

१. नित्य २. धन ३. वृक्ष का गह्वर (खोखला भाग)

राग कमोद

धनि-धनि वृंदावन की धरनि।
अधिक कोटि वैकुंठलोकतें शुक नारद मुनि वरनि।।
जहाँ स्याम की वाम केलि कुल धाम काम मन हरनि।
ब्रह्मा मोह्यौ ग्वाल मंडली भेद रहित आचरनि।।
राधाकी छबि निरखत मोही नारायन की घरनि।
और वार कीनी वन वनिता प्रेम पतिहि अनुसरनि।।
जहाँ महीरुह[1] राज विराजति सदा फूल फल फरनि।
तहाँ व्यास बसि ताप बुझायौ अंतरहित की जरनि।।३१।।

राग केदारो

सुखद सुहावनौ वृंदावन लागत है अति नीकौ।
त्रिविधि समीर वहै रुचि-दाइक, भावत भाँवते भाँवती कौ।।
मोर, चकोर, हंस-हंसिनि युत, पीवत, पान अधर-रस पी कौ।
पलक न लगत अंगछबि निरखत, जानत जीवनि जी कौ।।
मुरलि बजाइ सुनाइ श्रवन ध्वनि, संतनसौं मंडल रचि लीकौ।
तत्तत् थेइ-थेइ बोलि परस्पर, तनमें तनक न सीकौ।।
नित्यविहार अहार करत हैं, व्रजवासिनि सुख पुन्य रती कौ।
व्यास दास या सुख के ऊपर और, ऐसौ ज्यौं दीपक द्यौसहि फीकौ।। ३२।

राग कान्हरो

जमुना जोरीजू की प्यारी।
जाकी वैभव कही भागवत, शुक, जयदेव विचारी।।
मनिमय तटी, उभै पट भूषन पूषन प्रियहिं सिंगारी।
सौरभ सुधा सलिल जनु राधा-मोहन की रस-झारी।।
सुरतरु राज विराजत तीर कुटीर समीर सवारी।
कुसुमित नमित विविध साखासौं, प्रान समान सुखारी।।

---

१. वृक्ष

महलनके मारग जल छलबल, विहरत निपुन-विहारी।
ऐंननि लै नैंननि सैंननि में, व्याकुल बसत विकारी।।
हंस-हंसिनी सभा प्रसंसित जय वृषभानुदुलारी।
व्यास स्वामिनी स्याम-भामिनी वृंदावनचंद उज्यारी।।३३।।

राग सारङ्ग

हमारी जीवनिमूरि प्रसाद।
अतुलित महिमा कहत भागवत, मेटत सब प्रतिवाद।।
जो षट्-मास व्रतनि कीनै फल, सो इक सीथके स्वाद।
दरसन पाप नसात, खात सुख, परसत मिटत विषाद।।
देत लेत जो करै अनादर, सो नर अधम गवाद।
व्यास प्रीति परतीति रीति सौं जूँठनि ते गुन नाद।।३४।।

हरि प्रसाद क्यौं लेत नारकी।
व्याह सराध, अधम जहँ जूठनि-खात फिरत संसार की।।
जो मुख सलिता वहै निरंतर, विष, लोहू, कफ, लार-की।
तिहिं मुख सुखद जाइ क्यौं जूँठनि, व्रज जुवतिनि के जार की।।
ताहि न वृंदावन-रज रुचि है, राधा-पद सुकुवाँर की।
जाकी देहै टेव परी है, कदरज[1] ढोली[2] खारकी[3]।।
ज्यौं असती अराधत जारहिं, तजि सेवा भरतार की।
ऐसै व्यास कहावति निगमनि विषय नदी विष-धार-की।।३५।।

राग सारङ्ग व कान्हरो

धनि-धनि मथुरा, धनि मथुरा, धनि मथुरा के वासी हो।
जीवनमुक्त सबही विहरत, केशवराय उपासी हो।।
माला तिलक हृदय अति राजत, मुनिमन ज्ञान प्रकासी हो।
स्थावर जंगम सबै चतुर्भुज, काम-क्रोध कुल नासी हो।।
सुभग नदी विश्रान्त जमुनजल, मज्जन काल विनासी हो।
व्यासदास षट्-पुरी दुरीं सब, हरिपुर भयौ उदासी हो।।३६।।

---

१. क्षुद्रता २. ठिठोली ३. चटोरापन

सखी हो मथुरा वृंदावन वसिये।
तीन लोकतें न्यारी मथुरा और न दूजी दिसिये।।
केशवराय, गोवर्द्धन, गोकुल पल-पल माँहि परसिये।
जमुनाजल विश्रान्त मधुपुरी, कोटि कर्म जहाँ नसिये।।
नंदकुमार सदा वन-विहरत कोटि रसायन रसिये।
व्यास दास प्रभु जुगल किसोरी कोटि कसौटी कसिये।।३७।।

राग कान्हरो

परम धन राधा-नाम अधार।
जाकौं स्याम मुरली में टेरत, सुमिरत बारंवार।।
जंत्र, मंत्र और वेद तंत्रमें, सभी तार कौ तार।
श्री शुक, प्रगट कियौ नहिं यातें, जानि सार कौ सार।।
कोटिन रूप-धरे-नंदनँदन, तोऊ न पायौ पार।
व्यासदास अब प्रगट बखानत डारि भार में भार[1]।।३८।।

लागी रट, राधा श्रीराधा नाम।
ढूँढ़फिरी वृंदावन सगरौ, नंद ढिठौना स्याम।।
कै मोहन हे खोरि साँकरी, कै मोहन नँदगांम।
व्यासदास की जीवन राधे धन बरसानौ गाँम।।३९।।

राग गौरी

हरि हरि हरि मेरैं आधार। हरि हरि मेरे सहज शृङ्गार।।
हरि हरि सकल सुखनि कौ सार।हरि हरि व्यास-कृपन भंडार।।४०।।

राग भैरव

हरि हरि बोलि, हरि बोलि प्यारी रसना। हरि, बोले बिनु नर्कहि बसना।।
हरि, बोलि नाँचि न! मेरे मना। हरि, बोलि होइ निर्मल तना।।
हरि, बोलि परनिंदा नहिं करना। हरि, बोलि राधाचरन सरना।।
हरि, बोलि वृंदाविपिन गहना। हरि-बोलि, हरि-बोलि सबै सहना।।
हरि-नाम, हरि-नाम सदा जपना। हरि बिनु व्यास, न कोउ अपना।।४१।।

१. बोझ उतारकर

राग सारङ्ग

गोपाल-कहिये, गोपाल-कहिये। गोपाल कहिये, कछु और न कहिये।।
गोपाल कहिये दुख सुख (सब) सहिये। गोपाल ज्यौं राखै त्यौंही रहिये।।
गोपाल गाइये परम पद लहिये। व्यास वेगि वृंदावन गहिये।।४२।।

राग नट

नरहरि गोविंद गोपाला।
दीनानाथ, दयानिधि सुंदर, दामोदर, नँदलाला।।
सरन कल्पतरु, चरन कामधेनु, आरत-हरन कृपाला।
महा पतित-पावन मन-भाँवन, राधारवन रसाला।।
अघ, वक, वकी, वत्स, धेनुक, कंस केलि-कुल काला।
साधु सभा हरि पुष्ट करहि दिन, दुष्टनिके घर घाला[1]।।
मानसरोवर रसिक अनन्य हृदय, कल कमल मराला।
घन तन स्याम नाम राधा-धव, नागर नैन विसाला।।
इंद्रनील-मनि मोहन तन-छबि, कंचन तन ब्रजवाला।
व्यास-स्वामिनी हरि उर राजति, मानहुँ चंपक-माला।।४३।।

राग धनाश्री

जय श्रीकृष्णा, जय श्रीकृष्णा, जय श्रीकृष्णा, जय जगदीसा।
असुर-सँहारन, विपति-विदारन ईसनिहूँ के ईसा।।
कृष्णमुरारी, कुंजविहारी, बालमुकुंदे लाला।
दीन-उधारी, संत-सुधारी, गिरिधारी, गोपाला।।
जदुकुल-नाइक, दीन सहाइक, सुखदाइक, जन-बंधु।
सुखमा-सुंदर, महिमा-मंदिर, करुना-पूरनसिंधु।।
गौ-धन गोहन[2], वनघन सोहन, मनमोहन-व्रजचंदा।
नटवर-नागर, परम उजागर, गुन-सागर गोविंदा।।
जदुकुल-नंदन, दनुज-निकंदन, करत सनंदन सेवा।
जय गरुड़ासन, प्रेम प्रकासन, व्यासदास कुलदेवा।।४४।।

---
१. विनाश करने वाले २. पीछे चलने वाले

राग सारङ्ग व धनाश्री

वृंदावन के राजा दोऊ, स्याम राधिका रानी।
तीन पदारथ करत मँजूरी, मुक्ति भरत जहाँ पानी।।
करमी, धरमी करत जेवरी, घरु छावत हैं ज्ञानी।
जोगी, जती, तपी, सन्यासी, इन चोरी कै जानी।।
पनिहाँ वेद पुरान मिलनियाँ, कहत सुनत यह वानी।
घर-घर प्रेम-भक्तिकी महिमा व्यास सबनि पहिचानी।।४५।।

राग सारङ्ग (चर्चरी ताल)

नव (कुँवर) चक्र चूड़ा नृपतिमनि साँवरौ, राधिका तरुनि मनि पट्टरानी।
शेष गृह आदि वैकुण्ठ परयन्त सबलोक थानैंत[1], बन राजधानी।।
मेघ छ्यानवेकोटि बाग सींचत जहाँ मुक्ति चारौं जहाँ भरत पानी।
सूर, शशि पाहरु[2], पवन जन, इन्दिरा चरन दासी, भाट निगम वानी।।
धर्म कुतवाल, शुक सूत, नारद चारु, फिरत चर चार सनकादिक ज्ञानी।
सतगुन पौरिया[3], काल वन्दुवा, कर्म डांडियै[4], काम रति सुख निसानी।।
कनक मरकत धरनि कुञ्ज कुसुमित महल मधि कमनीय शयनीय ठानी।
पल न बिछुरत दोऊ, जात नहिं तहाँ कोऊ, व्यास महलनि लियैं पीकदानी।।४६।।

राग केदारो व कमोद

जयति नवनागरी कृष्ण-सुखसागरी,
सकलगुन आगरी दिननि भोरी।।
जयति हरिभामिनी,कृष्णघन दामिनी,
मत्तगजगामिनी, नवकिसोरी।।
जयति प्रिय केलि हित कनक नव बेलि सम,
कृष्ण कल कलय निसि मिलि विलासी।।
जयति वृषभानुकुल कुमुदवन कुमुदिनी,
कृष्ण सुख हिमकर निरखि प्रकासी।।
जयति गोपाल मन मधुप नव मालती,
जयति गोविंद मुख कमल भृंगी।।

---
१. सब लोकों के स्वामी २. पहरेदार ३. द्वारपाल ४. दण्ड देने वाला

जयति नँदनंदन उर परम आनंदनिधि,

लाल गिरिधरन पिय प्रेम रंगी।।

जयति सौभाग्यमनि, कृष्णअनुरागमनि,

सकल तिय मुकुटमनि सुजस लीजै।।

दीजिये दान यह व्यास निज दासकौ,

कृष्णसौं बहुरि नहिं मान कीजै ।।४७।।

राग सारंग व धनाश्री

धनि तेरी माता जिनि तू जाई।
ब्रजनरेस वृषभानु धन्य जिहिं, नागरि कुँवरि खिलाई।।
धन्य श्रीदामा भैया तेरौ, कहत छबीली बाई।
धन्य वरषानों हरिपुरहूतें, ताकी बहुत बड़ाई।।
धन्य स्याम बड़भागी तेरौ, नागरकुँवर सदाई।
धन्य नंद की रानी जसुदा, जाकी बहू कहाई।।
धन्य कुंज सुखपुंजनि वरषत, तामें तूँ सुखदाई।
धन्य पुहुप साखा द्रुम पल्लव, जाकी सेज बनाई।।
धन्य कल्पतरु, वंशीवट धनि, वर विहार रह्यौ छाई।
धन्य जमुना जाकौ जल निर्मल, अँचवत सदा अघाई।।
धन्य रासकी धरनि जिहिं तूँ, रुचि कै सदाँ नचाई।
धन्य वंशी पन[१] जगत प्रशंसी, राधा नाम रटाई।।
धन्य सखी ललितादिक निसिदिन, निरखत केलि सुहाई।
धन्य अनन्य व्यास की रसना, जिहिं रस कीच मचाई।।४८।।

राग विलावल

सबकौ भाँवतौ राधावर।
पूत यशोदाकौ नँदनंदन ब्रजलाड़िलौ स्यामसुन्दर।।
कुंजविहारी सदा सिंगारी, गावत नाचत सदा सुघर।
कोककला-कुल रसिकमुकुटमनि, वारिज मुख सुख सागर।।

---
१ प्रतिज्ञा

महा पतित पावन चरनिनिके शरन रहत काकौ डर।
व्यास अनन्य रसिकमंडल कौ, पोषक मान सरोवर।।४९।।

राग सारङ्ग व विहागरो

जय-जय राधिका-धव स्याम।
केलि पुंज निकुंज नायक कञ्ज मुख सुखधाम।।
नैंननि सैंननि मन मोहत, वैंन विहँसनि वाम।
भृकुटि रँग तरँग उपजत, अंग-अंग ललाम[1]।।
पीत चीर अधीर भूषन किंकिणि मणि दाम।
मुकुट कुंडल गंड झलकत अलक छबि अभिराम।।
धन्य वृंदाविपिन वासी सत्य पूरन काम।
व्यास से अति पतित सुधरे लेत पावन नाम।।५०।।

राग सारङ्ग व धनाश्री

सोहति पराधीनता श्यामहि।
जाके बल रससिंधु बढ़ायौ गावन कौ गुन ग्रामहि।।
मारत बाँधत सुख पावत हरि छोरि न डारति दामहि।
रोवत नहीं दुखित है जानत प्रेम नैंम जसुदा मँहि।।
आपु बँधाइ छुड़ाइव दीननि देत विषै निह कामहि।
अद्‌भुत वैभव कही न जाइ शुक श्रीभागवत कथा मँहि।।
मोद विनोद विचित्र विराजत, निसिदिन चंद ललामहि।
व्यास रूप गुन सुख रस आनँदकंद वृंद राधा महि।।५१।।

राग सारङ्ग व जयतिश्री

हरि दासनि के वश है जानत।
निगम अगोचर आपुनु हित करि जनके जसहि वखानत।।
राई सो गुन देखत गिरि सम दोष न मन मँह आनत।
थोरैंही रति करत बहुत बहु दीने तनक न मानत।।

---

१. सुन्दर

जानराइ अभिमानी, दीननि, तबहीं हँसि पहिचानत।
सर्वसु देत भुरायैंहिं कपटिनि सौं चतुराई ठानत।।
संतनके अपराध छमत आपनु करतव्यहि रानत[1]।
व्यास भक्तिकी यहै रीति अपनैं सन्तनि सौं मन मानत।।५२।।

राग सारङ्ग

असरन सरन स्यामजू कौ बानौ।
बड़ौ विरद पतितनकौ पावन, भक्तनि हाथ विकानौ।।
शुक नारद जाकौ यश गावत शिव विरंचि उरगानौ[2]।
हितहीकौ हित मानत नागर, गनत न रंक न रानौ।।
दयासिंधु दीननि कौ बांधव प्रगट भागौत कहानौ।
रजधानी वृंदावन जाकौ लोक चतुर्दश थानौ।।
ऐसे ठाकुर कौ हौं सेवक, कैसैं औरहि मानौ।
व्यास कलंक लगै तौ जननी जौ न पितहि पहिचानौ।।५३।।

राग धनाश्री

महिमा स्याम की हम जानी।
जिहिं प्रताप वृंदावन सेवत मोहू से अभिमानी।।
हमहूँसेन[3] कृपाकरि दैहैं दरशन राधारानी।
व्यासदासि नव केलि विलोकत, विनहीं मोल विकानी।।५४।।

राग सारङ्ग व धनाश्री

स्याम सुधन कौ नाहीं अन्त।
जाकै कोटि रमा सी दासी,पद सेवत रति कंत।।
कोटि-कोटि लंका सुमेर से, रंकनि हँसि वकसंत।
शिव, विरंचि, मघवा, कुवेर जाके रोमनिके तन्त।।
रजधानी वन कुंजमहल महली शरद वसन्त।
श्रीराधा रानी सहचरि गोपी सुख पुंजनि वरषंत।।

१. अंगीकार कर लेते हैं २. स्वीकार करना ३. आश्रित

नागर मनमोहन रससागर अर्थ अपार अनंत।
व्यास स्वामिनी भोग भोगवत नव यौवन मयमंत[१]।।५५।।

हरि कौ सो हितु न कियौ अब काहू।
और सबै दुखदाता लातनि मारत लागत पाहू।।
ऐसौ सुख सपनैं नहिं दीनौं गर्भ बसत माताहू।
अपनौ विषै भोग पोषन लगि, कीनौ कपट पिताहू।।
बोल तोतरे बोल चोरि चित, वित लीनौं बेटाहू।
अपनैं काज पतिव्रत लीनौं, वश कीन्हौ अबलाहू।।
भाइप[२] प्रीति समीति मिलै चित, घर लीन्हों भैयाहू।
कपट प्रीति परतीति बढ़ाई, अपनैं काज सखाहू।।
व्याह वरैती[३] मिस रूठ्यौकरि घर लूट्यौ सजना हू।
धन कारन मन हस्यौ कस्यौ सब, स्वारथ लगि राजा हू।।
हरिगुन विमल अगाधसिंधुकी, को जानै सींवाहू।
कूर कुटिल कामी अपराधी, व्यास विमुख सेवा हू।।५६।।

राग विलावल व सारङ्ग

श्रीराधा प्यारी के चरनारविंद सीतल सुखदाई।
कोटिचंद मंद करत, नखविधु जुन्हाई।।
ताप, शाप, रोग, सोग दारुन दुखहारी।
कालकूट दुष्टदवन कुंजभवन चारी।।
स्याम हृदय भूषन युत दूषन जित संगी।
वृंदावन धूरि धूसर रासरसिक रंगी।।
सरनागत अभय विरद, पतित पावन वानै।
व्यास से अति अधम आतुर को, कौंन समानै[४]।।५७।।

१. मदमत्त २. भाईचारा ३. व्यवहार ४. कौन स्थान दे

राग सारङ्ग

यह छवि को कवि वरनि सकै।
जब राधा-मोहन सनमुख है, भृकुटि विलास तकै।।
शेष अशेष कोटि चतुरानन, वरनत वदन थकै।
उपमा जितीं तितीं सब झूँठी, कत मन बुधि भटकै।।
जितै-तितै श्रोता अरु वक्ता, कलपि-कलपि सु बकै।
आगम निगम सबै पचिहारे व्यासहिं मति-तनकै।।५८।।

श्रीराधावल्लभ की नव-कीरति वरनत हू न निघात[1]।
भरतखंड की सु कविमंडली वरनत हू न अघात।।
बड़े रसिक जयदेव बखानी लीला अमृत चुचात।
(श्री) वृंदावन हरिवंश प्रसंसित, सुनि गोरी मुसकात।।
राग सहित हरिदास कही रस नदी बही न थहात[2]।
रसिक अनन्यनि की जूँठनि व्यास सखी, रुचि सुचि कै खात।।५९।।

राधिका-रवन जय।
नवलकुँवरि वृंदावनवासी निज दासिन दिखरावत सुख चय[3]।।
जाकै चरनकमल सेवत नितु रसिक अनन्य भये सब निरभय।
ताकै नाम रूप गुन गावत पावत महाप्रसाद रसालय।।
नवनिकुंज रति पुंजनि वरषत परसत अंग ललित लीलामय।
ताकी आस व्यास नहिं छाँड़हि, जदपि लोक भये सब निर्दय।।६०।।

राधावल्लभ मेरौ प्यारौ।
सर्वोपरि सबहीकौ ठाकुर, सब सुखदानि हमारौ।।
व्रज वृंदावन नाइक सेवा लाइक स्याम उज्यारौ।
प्रीति रीति पहिचानैं जानैं रसिकनि कौ रखवारौ।।
स्याम कमल दल-लोचन, मोचन दुख नैंननि कौ तारौ।
अवतारी सब अवतारनि कौ महतारी महतारौ।।

१. कम नहीं होती २. थाह रहित ३. समूह

मूरतिवंत-काम गोपिन कौ गो गोपनि कौ गारौ[1]।
व्यासदास कौ प्रान जीवन धन, छिन न हृदें तें टारौ।।६१।।

राग कमोद व धनाश्री

देखौ माई शोभा नागरि नटकी।
जाके दरस परस रस राचै विथिकित मनसा मनकी।।
जाकौ गुन लागत ही भागै साँपिनि तृष्ना धनकी।
जिहिं रस गोपी गोपहि मोहे तजि माया गृह तनकी।।
जहाँ चंद्रिका मंद होत नहि राधा विधु-आननकी।
पीवत नंदकिसोर चकोरहि वाढ़ी चौंप मदन की।।
जाकी कथा परीक्षित सुनि तजि त्रासं विषी[2] भय भवकी।
जिहिं आनंद व्यास सुख परिहरि आसा जननी थनकी।।६२।।

राग विलावल

जैसे गुरु तैसे गोपाल।
हरि तौ तबहीं मिलि है, जबहीं श्रीगुरु हौंहि कृपाल।।
गुरु रूठैं गोपाल रूठि हैं, वृथा जातु है काल।
एक पिता बिनु गनिकासुत कौ, कौन करे प्रतिपाल।।
ज्यौं रज[3] बिनु रजपूत कँपत जिय देखत रनकौ चाल।
ऐसैंहिं गुरुके विमुख सिष्यकौ, जम करिहैं बेहाल।।
सत्संगति, गुरुकी सेवा करि, सुपचहि करत निहाल।
व्यासदास खिजयैं गुरु जुग-जुग मिटत नहीं उर साल।।६३।।

गुरुकी सेवा हरि करि जानी।
गये उज्जैन रैंनिदिन दुख सहि, तजि मथुरा रजधानी।।
छाड़ी प्रभुता, पाइ लगत हैं, दास कहत सुखदानी।
गदगद सुर पुलकित वेपथ, सोहत गो रज लपटानी।।
इहिं विधि रहत बहुत दिन बीते, गुरु-घरनी अनखानी[4]।
पीसत पोवत करत रसोई हौं जु भई नकवानी[5]।।

---

१. गौरव २. जहरीला साँप ३. वीरता ४. नाराज हुई ५. नाक में दम होना

यह सुनि सकुचि गये वन मोहन, शिर धरि मोरी[१] आनी।
भूँखैं प्यासैं मेहु सह्यौ निसि, भोर भर्यौ हरि पानी।।
दिये जिवाइ मृतक सुत तबहीं, गुरुमहिमा पहिचानी।
हरिके गुन-गन कहौं कहाँ लगि, व्यास विमुख अभिमानी।।६४।।

राग केदारो

गुरु गोविंद एक समान।
वेद पुरान कहत भागवत, ते जु वचन परमान।।
एकै सिष्य लीक देत[२] हैं गुरुसौं दूरि भये परसावत।
छियैं छोति[३] मानत हैं छुतिहा[४], सींचौ लै पुनि धावत।।
जैसी रीति सेष सोफिन[५] की ऐसी रीति चलावत।
सन्यासी पै मन्त्र सुनत हैं ते कब भक्त कहावत।।
गुरु गाड़ें[६] चेला लै वारे[७], दोऊ पंथ तुरंत भये।
उत सन्यास न इतहि भक्ति फल, खल नर बीचहि बीच गये।।
दीक्षा वरन पलटु है ऐसौ, दिया-दिया है जैसौ।
व्यास बीज बोवत हैं जैसौ, फल लागत है तैसौ।।६५।।

राग सारङ्ग

नमो-नमो नारद मुनिराज।
विषियनि प्रेमभक्ति उपदेसी, छल बल किये सबनिके काज।।
जासौं चित दै हित कीनौ, ते सब सुधरे साधु समाज।
'व्यास' कृष्णलीला रँग राचे मिटिगई लोक वेदकी लाज।।६६।।

नमो-नमो जय शुकदेव-वानी।
जा सुमिरत हरि मनमें आवत, गावत सुधरे सब अभिमानी।।
तासौं प्रीति करत भ्रम छूटत, कर्म दुरासा त्रास डरानी।
मद मत्सर माया सुत जाया, काया विसरी सब दुखदानी।।

---

१. लकड़ी का गट्ठर २. लकीर खींचना ३. छूत मानना ४. जिससे छूत मानी जाय
५. शेख सूफी ६. स्थापित करना ७. खण्डन करना

जिनि सर्वोपरि वृंदावन की, सहज माधुरी केलि बखानी।
निर्मल भजन अनन्य कियौ जिन, निरसे[1] जोगादिक तुछिध्यानी।।
जिनकी विषै भागवत सन्तत, भक्ति भाव भक्तन पहिचानी।
जय जय व्यास उत्तरानँदन, आनंदकंद सरद घन पानी।।६७।।

शुक नारद से भक्त न कोई जिहिं भागवत सुनायौ।
बिनु भागवत भक्ति न उपजै साधन साधि बतायौ।।
जिनके वचन सुनत संदेह परीक्षित देह भुलायौ।
संसारी ताकौ करुना करि सुखदानी दिखरायौ।।
जिनकी कृपा कृपाल होत हरि सुत है आपु बँधायौ।
तिनि कारन गिरिवर धरि विष पावक पीवत सुख पायौ।।
कहा-कहा न कियौ करुनानिधि निज दासनि कौ भायौ।
कोटि अजामिलहु तैं पापी व्यासहि नाम लिवायौ।।६८।।

श्रीजयदेव से रसिक न कोई जिन लीला रस गायौ।
जाकी जुगति अखंडित मंडित सबही के मन भायौ।।
विविधि विलास-कला कविमंडन जीवनि के भागनि आयौ।
'पतति पतत्रे' मुख निसरत ही राधा-माधवकौ दरसन पायौ।।
वृंदावनकौ रसमय वैभव जिनि पहिलैं सबनि सुनायौ।
ता पाछैं औरनि कछु पायौ सो रस सबनि चखायौ।।
पद्मावति चरननिंकौ चारन[2] जिहि गोविंद रिझायौ।
व्यास न आस करी काहूकी कुंजनि स्याम बुलायौ।।६९।।

अनन्य नृपति स्वामी हरिदास।
कुञ्जविहारी सेये बिनु जिनि, छिन न करी काहूकी आस।।
सेवा सावधान अति जान, सुघर गावत दिन रास।
ऐसौ रसिक भयौ नहिं है है, भुव-मंडल आकास।।

---
१. निरस्त हो गये २. श्री जयदेव

देह विदेह भये जीवतही, बिसरे विश्व विलास।
वृंदावन रेनु तन मन भजि, तजि लोक वेद की आस।।
प्रीति रीति कीनी सबही सौं किये न खास खवास।
अपनौ व्रत हठि ओर निवाह्यौ जबलगि कंठ उसास।।
सुरपति भुवपति कंचन कामिनि जिनके भायैं घास।
अबके साधु व्यास हमहूँ से जगत करत उपहास।।७०।।

साँची भक्ति नामदेव पाई।
कृष्ण कृपाकरि दीनी जाकौं, लोकनि वेद बड़ाई।।
प्रीति जानि पय-पियौ कृपानिधि, छाँनि[1] छबीलैं छाई।
चरन पकरि सठके हठ बल ज्यौं, हरिसौं बात कहाई।।
जाके हित हरि मंदिर फेर्‍यौ, चित दै गाइ जिवाई।
जिनि रोटी घिउ चुपरि स्यामकौं, अपनैं हाथ खबाई।।
जाकी जाति पाँति-कुंल वीठ्ठल, संतजना सब भाई।
ताकी महिमा व्यास कहा कहै, जाके सुबस कन्हाई।।७१।।

कलिमें साँचौ भक्त कबीर।
जबतें हरिचरननि रुचि उपजी, तबतें बुन्यौ न चीर।।
दीनौं लेई न कबहूँ जाचै, ऐसौ मति कौ धीर।
जोगी, जती, तपी, सन्यासी तिनकी मिटी न पीर।।
पाँचतत्त्वते जनम न पायौ काल ग्रस्यौ न सरीर।
व्यास भक्तिको खेत जुलाहौ हरि करुना मै नीर।।७२।।

मेरैं भक्त हैं देई देऊ[2]।
भक्तनि जानौं भक्तनि मानौं, निज जन मोहि बतेऊ।।
माता पिता भैया मेरै भक्त, दमाद सजन बहनेऊ।
सुख संपति परमेश्वर मेरे, हरिजन जाति जनेऊ।।

---

१ छप्पर २ देवी देवता

भव सागर कौ बेरौ भक्तै, केवट बड़ हरि खेऊ।
बूड़त बहुत उबारे भक्तनि, लिये उबारि जरेऊ।।
जिनकी महिमा कृष्ण कपिल कहि, हारे सर्वोपरि वेऊ।
व्यास दास के प्रान जीवन धन, हरिजन बाल बड़ेऊ।।७३।।

राग नट

श्री हरिवंशसे रसिक हरिदास से अनन्यनिकी
को वपुरा[1] अब करि सकै सारी[2]।
जिन वृंदावन साँचौ करि जान्यौं 'राधावल्लभ' 'कुंजविहारी'।।
रूप सनातन है वैरागी उपकारी सबके हितकारी।
'व्यास' धन्य धन्य व्रजवासी कृष्णदास गोवर्द्धन धारी।।७४।।

राग देवगन्धार

जै-जै मेरे प्रान सनातन रूप।
अगतिन की गति दोऊ भैया, योग यज्ञ के जूप[3]।।
वृंदावन की सहज माधुरी प्रेम-सुधा के कूप।
करुनासिंधु अनाथ वंधु जय, भक्त सभा के भूप।।
भक्ति भागवत मति आचारज, कुल के चतुर चमूप[4]।
भवन चतुर्दस विदित विमल जस, रसना के रसतूप[5]।।
चरनकमल कोमल रज छाया, मेटत कलि-रवि धूप।
व्यास उपासक सदाँ उपासी श्रीराधा चरन अनूप।।७५।।

राग जयतिश्री

(श्री) माधवदास शरन मैं आयौ।
हौं अजान ज्यौं नारद ध्रुवसौं, कृपाकरि संदेह भगायौ।।
जिनहि चाहि गुरु सुकल तज्यौ-वपु, फिरकैं दरसन पायौ।
मो सिर हाथ धरौ करुनाकरि, प्रेम भक्ति फल पायौ।।

---

१. बेचारा २. समानता ३. स्तम्भ ४. प्रमुख ५. रस राशि

हरिवंशी, हरिदासी सौं मिलि कुंज केलि-रस गाइ सुनायौ।
गुरु हरि, साधु, नाम, वन, जमुना, महाप्रसाद रसालय भायौ।।
जातें सहज प्रिया प्रीतम बस, कलियुग वृथा गवायौ।
मनसा वाचा और कर्मना, व्यासहि श्याम बतायौ।।७६।।

राग धनाश्री

प्रवोधानंद से कवि थोरें।
जिन राधावल्लभ की लीला, रस में सब रस घोरे।।
केवल प्रेम विलास आस करि, भव-बंधन दृढ़ तोरे।
सहज माधुरी बचननि रसिक, अनन्यनि के चित चोरे।।
पावन रूप नाम गुन उर धरि, विषै विकार जु मोरे।
चारु चरन नखचंदबिम्बमें, राखे नैंन चकोरे।।
जाया माया गृह देहीसौं, रविसुत-बन्धन[1] छोरे।
लोक वेद सारंग[2] अंगके, सेत[3] हेतके फोरे।।
यह प्रिय व्यास आस करि श्रीहितहरिवंशहि प्रति करजोरे।।७७।।

पद्मावति पति पद शरनं।
कुंजकेलि कविराज मुकुट मनि, रसिक अनन्यनि आभरनं।।
श्रीहरिवंश हंस मुख सुखमय, वचन रचन दुख जल तरनं।
श्रीजयदेव व्यासकुल वंदित, व्रजयुवती नट नृत्य करनं।।७८।।

साँची प्रीति श्रीविहारिनि दासै।
कै करवा कै कुंज कामरी, कै सिर श्रीस्वामी हरिदासै।।
प्रतिवादहिं सहि सकत न तिनके, जानत नहीं कहा कहैत्रासै।
महामाधुरी मत्त मुदित है, गावत रस जस जगत उदासै।।
छिनहींछिन परतीति बढ़त रस,रीतिनि देखि बिबि वदन विलासै।
अंगसंग नित्य विहार करत मिलि, यहै आस निजु वन बसि व्यासै।।७९।।

---

१ यमपाश २. हाथी ३. सेतु

इतनौं है सब कुटुँब हमारौ।
सैन, धना अरु नामा, पीपा, और कबीर,रैदास चमारौ।।
रूप सनातन कौ सेवक, गंगल भट्ट सुढारौ।
सूरदास, परमानन्द, मेहा, मीराँ भक्त विचारौ।।
बाह्मन राजपुत्र कुल उत्तम, तेऊ करत जाति कौ गारौ।
आदि अंत भक्तन कौ सर्वस राधाबल्लभ प्यारौ।।
आसूकौ हरिदास रसिक हरिवंश न मोहि बिसारौ।
इहि पथ चलत स्याम स्यामा कै व्यासहि बोरौ भावहि तारौ।।८०।।

राग देवगन्धार

हुतौ रस-रसिकनकौ आधार।
बिनु हरिवंशहि सरस रीति कौ, कापै चलिहै भार।।
को राधा दुलरावै गावै, वचन सुनावै चार।
(श्री) वृन्दावनकी सहज माधुरी, कहिहै कौन उदार।।
पद रचना अब कापै ह्वै है, निरस भयौ संसार।
बड़ौ अभाग अनन्य--सभाकौ, उठिगो ठाठ सिंगार।।
जिन बिनु दिन-छिन सत-युग बीतत, सहज रूप आगार।
व्यास एक कुल कुमुद बंधु[1] बिनु, उड़गन जूँठौ थार[2]।।८१।।

राग धनाश्री

पैनी छवि कोउ कवि न बखानै।
जीभ कुकात प्रीति कहिवे कौं, व्याकुल होत अपानै।।
अति अगाध रससिंधु माधुरी, वेई पै कहि जानै।
ताकौ वार पार नहिं पावत विधि, शिव, शेष, धरत श्रुति ध्यानै।।
कोटि-कोटि जयदेव सरिखे, कहत सुनत न अघानै।
व्यास आस मनकी को पुजवै हित हरिवंश समानै।।८२।।

१. चन्द्रमा　२. मण्डल

राग सारङ्ग

विहारिहिं स्वामी बिनु को गावै।
बिनु हरिवंशहि राधिकावल्लभ, को रसरीति सुनावै।।
रूप, सनातन बिनु को वृन्दा - विपिन माधुरी पावै।
कृष्णदास बिनु गिरिधरजू को, को अब लाड़ लड़ावै।।
मीराँ बाई बिनु को भक्तनि, पिता जानि उर लावै।
स्वार्थ परमारथ जैमल बिनु, को सब बंधु कहावै।।
परमानंददास बिनु को अब, लीला गाइ सुनावै।
सूरदास बिनु पद रचना को, कौन कविहि कहि आवै।।
और सकल साधन बिनु को, अब यह कलि काल कटावै।
व्यासदास इन बिन को, अब तनकी तपन बुझावै।।८३।।

साधु शिरोमणि रूप-सनातन।
जिनकी भक्ति एकरस निवही, प्रीति कृष्ण-राधा तन।।
जाकौ काज सवाँस्यौ चित दै, हित कीनौ छिन तातन[1]।
जाकै विषय वासना देखी, मनसा करी न वातन।।
वृन्दावनकी सहज माधुरी, रोम-रोम सुख गातन।
सब तजि कुंजकेलि भजि अहनिसि, अति अनुराग सदा तन।।
तृनहुँते नीचे तरुहुँ तें सहकर, अमानी मान सुहातन।
असिधारा व्रत ओर निवाह्यौ, तन मन कृष्ण कथा तन।।
करुनासिंधु कृष्णचैतन्य की, कृपा फली दुहुँ भ्रातन।
तिन बिनु व्यास अनाथ भये, अब सेवत सूखे पातन।।८४।।

साँचे साधु जु रामानन्द।
जिनि हरिजू सौं हित करि जान्यौं, और जानि दुख द्वंद्व।।
जाकौ सेवक कबीर धीर अति, सुमति सुरसुरानंद।
तब रैदास उपासिक हरिकौ, सूर सु-परमानंद।।

---

१. दोनों भाई

इनतें प्रथम तिलोचन नामा दुख मोचन सुखकंद।
खेम, सनातन भक्ति-सिंधु, रस-रूप राघवानंद।।
अलि हरिवंशहि फव्यौ राधिकापदपंकज मकरंद।
कृष्णदास हरिदास उपास्यौ वृन्दावनकौ चंद।।
जिनि बिनु जीवत मृतक भये हम सह्यौ विपतिकौ फंद।
तिनि बिनु उरको शूल मिटै क्यौं, जिये व्यास अति मंद।।८५।।

राग कान्हरो

मेरी पराधीनता मेटौ हरि किन।
अपनै शरन राखिलेहु बलिजाउँ बिमुखनिके द्वारैं उझकौं[१] जिन।।
तुम्हरे दासहि आस औरनि की, उपजत नाहिन स्याम तुम्है घिन[२]।
सिंघनि के बालक भूखेहूँ प्रान तजत, नहिं चरत हस्यौत्रिन।।
ताही प्रभुकी प्रभुता साँची, जाकौ सेवक सचु पावै दिन।
ब्यासहि आस राधिका-वरकी, जग रूठौ तूठौ[३] अबही किन।।८६।।

राग सारङ्ग

मोहि देहु भक्ति कौ दान।
या संपति कौ दाता और न, हौं मागौं कछु आन।।
एक चुरू[४] जल प्यासौ जीवै यौं राखै को मान।
पाछैं सुधासिंधु कहा कीजै छूटिगये जौ प्रान।।
ऐसैं अंगन देइ कुरंग सुनत नादहि सहीबान।
जैसैं मदगयंद बिनु बिछुरैं, सहि न सकत ऐलान[५]।।
तैसैं भृंग बँध्यौ जलसुतसौं, एक लोभ परधान।
ऐसैं व्यास आस कर बाँधे मुकरे वे भगवान।।८७।।

कर्त्ता स्याम सनेही सबकैं।
जुग जुगवतु जग जीवनि कैसैं, जनहि छाँड़ि हैं अबकैं।।
बहुत दुखित दुख-सागर तें हरि, काढ़ि लये कर केसनि बहकैं।
इतनी आस व्यासकी पुजवहु, राखहु वृंदावन में दबकैं[६]।।८८।।

---

१. झांकना २. घृणा ३. प्रसन्न होना ४. चुल्लू ५. हाथी बाँधने का खूँटा ६. स्थाई

वेद भागवत स्याम बतायौ।
गुरु वचननि परतीति बढ़ाई, साधन सब संदेह भगायौ।।
त्रिभुवन में भुवि जा लगि जनये, निजु वपु छीन छुड़ायौ।
साधुसंग कीनी वंशी बस, निश्चै करि मन भायौ।।
जहाँ भक्त सब जात तहाँ ते, अजहूँ कोऊ न आयौ।
व्यासहि बिदा करौ करुना करि समाचार लै आयौ।।८९।।

सारङ्ग (जयति ताल)

कहा मन या तन पै तू लैहै।
करिलै हित राधा-धवसौं पुनि, केश काल करि गैहै।।
करत कृपनता दूरि धरत धन, तन छूटै धन कहाँ समैहै।
बाढ़ी तृष्ना कृष्ण कृपा बिनु, पावतहूँ न अघैहै।।
सूकर, श्वान, स्यार की खाजी[1], तापर का गरवैहै।
व्यास बचन मानै बिनु जुग-जुग, जमके हाथ विकैहै।।९०।।

करि मन वृंदावनसौं हेत।
निसि दिन छिन छाया जिनि छाड़हि, रसिकनकौ रस-खेत।।
जहँ श्रीराधा-मोहन विहरत, करि कुंजनि संकेत।
पुलिन रास रस रंजित देखत, मन्मथ होत अचेत।।
(श्री) वृंदावन तजि जे सुख चाहत, तेई राक्षस प्रेत।
व्यास दासके उरमें बैठ्यौ, मोहन कहि-कहि देत।।९१।।

मन तू वृंदावन के मारग लागि।
तेरौ न कोऊ न तू काहूकौ, माया मोह तजि भागि।।
यह कलिकाल व्याल विष भोयौ, जग सोयौ तू जागि।
भवसागर हरि वोहितकौ तू, होहि कृपाकरि कागि।।
गो गिरि सर सलिता द्रुम कुंजनि सौं औरहि अनुरागि।
व्यास आस करि राधा-धव की व्रजवासिन के कौरा माँगि।।९२।।

---

१. भोजन

रहि मन वृंदावन की शरन।
और न ठौर कहूँ मो तोकौं, संपति चारयौं चरन।।
कुंज-केलि कमनीय कुसुम शयनीय, देखि सुख करन।
राजभोग संयोग होत जहँ, रजनी रतिकी तरन।।
तरुनी तरुन प्रताप चाँप बल, काल व्यालकौ डरन।
तरनि तेज कर भूमि न परसत, पावक माया वरन।।
वहत मरुत मकरंद उड़ावत, मृदु-छवि शीतल परन।
शुक सनकादिक नारद गावत, सुख पावत आधरन।।
यह रस पसू निरस तू छाँड़त, भाजत पेटहि भरन।
व्यास अनन्य भक्तिकी जीवनि बनमें मंगल मरन।।९३।।

होहु मन वृंदावन को श्वान।
जो गति तोकौं देहैं ऐसैं,सो गति लहै न आन।।
बेगि विसरिहै कामिनि कूकरि, सुनत स्याम गुनगान।
व्रजवासिनिकी जूँठन जैंवत, बेगि मिलत भगवान।।
जहाँ कलपतरू कामधेनुके, वृंद विराजत जान।
बाजत जहाँ स्याम-स्यामा के, सुरत समर नीसान।।
सदा सनातन राधावनकौ, प्रलय खिसत नहिं पान।
तीरथ और सकल जबहीं लगि, जौलगि शशि अरु भान।।
है बैकुंठ एक सुनियतु ताकौ, साधन गुरु-ज्ञान।
व्रजमें भये चतुर्भुज कौ, कामरि बेनु विखान[1]।।
नंद यसोदा गो गोपिनके, मोहन तन धन प्रान।
व्यास वेद व्रजवैभव जानत, नाहिन करत बखान।।९४।।

राग केदारो

करि मन वृंदावन में बास ।
कपट प्रीति के लोगनि तजि भजि,जौलगि कंठ उसास ।।

---

१. पशु का सींग

खेलत राधा-मोहन जामहँ, होत सदा निसि रास।
कुंज-कुटीर तीर जमुना के, धीर समीर विलास।।
नख-सिख बिटप बेलि लपटानें, जहँ तहँ कुसुम विकास।
वीथिन बीच कीच रँग जाकौ, नाहिन कहूँ निकास।।
सुख की खान जान वंशीवट, कीनौं सुरत अवास[1]।
पायक रविकौ तेज न संतत, शरद बसंत निवास।।
हरित भूमि जल सीतल छाँहीं, गाइ ग्वालकौ पास।
बहैं फिरत दधि दूध चहूँदिसि, सकल दुखनकौ नास।।
स्यामहिं गावति गोपी रसिक, अनन्यनि होत उदास[2]।
पुजवहु आस व्यासकी मोहन, अब जिनि करहु विसास[3]।।९५।।

राग सारंग

करि मन साकत कौ मुँह कारौ।
साकत मोहिं न देख्यौ भावै, कहा बूढ़ौ कहा बारौ।।
साकत देखैं डरू लागत है नाहरहूँ तें भारौ।
भक्त हेत मम प्रान हतत है, नैंकु-न डरै मट्यारौ।।
आठैं, चौदसि कूँड़ा[4] पूजै अभागे कौ ज्ञान अँध्यारौ।
व्यासदास यह संगति तजिये भजियै श्याम सवारौ।।९६।।

ऐसौ मन जौ हरिसौं लागै।
जैसै चकई पिया वियोगिन निसा सबै वह जागै।।
जलहीतैं उत्पत्ति कमल की, सदा रहै वैरागै।
जैसैं दिनकर उदै होतही, महामुदित रस पागै।।
जैसी प्रीति चकोर चंदकी, अनत नहीं चित तागै[5]।
ऐसैं व्यास मिलौ जौ हरिकौं, जरा मरन भौ-भागै।।९७।।

१. आवास २. विरक्त ३. विश्वास अथवा विश्वास पर ठेस पहुँचाना ४. शाक्तों की विशेष पूजा विधि ५. धागा

राग कान्हरो

मन मेरे तजिये राजा संगति।
स्यामहिं भुलवत दाम काम बस, इनि बातनि जैहै पति।।
विषयनिके उर क्यौं आवत हरि, पोच भई तेरी मति।
सुख कहँ साधन करत अभागे, निसिदिन दुख पावत अति।।
व्यास निरास भये बिनु, भक्ति बिना न कहूँ गति।।९८।।

राग धनाश्री

गाइ मन, मोहन नागर नटहि।
कुंजन अंतर देखि निरंतर राधा छबि की छटहि।।
केलि नवेलि बेलि-कुल छिन-जिनि छाड़हु वंशीवटहि।
कमल विमल जल मृदुल पुलिन सुख सेवहु जमुना तटहि।।
कुसुमित नमित अमित किसलय-दल, फल वीथिनिमें अटहि[1]।
गुंजत मधुप पुंज पिक बोलत गौर स्याम लंपटहि।।
वृंदावनकी सहज संपदा पावतहू जिनि लटहि[2]।
व्यास आस तजि भजियहु रसिक अनन्यनिके संघटहि।।९९।।

राग देवगन्धार

रसना स्यामहि नैंकु लड़ाउरी।
चढि बैकुंठ नसैंनी हरिपद प्रेम प्रसादहि पाउरी।।
छाँड़ि पराई निन्दा विंदा गोविंदा गुन गाउरी।
भवसागर तरिवे के काजैं नाहिन आन उपाउरी।।
बेही काजैं या देही की छिन-छिन घटति जु आउरी।
इहिं कलि काल गुपाल भजन बिनु सुख सपनैं नहिं पाउरी।।
हरि बिमुखनि कौ आजु नाजु जल कारी धारि बहाउरी।
रसिक अनन्यनिकी जूठनि पर व्यासहि रुचि उपजाउरी।।१००।।

---

१. विचरण २. तृप्त न होना

राग सारंग

सुनि विनती मेरी तू रसना राधावल्लभ गाइ।
वृथा काल खोवहि जिन सोवहि छिन-भंगुर तन आइ।।
सुनि सुख सदन वदन मेरे तूँ प्रीति प्रसादहि पाइ।
सुनि दुखमोचन मेरे लोचन जुगलकिसोर दिखाइ।।
सुनहि श्रवन रति-भवन किसोरहि गावत नैंकु सुनाइ।
सुनि नासा तूँ चारु चरनपंकजकी बास सुँघाइ।।
सुनि तू सिर पावन चरनोदक रुचि अभिषेक कराइ।
सुनि कर तू मंदिर की सेवा सुख पर प्रीति बढ़ाइ।।
सुनहि चरन तू वृंदावन तैं अनत न पैंड़ चलाइ।
सुनि मन हरषि रास लीला पर संतत रुचि उपजाइ।।
सुनि चित विनती आस तजहि नित दासनि हाथ बिकाइ।
सुनि बुधि सुकरि जु कुंज-महलमें सुख पुंजहि वरषाइ।।
सुनहि लोक करता की इंद्री विषय विकार विहाइ।
सुनि वनिता हरिकी दासी है मेरौ करइ सहाइ।।
सुनि सुत नवकिसोर दास है हरि गुन गाइ गवाइ।
सुनि सिष भव जल बूड़त हो हरि पद सेवहु सिर नाइ।।
इहि कलि काल गुपाल भजन कौ आनि पर्‌यौ है दाइ।
विनती सुनहु व्यासकी सवही हरिबिनु अनत न ठाँइ।।१०१।।

राग देवगन्धार

ऐसौ मन कब करिहौ हरि मेरौ।
कर करुवा कामरि काँधे परि कुंजनि माँझ बसेरौ।।
व्रजवासिनु के टूक भूख में घर घर छाँछ महेरौ।
छुधालगै जब माँगि खाँउगो गनौंन साँझ सवेरौ।।
रास विलास वृत्ति[1] करि पाऊँ मेरैं खूँट न खेरौ[2]।
व्यास विदेही वृंदावन में हरि भक्तन कौ चेरौ।।१०२।।

१. जीविका २. घर - ठिकाना

राग विलावल

यह तनु वृन्दावन जो पावै।
तौ स्वारथ परमारथ मेरौ रसिक अनन्यनि भावै।।
दासिनि की दासी करि हरि मोहि राधा-रवन दिखावै।
यह वासना जु मेरे मनमें और कछू जिनि आवै।।
पुंज पुन्य ते प्रेम भक्ति रति, कुंजविहार बतावै।
सर्वोपरि रसरीति प्रीति कौ वारिधि व्यास बढ़ावै।।१०३।।

राग सारंग

हम कब होहिंगे व्रजवासी।
ठाकुर नंदकिशोर हमारे, ठकुराइनि राधा सी।।
कब मिलि हैं वे सखी सहेली, हरिवंशी हरिदासी।
वंशीवट की शीतल छहियाँ, सुभग नदी जमुना सी।।
जाकी वैभव करत लालसा, कर-मीड़त[1] कमलासी।
इतनी आस व्यासकी पुजवहु वृन्दाविपिन--विलासी।।१०४।।

वृंदावन कबहि बसाइहौ।
कर करुवा हरुवा[2] गुंजन के कटि कोपीन कसाइहौ।।
घर घरनी करनी कुलकी तैं मो मन कबहि नशाइहौ।
नाँक सँकोरि[3] विदोरिवदन[4] इनि विमुखनि कबहि हँसाइहौ।।
सुभग भूमिमें चरन चपल गति वन वन कबहि फिराइहौ।
राधाकृष्ण नाम द्वै अक्षर रसना रसहि रसाइहौ।।
वंशीवट जमुना- तटके सुख मो मन कब विलसाइहौ।
व्यास दास को नील पीत पट कुंजनि दुरि दरसाइहौ।।१०५।।

अब न और कछु करनै रहनै है वृंदावन।
होनौं होइ सो होइ किनि दिन दिन आउ घटति झूठे तन।।

---

१. हाथ मलना २. हार ३. नाक सिकोड़ना ४. मुँह फाड़ना

मिलि हैं हित ललितादिक दासी रास में गावत सुनिमन।
जमुना-पुलिन कुंज-घन वीथिनि विहरत गौर स्याम घन।।
कह सुत संपति गृह दारा काटहु हरि मायाके फंदन।
व्यास आस छाड़हु सबहीकी कृपाकरी राधा नँदनंदन।।१०६।।

हरि मिलि हैं वृंदावन में।
साधु वचन मैं साँचे जाने फूल भई मेरे मनमें।।
विहरत संग देखि अलिगनयुत निविड़ निकुंज भवन में।
नैन सिराइ पाइ गहिवी तब, धीरज रहिहैं कवन में।।
कबहुँक रास विलास प्रगटि हैं सुंदर सुभग पुलिन में।
विविधि विहार अहार सचौ है व्यासदास लोचन में।।१०७।।

राग सारङ्ग

जैये कौंनकैं अब द्वार।
जौ जिय होइ प्रीति काहूकैं, दुख सहिये सौ बार।।
घर घर राजस तामस वाढ्यौ, धन जौवन कौ गार[1]।
काम-विवस है दान देत नीचनि कौं, होत उदार।।
साधु न सूझत बात न बूझत, ये कलिके व्यौहार।
व्यासदास कत भाजि उबरियै, परियै माँझीधार।।१०८।।

मोहि न काहू की परतीति।
कोऊ अपनैं धर्म न साँचौ, कासौं कीजै प्रीति।।
कबहुँक ग्यासि उपासि दिखावत, लै प्रसाद तजि छीति।
है अनन्य शोभा-लगि दिन द्वै, सब सौं करत समीति।।
बातन खैंचत खाल बार-की, लीपत भुस पर भीति[2]।
कुवा परैं बादर चाटत है, धूम धौरहर ईति[3]।।
स्वारथ परमारथ पथ विगस्यौ, उत मग चलत अनीति।
व्यास दिनै चारिक या वनमें, जानि गही रस रीति।।१०९।।

---

१. घमण्ड २. निराधार बात कहना ३. कुए में पड़कर धूयें के दिखाऊ-बादल चाटना (पतित होकर भी उँची-उँची बात करना)

स्याम निवार्‍यौ सबसौं झगरौ।
निज दासनि के दास करे हम, पायौ नाम अचगरौ[१]।।
देवी देवा भूत पितर सबही कौ फार्‍यौ कगरौ[२]।
पावन गुन गावत तन सुधर्‍यौ, तब रसिकन पथ डगरौ।।
मिटि-गई चिन्ता मेरे मनकी, छूटि गयौ भ्रम सगरौ।
चारि पदारथहू तैं न्यारौ, व्यास भक्तिसुख अगरौ।।११०।।

सुधार्‍यौ हरि मेरौ परलोक।
वृंदावन में कीन्हौं दीन्हौं, हरि अपनौ निज ओक[३]।।
माता कोसौ हेत कियौ हरि, जानि आपनौं तोक[४]।
चरन धूरि मेरैं सिर मेली, और सबनि दै रोक।।
ते नर राक्षस, कूकर, गदहा, ऊँट, वृषभ, गज, बोक[५]।
व्यासजु वृंदावन तजि भटकत, ता शिर पनहीं ठोक।।१११।।

मेरौ मन मानत नाचैं गायैं।
एक प्रेम भक्ति कौ फल है, मोहनलाल रिझायैं।।
गदगद स्वर पुलकित जस गावत नैंननि नीर बहायैं।
नट गोपाल कपट नहिं मानत कोटिन स्वाँग बनायैं।।
तजि अभिमान, दीनता जनकी श्याम रहत सचु पायैं।
व्यास स्वपच तारै, कुल बोरै विप्रनि, हरि विसरायैं।।११२।।

गरजत हौं नाहिन नैकौ डर।
और सहाउ करत हैं मेरौ श्रीगोपाल धुरंधर।।
धन गौ-धन मेरैं रस गोरस छाया करत कलपतर।
जाति पाँति वल्लव[६] कुल मेरैं वृंदावन साँचौ घर।।
वन्शीवट जमुनातट खरिक[७] खोरि वीथी जीवन वर।
विहरत व्यास रास में हंस-हंसिनि मानसरोवर।।११३।।

१. सर्वोपरि २. सीमा अथवा कागज ३. स्थान ४. बालक ५. बकरा ६. गोप ७. चारागाह

हरि बिनु और न सुनौं कहौं।
श्रीगुरुकी मैं सपथ करी है, यौं घर-माँझ रहौं।।
काहु के दोष न मन महँ आनौं, सबके मनहिं गहौं।
अन्तर्यामी हरि सबही के, हौं उपहास सहौं।।
जीवनिके चित थिर न रहत हैं, सुख दुख धरत न हौं।
व्यासहि आस स्याम-स्यामा सौं प्रीति कियैं निवहौं।।११४।।

मोहि भरौसौ है हरि ही कौ।
मौकौं शरन न और स्याम बिनु, लागत सब जग फीकौ।।
दीननि की मनसा कौ दाता, परम भाँवतौ जीकौ।
जाके बल कमला सौं तोरी[1], काज भयौ अति नीकौ।।
चारि पदारथ सब सिधि नवनिधि पर, डारत नाँहिन पीकौ।
आन देव सुपनैं नहिं जाचौं, ज्यौं धन जानौ धी-कौ[2]।।
तिनुका कैसैं रोकि सकै पावस परवाह नदी कौ।
हरि अनुरागिनिहिं लगै सराप न, सुर नर जती सती कौ।।
जैसैं मीनहि है बल जल कौ अलि, हंसहि कमल-कली कौ।
व्यासहि आस स्याम स्यामा की, ज्यौं बाल-अधार चुची कौ।।११५।।

मोहि वृंदावन रज सौं काज।
माला, मुद्रा, स्यामबिंदुनी, तिलक हमारौ साज।।
जमुना जल पावन-सु हमारैं, भोजन व्रत कौ नाज।
कुंजकेलि कौतुक नैंननि सुख, राधा-धव कौ राज।।
निसिदिन दुहुँ दिसि सेवा मेवा, ताल पखावज बाज।
निरतत नट-नागर भावत अति, व्यासहि साधु समाज।।११६।।

हमारैं वृंदावन व्यौहार।
संपति गति वृंदावन मेरैं करम धरम करतार।।

---

१. सम्पत्ति से नाता तोड़ लिया २. लड़की का

स्वारथ परमारथ वृंदावन, गथ[1] पथ विधि व्यौपार।
वृंदाविपिन गोत, कुल मेरैं कुल विद्या आचार।।
रूप सील वृंदावन मेरैं गुन गारौ सिंगार।
वर्ष, मास, रितु, पक्ष, ऐन जुग कल्प सबै तिथि वार।।
फागु, दिवारी, परव, पारवन वृंदावन त्यौहार।
सूर सुघर वृंदावन मेरैं, रसिक अनन्य उदार।।
बंधु, सहोदर सुत वृंदावन, राजा राज-भँडार।
श्रीराधा ललितादिक मेरैं जीवनि प्रान अधार।।
सर्वसु व्यासदास कौ वन है वृंदावनहि अभार।।११७।।

(श्री) वृंदावन रस मोहि भावै हो।
ताकी हौं बलि जाउँ सखीरी जो मोहि आनि सुनावै हो।।
वेद पुरान औ भारत भाषैं सो मोहि कछु न सुहावै हो।
मन वच क्रम स्मृतिहुँ कहत हैं मेरे मन नहिं आवै हो।।
कृष्ण कृपा तबहीं भलैं जानौं रसिकअनन्य मिलावै हो।
व्यास दास तेई बड़भागी जिनके जिय यह आवै हो।।११८।।

(श्री)वृंदावन के रूख हमारे मात पिता सुत बंध।
गुरु गोविंद साधु गति मति सुख फल फूलनिकौ गंध।।
इनहि पीठि दै अनत डीठि करै सौ अंधनिमें अंध।
व्यास इनहिं छोड़ैरु छुड़ावै ताकौ परै निकंध[2]।।११९।।

(श्री) वृन्दावन मेरी घर बात।
जाहि पीठिदै दीठि करौ कित जिततितदुखितजीवविललात।।
स्याम सचे सुख-सागर कुंजनि नागर रसिक अनन्य खटात।
सहज माधुरी कौ रस वरषत, हरषत गोरे साँवल गात।।
सुख मुख-चंद सुधा-रस सुनि सुनि श्रवननि आनँद सृष्टि अघात।
नाद विनोद रास रस माते, कोऊ न रंगनि अंग समात।।

१. पूँजी २. विनाश

विवि अरविंद द्रवत मकरंदहि, पियहि जिवावहिं दल पत्र चुचात।
या रस बिनु फीके सब साधन ज्यौं दूलह बिनु व्यास बरात।।१२०।।

रसिक अनन्य हमारी जाति।
कुल देवी राधा,बरसानौ खेरौ व्रजवासिन सौं पाँति।।
गोत-गोपाल,जनेऊ-माला,सिखा सिखंडि,हरि-मंदिर भाल।
हरिगुन नाम वेद धुनि सुनियत, मूँज-पखावज, कुस करताल।।
साखा[1] जमुना, हरिलीला षट्कर्म,प्रसाद प्रान, धन रास।
सेवा विधि, निषेध जड़ संगति, वृत्ति सदा वृंदावन वास।।
स्मृति भागवत, कृष्ण नाम संध्या, तर्पन, गायत्री जाप।
वंशी रिषि, जजमान कल्पतरु, व्यास न देत असीस सराप।।१२१।।

जासौं लोग अधर्म कहत हैं सोई धर्म है मेरौ।
लोक दाहिनैं मारग लाग्यौ हौंव चलत हौं डेरौ[2]।।
द्वै द्वै लोचन सबहीकैं हौं एक आँखिकौ ढेरौ।
और आम हौं कौन कामकौ ज्यौं बन बुरौ वहेरौ[3]।।
लोगन कौ पुर पट्टन खेरौ[4] नाहिन मोहि बसेरौ।
मृगया करि जो काम न आवै मर्कट माँस अहेरौ[5]।।
जिनकी ये सब छोंति करत हैं, तिनहीं कौ हौं चेरौ।
सूजी[6] नरी[7] छुरहड़ी[8] व्यास कैं, मनमें बस्यौ बदेरौ[9]।।१२२।।

हरि पाये मैं लोलकचैया[10]।
जोग जज्ञ तीरथ व्रत संयम कर्म धर्म मेरी करत वलैया।।
वेद पुरान स्मृतिहुँको फल प्यारौ कुँवर कन्हैया।
वृंदावन घर, नंदपिता, जसुदा ताकी है मैया।।
राधा जाकी घरनि तरुनि मनि श्रीदामा ताकौ भैया।
संतत राग भोग जूँठनि कौं व्यासहि करौ बिलैया।।१२३।।

---

१. वैदिक संहिताओं का क्रम भेद २. बाँई ओर ३. बहेड़ा ४. नगर-ग्राम ५. शिकार
६. सूजा हुआ ७. गला ८. रोग ग्रस्त ९. बेर १०. सहज ही

परम पद कहत कौन सौं लोग।
कोउ तहाँ तें गयौ न आयौ ऐसौ सुख संजोग।।
मेरैं मतैं साधु है सोई, जहाँ भक्ति रस भोग।
व्यास करत है आस तहाँकी जहाँ न भय भव रोग।।१२४।।

राग सारङ्ग व भूपाली

तन अबही कौ कामै आयौ।
साधु चरन कौ सँग कियौ, जिन हरिजू को नाम लिवायौ।।
धन्य वदन मेरौ जिनि, रसिकन कौ जूँठौ खायौ।
रसना मेरी धन्य अनन्यनिकौ चरणोदक प्यायौ।।
धन्य सीस मेरौ श्रीराधा-रवन रेनु रस लायौ।
धन्य नैंन मेरे जिनि वृंदावन कौ सुख दिखरायौ।।
धन्य श्रवन मेरे राधारवन विहार सुनायौ।
धन्य चरन मेरे वृंदावन गहि अनत न धायौ।।
धन्य हाथ मेरे जिन कुंजनमें हरिमंदिर छायौ।
धन्य व्यास के श्रीगुरू जिन, सर्वोपरि रंग बतायौ।।१२५।।

राग गौरी व नट

मेरो हरि नागर सौं मन मान्यौं।
अगम निगम पथ छाँड़ि दियौ है भली भई सबरे जग जान्यौं।।
मात पिताकी सीख न मानी, और तजी कुल-कान्यौं।
व्यासदास प्रभुके मिलये बिनु, काहि रुचै भोजन पान्यौं।।१२६।।

लोग बेकाज करत उपहास।
स्याम संग खेलत सचु पायौ काम कियौ कुल नास।।
कठिन हिलगकौ फंद पर्‍यौ अब कैसैं होत निकास।
पियसौं हित हठि ओर निवाह्यौ जौलगि कंठ उसास।।
मोहन मुख सुखकी चाहन में कैसैं मानौं त्रास।
व्यास उदास भये, रस चाहैं तजि नागर को पास।।१२७।।

राग विलावल

साँचौ धन मेरैं दीनदयाल।
जुग जुग लेत देत नहिं निघटै मैं पायौ अजगैवी माल[1]।।
ता बिनु सकल लोककी संपति, पायेंहूँ जु होइ विहाल।
ताकौ नाम रूप गुन गावत निकट न आवै माया काल।।
नवलकिसोर भवबंधन छोरि है रंक सुदामा कियौ निहाल।
निज दासनि दिन पुष्ट करत हरि दुष्टनिकौ कीनौं मत चाल।।
रसिक अनन्य किये जिहिं वटुवा[2] नटुवा है रीझे गोपाल।
सुख, संतोष, मोक्ष, भक्तनि दै विमुखनि दारुन दुख जंजाल।।
राधा मानसरोवर अँग अँग मुक्ता चुनि चुनि जियत मराल।
कामधेनु तजि व्यास किनैं भजि निसि दिन बाढ्यौ छाती साल।।१२८।।

जैसैं सुख मोहन हमहिं दिखावत।
अैसै सुख भुक्ति मुक्तिके भोगी, स्वपनैं हूँ नहिं पावत।।
दरसन दै सब पाप दूरि करि, परसत ताप नसावत।
महाप्रसाद विषाद हरत मन, मोद बढ़त गुन गावत।।
उपजत प्रीति प्रतीति साधुनि, मुख श्रीभागवत सुनावत।
हरिकी कृपा जानियैं तबही, सन्त घरहि जब आवत।।
इहि विधि व्यास अनन्य कहाइ पाइ,सुख अनत न कितहूँ धावत।।१२९।।

गोरी अठताल

ऐसो वृंदावन मोहि सरनैं।
जामहँ श्यामा श्याम बिराजत तीनि काल दोउ तरनैं[3]।।
सदा किसोर विटप मंडल दल, किसलय कुसुमित फरनैं।
अद्‌भुत जोटिहि ओट राखि, सेवत नित चार्‍यौ चरनैं।।
निविड निकुंज मंजु कुंजावलि, चलत पत्र मन-हरनैं।
बिहरत विपिन खंड रति-मंडन, राधाहरि कै सरनैं।।
रसिक अमन्यनि मोहन बनतैं, अनत कहूँ नहि टरनैं।
व्यास धर्म तजि भक्ति गही, ताहू तजि नर्कहि परनैं।।१३०।।

१. अदृश्य सम्पत्ति २. बालक ३. तरुण

राग भूपाली

विसद कदंबनि की कल वाटी।
वृंदावन रस वीथिनि रसमय, रसिकनिकी परिपाटी।।
नवदल-माल तमाल गुच्छ छवि, तोरन रचना ठाटी[१]।
अमित नमित फूलनिकी झूलनि, रमित महल की टाटी[२]।।
अति आवेस सुदेस निलज ह्वै, लाज लाजकी काटी।
स्यामा स्याम केलि बल रोकी, मदन मान की घाटी।।
सरस सुधंग राग रागिनि मिलि, गावत हैं कर नाटी[३]।
तान तरंग सुनतहिं सकल, गुनन की परदा फाटी।।
और सकल साधन नीरस या, रस बिनु सब गुर-माटी।
छाँड़ि प्रपंच नाचि नट कौ सो व्यास संधि यह डाटी[४]।।१३१।।

राग कान्हरो

मन बावरे तूँ हरि पद अटक्यौ।
अब, तैं साँचौ सुख पायौ तब, दुख लगि घर घर भटक्यौ।।
भली करी तैं मोह तोरिकैं, वृंदावन कौं सटक्यौ।
तें देख्यौ कुंजनिमें मोहन, राधा के उर लटक्यौ।।
तेरे वस को, को न विगूच्यौ[५], जनमत मरत न मटक्यौ।
व्यास दासह्वै कैं किनि उवरहु, आसा डाइन सब जग गटक्यौ।।१३२।।

(श्री) राधावल्लभकौ हौं भाँवतौ चेरौ।
राधावल्लभ कहत सुनतही मन न नैम जम केरौ।।
राधावल्लभ वस्तु भूलि हूँ कियौ अनत नहिं फेरौ।
राधावल्लभ व्यासदासकैं सुनहुँ श्रवन दै टेरौ।।१३३।।

राग धनाश्री

अरौसी परोसी हमारे भैय्या बन्धु, भँवर पिक चातिक वक तमचोर[६]।
प्यारे कारे पीरे खग मृग, हितुवा चंद चकोर।।

---

१. समूह २. टटिया ३. अभिनय, नृत्य ४. हस्तगत करना ५. दबोचना ६. कुक्कुट

मोहन ध्वनिहिं सुनावत गावत, मन भावत चितचोर।
विटप वेलि फल फूल हमारे, मूल निकुंज-किसोर।।
सुंदर सुघर सुदिन हैं हमारे, संत केलि निसि भोर।
सुखनि करत दुख हरत हमारे, त्रिविध समीर झकोर।।
तन मन ताप बुझावत जमुना, वारि विहारि हिलोर।
रेनु धेनु आनंदकंद रस, बैन सप्तस्वर घोर।।
रास विलास व्यासकी जीवनि, जोरी जोवन जोर।।१३४।।

राग केदारो

मेरे भाँवते स्यामा स्याम।
रास विलास करत वृंदावन, विविध विनोद ललाम।।
नख सिख अंग लुभारे प्यारे, ज्यौं लोभिनिकौं दाम।
रूप अवधि, गुन जलधि रंगनिधि, सब विधि पूरन काम।।
मंदहँसनि छवि छली अलिहि, बंकविलोकनि वाम।
व्यास विहार निहारति रसिकनि, भूले तन धन धाम।।१३५।।

राग सारङ्ग

अब मैं (श्री) वृंदावन रस पायौ।
(श्री) राधा चरन सरन मन दीनौं, मोहनलाल रिझायौ।।
सूतौ हुतौ विषै मन्दिरमें (श्री), हितगुरू टेरि जगायौ।
अबतौ व्यास विहार विलोकत, सुक, नारद मुनि गायौ।।१३६।।

राग सारङ्ग

जौ त्रिय होइ न हरि की दासी।
कीजै कहा रूप गुन सुंदर, नाँहिन स्याम उपासी।।
तौ दासी गनिका सम जानौ, दुष्ट राँड़ मसवासी[1]।
निसिदिन अपनौं अंजन मंजन, करत विषय की रासी।।

---

१. व्यभिचारिणी

परमारथ स्वपनैं नहिं जानत, अंध बँधी जम-फाँसी।
ताकै संग रंग पति जैहै, तातै भली उदासी।।
साकत नारि जु घरमें राखै, निश्चैं नर्क निवासी।
जिहिं घर साधु न आवत कबहूँ, गुरु गोविंद मिलासी[1]।।
हरिकौ नाम लेत नहिं कबहूँ, याही तें सब नासी।
व्यास दास सोई पै कीजै, मिटै जगतकी हाँसी।।१३७।।

भजहु सुत साँचे स्याम पिताहि।
जाकै शरन जातही मिटि है, दारुन दुखकी डाहि।।
कृपावंत भगवंत सुने मैं, छिन छाँड़ौ जिनि ताहि।
तेरे सकल मनोरथ पूजैं जो मथुरा लौं जाहि।।
वे गोपाल दयाल दीन तू, करिहैं कृपा निवाहि।
और न ठौर अनाथ दुखित कौं, मैं देख्यौ जग चाहि।।
करुना वरुनालय की महिमा, मोपै कही न जाहि।
श्रीव्यासदास के प्रभुकौं सेवत, हारि भई कहु काहि।।१३८।।

राग सारङ्ग

ये दिन अबहीं लगत सुहाये।
जबलगि तरुनी तिरछी चितवनि, फिरत विषैकौं धाये।।
उठि उठि चलत गोष्ठिमें बैठत, जंगी भंगी[2] भाये।
मोतिनमाल कनकआभूषन, रुचि रचि बहुत बनाये।।
तजि कुलवधू औगुननि गहि रहि, लै विस्वनि पहिराये।
मन मन खुसी मसकरिनि ऊपर, माखन दूध खवाये।।
खाटौ-मठा कठिन भक्तनि कौं, भाँड़नि खोवा खाये।
लोक लाजकौं तन मन अर्प्यौ, हरि हित दाम न लाये।।
परमारथ कौं नहीं थेगरी, विमुखन जरकसी पाये।
अदल बदल ह्वै है दिन दस में, जरा जोगरिनि[3] छाये।।
अबतौ चपरि बुढापौ आयौ, रोग दोष तन ताये।।

---

१. मिलाने वाले २. नीच लोग ३. पिशाचनी, रणदेवी

अजहुँ सुमिरि चत्रभुज प्रभु कौ, है है काम कहाये।
व्यास दास आसा चरननि की, विमल विमल जस गाये।।१३९।।

राग सारङ्ग

जिहिं कुल उपज्यौ पूत कपूत।
ताकौ वंश नास है जैहै, जिहिं गिधयौ[1] यमदूत।।
जो सुत पितहिं विरोधै सोइ, है सबहिन कौ मूत।
याकी साखि कंस आहुक[2] की, जिनि हठि कियौ कुसूत।।
जोई भक्त भागवत मानैं, नहिं मानैं सो भूत।
इहिं सँगति तें पति गति विगरे, हूजौ पिता अऊत[3]।।
यह पाखंड प्रपंच छाँड़ियै चोर चिकनियाँ धूत।
व्यासादिकन बतायौ श्री शुक शौनक मान्यौं सूत।।१४०।।

राग सारङ्ग

हरि भक्तन तें समधी प्यारे।
आये संत दूरि बैठारे, फोरत कान हमारे।।
दूर देस ते सारे आये, ते घरमें बैठारे।
उत्तम पलिका सौर[4] सुपेती[5] भोजन विविधि समारे।।
भक्तनि दीजै चून चननि कौ, इनकौं सिलवट न्यारे।
व्यासदास ऐसे विमुखनि जम, गन सदा कढ़ेरत हारे।।१४१।।

राग धनाश्री

बिनु भक्तिहि जे भक्त कहावत।
भीतर कपट निपट सबहीसौं, ऊपर उज्वल है जु दिखावत।।
धन सबही कौ धूँसि ठूँसि कैं, घर भरि सठ सो सुतनि खवावत।
दिन दिन क्रोध विरोध जगत सौं,सो धन बोध हियौ हरि आवत।।

---

१. लुब्ध करना २. एक दैत्य का नाम ३.नि:संतान ४. रजाई ५.कोरी, उत्तम बिछायत

झूँठी बातनि अटकत भटकत, पटकत पाग फिरादनि[१] धावत।
पर्‍यौ रहै पाटीतर निसिदिन, विषइनि घर आयौ जन नहिं भावत।।
कोऊ न लेत जु नाउँ गाउँ में, ठाउँ ठाउँ पनहींजु ठुकरावत।
अैसे कुल में उपजे पाँवर व्यास, घर घर फिरत लजावत।।१४२।।

हमारे घरकी भक्ति घटी।
उपजे नाती पूत वहिर्मुख, विगरी सबै गटी[२]।।
सुत जो भक्त न भयौ तौ वा, पिता की गरी कटी।
भक्त विमुख भये मम गुरू सत्य, सुकल हूँ मीचु[३] ठटी।।
ता सतयुग तें हौं कलियुग, उपज्यौ काम क्रोध कपटी।
माला तिलक दंभकौ मेरें, हरि नाम सीस पटी।।
कृष्ण नचाये तृष्नाकै मैं, कीनी आर भटी[४]।
किहिं कारन हरि व्यासहि दीनी, वृंदावनहिं तटी।।१४३।।

सेइये स्यामा स्याम वृंदावन वासी।
रसिक अनन्य कहाइ अनत रहि, विषै ब्याल वपु लहि सहि हाँसी।।
साधु न बसत असाधु संग महँ, जब तब प्रीतिभंग दुखरासी।
देह गेह संपति सुत दारा, अधर, गण्ड, भग, उरज उपासी।।
पूतनि के हित मूत पियत हैं, भूत विप्र करि कासी।
तिनसौं ममता करि हरि विसरे, जानत मंद न, तिनहिं विसासी[५]।।
स्वारथ परमारथ पथ छूट्यौ, उपजी खाज कोढ़ में खासी।
देह बूड़ बूढ़्यौ वंश व्यासकौ बिसर्‍यौ कुंज-निकुंज निवासी।।१४४।।

विनती सुनिये वैष्णव दासी।
या शरीरमें वसत निरन्तर, नरक व्याधि पित खासी।।
ताहि भुलाइ हरिहि दृढ़ गहियौ, हँसत संग सुखवासी।
वढ़ै सुहाग ताहि मन दीनें, और वराक[६] विसासी।।

---

१. फरियाद, २. गाँठ,परम्परा ३. मृत्यु ४ क्रोध का अभिनय ५. विश्वास-घाती
६. बेचारा, अधम:

ताहि छाँड़ि हित करौ और सौं, गरैं परै जम फाँसी।
दीपक हाथ जु परै कुवा में, जगत करै सब हाँसी।।
सर्वोपरि राधापतिसौं रति, करत अनन्य विलासी।
तिनकी पदरज शरन व्यासकौं, गति वृंदावन वासी।।१४५।।

राग धनाश्री

भक्त न भयौ भक्त कौ पूत।
भक्त होइ साकतकैं ज्यौं, श्रुतदेव सुदामा सूत।।
उग्रसेन कैं कंस, बलिकैं बानासुर जमऊत।
भीषम कैं रुक्म, विभिषन के घर भयौ कपूत।।
सेन, धना, रैदास भयौ जयदेव, कबीर अभूत।
बूड़्यौ वंश कबीर कौ जब भयौ कमाला पूत।।
होइ भक्तकें साकत जानियौ अन्य काहुकौ मूत।
ब्रह्माकैं नारद, व्यासकैं विदुर औ शुक अवधूत।।१४६।।

हरि विमुखनि जननी जिन जावै।
हरिकी भक्ति बिनु कुलहि लजावै।।
हरि बिनु विद्या नरक बतावै।
हरि नाम पढ़ै साधुनि अति भावै।।
हरिबोलि हरिबोलि कहूँ न धावै।
हरि बोले बिनु व्यास मुँह न दिखरावै।।१४७।।

राग केदारो

कबहूँ नीके करि हरि न वखानै।
चरन कमल सुखरासि स्यामके, ते तजि विषयनि हाथ बिकानै।।
दिवस गयौ छल करत मनोरथ, निसि सोवत झूँठौ बररानै।
इहि विधि मनुषा जन्म गँवायौ, श्रीपति कहिधौं कब पहिचानै।।
जिहिं सुमिरत त्रैताप नसत हैं, ते आराधि भवन नहिं आनै।
समै गयौ गोपाल विमुख भयैं, तातें व्यास बहुत पछितानै।।१४८।।

राग गौरी

मरैं वे जिनि मेरे घर गनेस पुजायौ।
जे पदारथ संतनिकै काजें, ते सारे सकतनिने खायौ।।
व्यासदास कन्या पेटहि क्यौंन मरी, अनन्य धर्ममें दाग लगायौ।।१४९।।

जो हौं सत्य सुकलकौ जायौ।
तौ मेरौ पन साँचौ करि हरि, तुम दारुन दुख पायौ।।
मो अनन्य के मन्दिरमें जिनि, थापि गनेस पुजायौ।
तिनको वंश बेगि हरि तोरहु, गाइ, गूह[1] जिनि खायौ।।
जिन जीवत हौं हत्यौ लोभ लगि, तिहिं बेटनिकौ गरौ कटायौ।
तिहि मेरौ अपमान कियौ, जिहिं काल हुँकारि बुलायौ।।
जिनकौ खोज न रहौ कहौं हरि,जिहिं हरि परस छुड़ायौ।
रास-विलास जहाँ होते तहँ, मलियागोरिल गायौ।।
गुरू गोविंदहिं मारि गारि दै, सो पापी घर नायौ।
यह बड़ पाप बेगिही फलिहै हथ जुग बृथा गमायौ।।
बेगम महेरि आपु कों रची, भरुवनि भात खवायौ।
तिहि संगति उपजी यह ममता, बाह्मन बाँधि बहायौ।।
जो मैं कह्यौ सोई हरि कीनौ, यह परचौ जग पायौ।
व्यास जु बवै लुनैगो दुख सुख, यह मत वेद बतायौ।।१५०।।

राग गौरी

साँचे मन्दिर हरि के सन्त।
जिन मँह मोहन सदा विराजत, तिनहिं न छाँड़त अंत।।
जिनि मँह रूचिकर भोग भोगवत, पाँचौ स्वाद बदंत।
जिनि मँह बोलत हँसत कृपाकरि, चितवत नैंन सुपंत।।
अपने मत भागवत सुनावत, रति दै रस वरषंत।
जिनमें बसि संदेह दूरि करि, देहधर्म परयंत।।
जहाँ न सन्त तहाँ न भागवत, भक्त सुसील अनंत।
जहाँ न व्यास तहाँ न रास रस, वृन्दावनकौ मंत।।१५१।।

---

१. गोबर, विष्ठा

भावत हरि प्यारे के प्यारे।
जिनके दरश परस हरि पाये, उघरे भाग हमारे।।
दूर भये दुख दोष हृदयके, कपट कपाट उघारे।
भवसागर बूड़त हमसे, अपराधी बहुत उबारे।।
भूत पितर देई देवासौं, झगरे सकल निवारे।
सुक मुख वचन रचन कहि कोटिक, बिगरे व्यास सुधारे।।१५२।।

राग सारंग

करौ भैया साधुनिही सौं संग।
पति गति जाइ असाधु संगतें, काम करत चित भँग।।
हरितें हरिदासनि की सेवा, परम भक्तिकौ अंग।
जिनके पद तीरथ मय पावन उपजावत रसरंग।।
तिनके वस दशरथ सुत मारयौ, माया कनक कुरंग।
तिनके कहत व्यास प्रभु सुमिर्यौ, सत्वर धनुष निषंग[1]।।१५३।।

साधु सरसीरूह कोसो फूल।
निर्मल सीतल जल हितकारी, काहूकौं न विकूल[2]।।
तिनके वचन पान करि डारत, काम जटा निर्मूल[3]।
जिनकी संगति भक्ति देत हरि, हरत सकल भ्रम-मूल।।
तिनके व्यासदास जो हूजै, तौ न रहै भव सूल।।१५४।।

राग धनाश्री

निरखि हरिदासनि नैंन सिरात।
स्याम हृदैमें जबहीं आवत, मिलत गातसौं गात।।
श्रवन होत सुख भवन दवन दुख, सुनत छबीली बात।
दूरि होत त्रयताप पाप सब, मुख चरनोदक जात।।
बाढ़ति अति रसरीति प्रीति सौं, सन्तप्रसादै खात।
गद्गद् स्वर पुलकित जस गावत, नैननि नीर चुचात।।
तिनके मुख मसि-घसि[4] लपटाऊँ, जिनहिं न सन्त सुहात।
व्यास अनन्य भक्ति बिन जुग जुग, बहुत गये पछितात।।१५५।।

---
१. तरकष २. प्रतिकूल ३. निष्काम बना देते हैं ४. कालिख

हरिदासनि के निकट न आवत, प्रेत-पितर जमदूत।
जोगी भोगी सन्यासी अरू, पंडित मुंडित धूत।।
ग्रह, गन्नेश, सुरेस,शिवा,शिव, डर करि भाजत भूत।
सिधि निधि विधि निषेध हरिनामहि, डरपत रहत कपूत।।
सुख, दुख,पाप,पुन्य, मायामय, ईति[1] भीति आकूत[2]।
सबकी आस त्रास तजि व्यासहि, भावत भक्त सपूत।।१५६।।

राग धनाश्री

भव तरिवेकौं भक्ति उपाउ।
साधुसंग करि हरिहि भजौरे, देहु सवारौ दाउ।।
परिहरि परनिंदा परदारा, तजि भजिये हरि राउ।
सब गुन जैहैं लोभ करतही, श्याम न करत सहाउ।।
काचे घटके जलज्यौं छिनु छिनु, घटति जातिहै आउ।
विषयिनिकी संगति बूड़हुगे, देह जाजरी नाउ[3]।।
हरिकौ नाम धाम सब सुखकौ, जानि कृष्ण गुन गाउ।
व्यास वचन विसरावतही जम-द्वारौ जाइ बसाउ।।१५७।।

राग नट

साँची भक्ति और सब झूठौ।
पाई नारद स्याम कृपातें, खात साधु कौ जूँठौ।।
जिन जिन कौ हरि काजु सँवार्‌यौ, श्रृंगीरिषिसौं रूठौ।
व्यास सुनी कै सुनी शुकदेव, परीक्षित ऊपर तूठौ[4]।।१५८।।

सारंग (जयति ताल)

भक्ति बिनु टेसू[5] को सो राज।
कारागृह दारा हय गय, रहतन गाउँ समाज।।
सूकर कूकर बधिक सूकरी, हम सु नरक कौ साज।
जैसैं रंकहि सुख न होइ, पावत सब पशु वस नाज[6]।।

---

१. बाधा २. अभिप्राय ३. जीर्ण नाव ४. प्रसन्न हुये ५. पलाश ६. अनाज

अैसै कोटि पुरुष पर मिटत न एक जुवतिकी खाज।
झपटत है जग बकहि रात दिन, काल चहूँदिशि बाज।।
अपनैं शरन राखिहैं व्यासहि, हरि सबके सिरताज।।१५९।।

जीवन जनम भक्तिबिनु खोवत।सन्त सुहात न हरि मुख जोवत।।
नख शिख विषै विषी[1] दुख भोवत।द्यौस अघाइ खाइ निसि सोवत।।
पायैं सुख,अन पायें रोवत।हरि जस जल मनमलिन न धोवत।।
परधन परनारी सुख टोवत। कामधेनु तजि कूकरि लोवत।।
छीरहि परिहरि नीर-विलोवत।व्यासहि बरजत दुख गिरि ढोवत।।१६०।।

भगति बिनु अगति जाहुगे बीर।
बेगि चितै हरि चरन शरन रहि, छाँड़िविषय की भीर।।
कामिनि कनक देखि जिन भूलहु, मनमें धरियहु धीर।
साधुन की सेवा करलीजै, जौलगि जियत सरीर।।
मानुष तनु बोहित[2], गुरु करिया[3], हरि अनुकूल समीर।
डरियहु आतमघात तें तरियहु, काल-नदी गंभीर।।
सेन, धना, नाभा, पीपा,रैदास,भक्ति लै गये कबीर।
ताकें व्यास स्याम उर आवत, जाही कै है पर पीर।।१६१।।

भक्तिमें कहा जनेऊ जाति।
सब दूषन भूषन बिन प्राननि पति छू घरनि घिनाति।।
कहा हरे रँग भँाग बिराजत, तुलसीमें न समाति।
सोहति नहीं सुहागिलके सँग, सौति सुरति-इतराति।।
संध्या तरपन गायत्री तजि भजि, माला मंत्र सजाति।
व्यासदासकें सुख सर्वोपरि वेद विदित विख्याति।।१६२।।

साँची प्रीतिके हरि गाहक।
जानराइ सबही हरि जानत, परम प्रेमकौ लाहक[4]।।

---

१. विषधर २. जहाज ३. केवट ४. लायक

कपट निकट न रहै नटनागर, दीननिके दुख दाहक।
व्यास न कोऊ और सहाइक, भक्ति भारकौ बाहक।।१६३।।

राग धनाश्री

सदा हरि भक्तनि कैं आनंद।
गावत महाप्रसादहि पावत, सुख संतोष अमंद।।
जिनकौ मुख निरखत सुख उपजत, दूरि होत दुख द्वंद।
अहंकार ममता मद छूटै, भूतनि केसे छंद[1]।।
राधाबल्लभ के पद पंकज,सकल संपदा कंद।
सेवत रसिकनके भ्रम छूटत, लोक वेदके फंद।।
मुक्त भये अजहूँ गावत शुक, नारद सनक सनंद।
व्यास विराजमान सर्वोपरि जय (श्री) वृंदावनचंद।।१६४।।

सुनियत कबहुँ न भक्त दुखारौ।
पुजये स्याम काम बिनु दामनि, है निष्काम सुखारौ।।
कृष्ण कह्यौ रुक्मिनिसौं, निहकिंचन जन मोहि प्यारौ।
ताकौ मुख कबहूँ नहीं देख्यौं, जाकैं धनकौ गारौ।।
वनवसि पंडुसुतनि नहीं माँग्यौ, लग्यौ न राज लुभारौ।
पाँच वरषके ध्रुव घर छाँड़्यौ मो लगि तजि आहारौ।।
कोटि जातना सहि प्रहलादहि, विषाद न जानत वारौ[2]।
पट लूटत द्रौपदि नहिं मटकी, करी न अनतपुकारौ।।
शरनागत आरत गजपति कौ, मो बिनु को रखवारौ।
जरत गर्भ वैराटसुता[3] महँ, मोहि मन दियौ सवारौ।।
व्रजलगि मैं दावानल पीयौ, विषधर कीनौं न्यारौ।
महाप्रलय के मेह सनेह लगि, गोवर्धन लग्यौ न भारौ।।
भक्तनिकैं अवतर्‌यौ भक्ति लगि, भूखौ रह्यौ उघारौ।
असुरनिसौं जूझउँ भक्तन लगि, भयौ जु पशु चरि[4] चारौ।।

---

१. उत्पात २. बालक ३. उत्तरा ४. पशु चराने वाला

तन मन जीवनि जीव जीविका, सर्वसु भक्त हमारौ।
व्यासदासकी विनती सुनि कोउ, भक्त न मोहि विसारौ।।१६५।।

भक्त बिनु केहि अपमान सह्यौ।
कहा कहा न असाधुनि कीनौं, हरि बल धर्म रह्यौ।।
अधम राज-मद माते लै, सिबिका[1] जड़भरत नह्यौ।
निगड़[2] सहे वसुदेव देवकी, सुत पटकत दुसह सह्यौ।।
हरि ममता प्रहलाद विषाद न, जान्यौ दुख सहदेव दह्यौ।
पट लूटत द्रौपदि नहिं मटकी, हरिकौ शरन चह्यौ।।
मत्त सभा कौरवनि विदुरसौं, कहा कहा न कह्यौ।
शरनागत आरत गजपति की, आपुन चक्र गह्यौ।।
हा, हरि, नाथ पुकारत आरत, और कौन निबह्यौ।
व्यास वचन सुनि मधुकर शाह, भक्ति फल सदा लह्यौ।।१६६।।

राग सारंग

जो सुख होत भक्त घर आयें।
सो सुख होत नही बहु संपति, बाँझहि बेटा जायें।।
जो सुख भक्तनि को चरनोदक, पीवत गात लगायें।
सो सुख स्वपनै हूँ नहिं पैयत, कोटिक तीरथ न्हायें।।
जो सुख भक्तनि कौ मुख देखत, उपजत दुख बिसरायें।
सो सुख होत न कामिहिं कबहूँ, कामिनि उर लपटायें।।
जो सुख होत भक्त वचननि सुनि, नैनन नीर बहायें।
सो सुख कबहुँ न पैयत पितुघर, पूतको पूत खिलायें।।
जो सुख होत मिलत साधुनि कौ, छिन छिन रंग बढायें।
सो सुख होत न रंक व्यास कौं, लंक सुमेरहि पायें।।१६७।।

जूठनि जे न भक्त की खात।
तिनिके मुख सूकर कूकर के, भक्षि अभक्षि पोषत गात।।

---

१. पालकी २. पैर में बाँधने वाली बेड़ी

जिनके वदन सदन नर्कनि के, जे हरि-जननि घिनात।
काम-विवस कामिनि के पीवत, अधरन लार चुचात।।
भोजन पर माँखी मूतति है, ताहू रुचि सौं खात।
भक्तनि कौ चरनोदक अचवत अभिमानी जरिजात।।
स्वपच भक्त कौ भोग ग्रहत हरि, बाँभन ताहि डरात।
वाजदार[1] की पाँति व्याह में, जैंवत विप्र बरात।।
भेंटति सुतनि रैंट मुख लागत, सुख पावत जड़ तात।
अपरस है भक्तनि छ्वै छुतिहा, तैल सचैले न्हात[2]।।
हरिभक्तनि पाछैं आछै डोलत, हरि गंगा अकुलात।
साधु चरन रज माँझ व्याससे, कोटिक पतित समात।।१६८।।

सुने न देखे भक्त भिखारी।
तिनकैं दाम काम कौ लोभ न, जिनकैं कुंजविहारी।।
शुक नारद अरु शिव सनकादिक, ये अनुरागी भारी।
तिनको मत भागवत न समुझै, सबकी बुधि पचिहारी।।
रसना इंद्री दोऊ बैरनि, जिनकी अनी अन्यारी।
करि आहार विहार परस्पर, वैर करत बिभिचारी।।
विषयिनिकी परतीति न हरि कौं, रीति कहत बाजारी।
व्यास आस-सागर में बूड़े, सो वे भक्त विसारी।।१६९।।

माया भक्त न लगतै जाई।
जद्यपि कान्हकुँवर की बहिनी, जसुदा मैया जाई।।
जाके मोहैं तन धन भावै, मनमें नारि पराई।
जसकी हानि होत ताके वस, पशु ज्यौं करत लराई।।
वासौं प्रीति करत हरि बिसरत, सन्त जना सब भाई।
सोई साधु जु ताहि तजै हरि, चरण भजै चितलाई।।
नाचति जगहि नचावति मम सिर, तोरति तार रिसाई।
मोहन विनती सुनहुँ व्यास की, वन में होत हँसाई।।१७०।।

---
१. क्षत्रिय, किसान २. वस्त्र सहित स्नान

राग कान्हरो

सोइ जननी जो भक्तहि जावै। सोइ जनक जो भक्ति सिखावै।।
सोइ गुरु जो साधु सिवावै। सोइ साधु जो विषै छुड़ावै।।
सोइ धर्म जो भर्म नसावै। सोइ धन जो प्रीति बढ़ावै।।
सोइ शूर जो मन न चलावै। सोइ धीर जो चित न डुलावै।।
सोइ मुख जो हरि गुण गावै। सोई व्यास[1] जो रास करावै।।१७१।।

ऐसौ काकौ भाग जु दिन प्रति, स्यामा स्यामहि रुचिसौं गावै।
जाकी चरन सरन है रहियै, तौ वृंदावन स्याम बसावै।।
जूँठनि तौ ताही की खैयै, पाप,ताप, तन दूरि नसावै।
व्यास दास ताही के हूजौ, जाहि भक्ति बिनु और न भावै।।१७२।।

राग सारंग

रसिक अनन्य भक्ति कल भोगि।
जिनकैं केवल राधावल्लभ वृंदावन रसभोगि।।
जो सुख संपति सुपन न देखत, ज्ञान कर्म व्रत योगि।
जिनके सहज सनेही, स्यामा-स्याम सदा संयोगि।।
नीरस पसु परसे नहिं जानै, अभिमानी भव जोगि।
व्यास जु हरि तजि आनजु मानत, है है तुरक दुरोगि[2]।।१७३।।

जाके मन बसै वृंदावन।
सोई रसिक अनन्य धन्य, जाकैं हितराधामोहन।।
ताही नित्य विहार फुरै वन, लीलाकौ अनुकरन।
विषय वासना नाँहिन जाकैं, सुधरे अंतहकरन।।
लोक वेदकौ भेद न जाकैं, श्रीभागवत सो धन।
ताकैं व्यास रास रस वरषत, बहिगई कामिनि कंचन।।१७४।।

अनन्य व्रत खाँडेकीसी धार।
इत-उत डगत जगत हिततेहरि, फेरि न करत सम्हार।।

---

१. महान २. अधम मुसलमान

कहा ग्यासि कुल-कर्मनि छाँड़े, जोलगि विषय विकार।
बिनु प्रेमहि, न प्रसाद नेम तहाँ, हरि न ग्रहत ज्यौंनार।।
कौन काम कीरति बिनु प्रीतिहि, गनिका कैसो जार।
व्यासदासकी पति गति नासै, गयें पराये द्वार।।१७५।।

अनन्यनि कौनकी परवाहि।
कुंज-विहारीकी आसा करि, लै कमरी करवाहि।।
कोटि मुकुति सुख होत गोखरू, जबै गड़ै तरवाहि।
(श्री) वृन्दावनके देखत भाजे नैननिकी हरवाहि[1]।।
जमुना कूल फूल फल फूलत, गोरस की भरवाहि[2]।
निसिदिन स्याम कामवस सेवत, राधाकी घरवाहि[3]।।
रीझत जाहि राजसी जब तब, मारत पाथर वाहि।
इतनी आस व्यास तजि भजिये, गुदी बाँधि सरवाहि।।१७६।।

मरै कि मारै साँचौ सूर।
पीठि न देइ, दीठि कै अरि-दल, सुनत समरके तूर[4]।।
जनम भूमि तजि पतिपद भजई, फिरै न सलिता पूर।
विरद सँभारि गारिके डर रजपूत जु मरहि मंजूर।।
वैसाँदुर[5] डर सती न उलटै, सिरमें मेलि सिंदूर।
ऐसेहिं सीस सहै हथियारहि, मुख मुरै न छाँड़ि गरूर।।
कहत आपनैं मुख हरवाई, दुरै न भख्यौ कपूर।
सर्वोपरि हरि भक्ति व्यासकैं, रवा रती नहिं बूर[6]।।१७७।।

राग रामकली

तेई रसिक अनन्य जानिवै।
जिनकौ विषय-विकार न, हरिसौं रति, तेई साधु मानिवै।।
तिनकी संगति पतित सु उध्दरै, जौ वारक[7] घर आनिवै।
तिनके चरनोदकसौं अपनैं, नख-शिख गातिन सानिवै।।

---

१. तपन २. प्रचुरता ३. महल ४. तुरहि ५. अग्नि ६. कण-रत्ती भर भी असार नहीं
७. एक बार भी

तिनकी पावन जूठनि जैंवत, तबहीं हरि हिय आनियै।
तिनके वचन श्रवन सुनि तिहिं छिन, मन-संदेह भानियै[1]।।
तिनकी जीवनि-धन वृंदावन, जीवत मरत बखानियै।
व्यास राधिका-रवन भवन बिनु, तेई क्यौं पहिचानियै।।१७८।।

जाकी है उपासना, ताहीकी वासना, ताहीकौ नाम, रूपलीला गुन गाइयै।
यहै अनन्य परम धर्म परिपाटी, बृंदावन बसि अनत न जाइयै।
सोई विभिचारी आन कहै, आन करै, ताकौ मुख देखे, दारुन दुख पाइयै।
व्यास होइ उपहास त्रास कियें, आस-अछत[2], कित दास कहाइयै।।१७९।।

राग धनाश्री

स्यामहि उपमा दीजै काकी।
वृंदावन सो घर है जाकौ, राधा-दुलहिन ताकी।।
नारद शुक जयदेव वखानी, अद्‌भुत कीरति जाकी।
जाको वैभव देखत कमला-पतिमें रही न बाकी।।
एहि रस नवधा-भक्ति उबीठी[3] रति भागौत कथा की।
रहन कहन सबहीतें न्यारी, व्यास अनन्य सभाकी।।१८०।।

होइव सोई हरि जो करि है।
तजि चिंता चित चरन-सरन रहि, भावी सकल मिटरिहै।।
करिहै लाज नाम नातेकी, यह विनती मन धरिहै।
दीन-दयाल विरद साँचौ करि, हरि दारुन-दुख हरिहै।।
सिंघिनि-सिंघ बीच वैठ्यौ सुत कैसैं स्यारहि डरिहै।
ऐसैं स्यामा-स्यामै थरुदै[4], डरिकैं कौंन विचरिहै।।
सुनियत शुक मुनि वचन चहूँ युग, हरि दोषनि संघरिहै।
साधुनि कौ अपराध करत मधु(कर)साहि न ताहि गुदरिहै[5]।।१८१।।

हरि सो दाता भयौ न आहि।
सुख करिबेकौं दुख हरिवेकौं, सब जग देख्यौ चाहि।।

---

१. मिटाना २. आशा होते हुये ३. रुचिकर न रही ४. आश्रयदाता ५. पार लगाना

भक्तनके वस हरि है जानत, जस दीनौं जसुदाहि।
जाहि भक्तकी लाज बड़ाई, दीनी द्रुपद-सुताहि।।
जाकै दान मान की महिमा सकत न वेद सराहि।
जिहि चिरवा लै कमला दीनी मंद न माँगत ताहि।।
पतित पिंगलहि आलिंगन दै, रूप दियौ कुब्जाहि।
हरि न पाइयतु व्यास भक्ति बिनु, मिटै न मनकी डाहि।।१८२।

भयौ न है है हरि सो प्यारौ।
सुन्यौ न देख्यौ हरिसो हितुवा, सुत, माता, महतारौ।।
ज्यौं रंकसों प्रीति करत कोऊ, अपनौ काज विगारौ।
गरजत भक्त भरोसैं हरिकैं, ज्यौं पानिप मनि गारौ।।
कामधेनु कल्पद्रुम कौ सेवक अजहि न करौ कुरारौ[1]।
सिंह शरन रहि स्यारहि डरपत, बिनु काजर मुँह कारौ।।
भव-सागर डर श्वान पूँछ गहि, सो को, जो न दुखारौ।
व्यास आस तजि वृंदावन में, दीजै दाव सवारौ।।१८३।।

गोपालै जब भजिये तब नीकौ।
ज्योतिष निगम, पुरान, सबै ठग, पढ़ै, ज्याँनु[2] है जीकौ।।
भद्रा भली, भरनि[3] भव हरनी, चलत मेघ अरु छीकौ[4]।
व्यासदास धन धर्म विचारै, सो प्रेमी कौड़ी कौ।।१८४।।

बहिनी बेटा हरिकौ न तजियै।
जा संगति तै पति गति नासै, ता संगति तैं लजियै।।
मात पिता भैया भामिनि कुल, सखी सखा नहिं भजियै।
साधुनिके पथ चलिये, ऊवट[5] चलै सु वेगि वरजियै।।
गुरुहि न आवै गारि बातनकी, सो सामग्री सजियै।
व्यास विमुख बाभन परिहरियै, सुपच भक्तकी कूखि उपजियै।।१८५।।

---

१. बकरी की आशा नहीं करता २. हानि ३. एक नक्षत्र ४. छींक ५. ऊबड़ खाबड़

राग नट

कोइ रसिक श्याम रस पीवैगौ। पीवैगौ सोई जीवैगौ।।
पीवैगौ सोई फूलैगौ। तन मन देखि न भूलैगौ।।
पीवैगौ सोई माचैगौ। साधु संग मिलि राचैगौ।।
चाखैगौ सोई जानैगौ। कहनै कौन पत्यानैगौ[१]।।
व्यासदास जिय भावैगौ। तब अंग खवासी पावैगो।।१८६।।

राग केदारो

(श्री) कृष्ण कृपा तें सब बनि आवै।
सतगुरु मिलै साधुकी संगति, सदा असाधु न भावै।।
चित इंद्रीजित, वितु न रुचै मन, निजु जनहीं कौं धावै।
लोचन दुखमोचन मुख देखत, रसना हरि गुन गावै।।
दरस न भक्ति भागवत तीस-सात जगदीश बतावै।
रासविलास माधुरी राधा, वृंदाविपिन वसावै।।
सो जु कहा उपजै गुन हरि भजि, दोष दुखनि विसरावै।
दोष-रहित, गुन-रहित, व्यास अंधेकी दई चरावै[२]।।१८७।।

सारंग व विलावल

सपनौं सो धन अपनौं स्याम।
आदि अंत तासौं न विछुरिवौ, परत कालसौं काम।।
तन, धन, सुत, दारा कारागृह, तजौ भजौ लै नाम।
देखि देखि फूलहु जिनि भूलहु जग नट कैसो आम।।
जैसें वछरा के धोखे सौं गैया चाटत चाम।
ऐसैं व्यास आस सब झूँठी, साँचौ हरि अभिराम।।१८८।।

राग सारंग

हरि बिनु सब शोभा शोभा सी।
अंजन मंजन पति बिनु सीठौ ज्यौं मटकै मसवासी[३]।।

---

१. विश्वास करेगा २. (मुहाबरा) जिसका कोई सहायक नहीं होता उसकी सहायता श्रीकृष्ण करते हैं ३. चपल स्त्री

अँधरीहि काजर नकटिहि वेसरि टौंटिहिं पहुँची हाँसी।
हीज[१] पुरुष, त्रिया बांझ वृथा मुंडली[२] लटकन मति नासी।।
कुढ़ियहि मुँदरी, बूँचिहि कुण्डल, केस बिना आकासी[३]।
दासी लीन कु-लीन कामिनी, कंचन तन सन्यासी।।
स्यारहि राज नरनिमें सोहै, जैसें राज विलासी।
व्यास स्याम बिनु सब असमंजस, जैसें धनिक विनासी।।१८९।।

(श्री) वृन्दावनमें मंजुल मरिबौ।
जीवनमुक्त सबै व्रजवासी, पद-रजसौं हित करिबौ।।
जहाँ स्याम बछरा है गायन, चौषि[४] तृननिकौ चरिवौ।
हरि बालक गोपिनि पय पीवत, हरि आँकौ-भरि चलिवौ।।
सात रातदिन इंद्र रिसानौ, गोवर्द्धन कर धरिवौ।
प्रलय मेघ मघवाहि विमद करि, कहि सबसौं नहिं डरिबौ।।
अघ, वक, वकीविनासि, रासरचि, सुख सागरमें तरिवौ।
कुंज-भवन रति पुंज चयनि करि, राधाके वस परिवौ।।
अैसे प्रभुहि पीठि दै लोभ रति, माया जीवन जरिवौ।
श्रीगुरु सुकल प्रताप व्यास रस, प्रेमसिंधु उर भरिवौ।।१९०।।

(श्री) वृन्दावन साँचौ है जाकैं।
विषई विषै भिखारी दाता, निकट न आवै ताकैं।।
बसनी[५] बसनहिं गिरत न जानैं, जीव कोऊ मद छाकैं।
अैसैही रससिंधु मगन भयौ, रहै अविद्या काकैं।।
कुंज-केलि अनभौ है जाके, सो चलै न पथ अबलाकैं।
जैसें निर्धनहूँ जु न जैहै, बोलैंहूँ गनिका कैं।।
जैसैं सिंघनि के सुत भूँखे, जाचत नहि विलवाकैं।
काम स्याम सौं जिनहिं ते, सुनै न जात रमाकैं।।

---

१. हीजड़ा २. विधवा स्त्री ३. कंघी ४. दुग्ध पान करते है ५. धन रखने की थैली

ज्यौं अनयासा संपति आवै, व्याहैं राज सुताकैं।
ऐसैहिं व्यास भक्ति पाये सुख, द्रवत हैं स्याम कृपाकैं।।१९१।।

गौरी व धनाश्री

वृंदावन साचौ धन भैया।
कनककूट[1] कोटिक लगि तजिये भजिये कुँवर कन्हैया।।
जहाँ श्रीराधा-चरन रैंनुकी, कमला लेति बलैया।
तिनि सँग गोपी नाँचति गावति, मोहन बेंनु बजैया।।
कामधेनुकौ छीरसिंधु तजि, भजहुँ नंदकी गैया।
चास्यौं मुक्ति कहा लै करियै, जहाँ जसोदा मैया।।
अद्‌भुत लीला अद्‌भुत वैभव, साँचौ सुकदेव कहैया।
आरत व्यास पुकारत वनमें, थोरेई लोग सुनैया।।१९२।।

सारंग व धनाश्री

श्रीवृन्दावन अनन्यनि की गति।
अनत रहत दुख सहत सुखनि लगि, जाइ हठीले की पति[2]।।
शुक वरजे सु करत अभिमानी, विषयन संग गई मति।
कृष्ण-कृपा बिनु तृष्ना बाढ़ी, कनक कामिनी सौं रति।।
सीता राम सरीखे विछुरे माया वर्त्तमान अति।
अजहूँ माया मोह न छाँड़त, व्यास मीच[3] सिर गाजति।।१९३।।

राग धनाश्री

हरि बिनु छिन न कहूँ सुख पायौ।
दुख, सुख, सम्पति विपति भोगवत, स्वर्ग नर्क फिरि आयौ।।
लोक चतुर्दस बहुविधि भटक्यौ, स्वारथ लगि मैं हरि विसरायौ।
कोटि गाय बाँह्मन मारे कौ, ताप पाप उपजायौ।।
कबहुँक श्वपच सरीर धस्यौ मैं, चोरी बल उदर बढ़ायौ।
कबहुँक विद्या-वाद स्वाद लगि, बाँह्मन ह्वै पुजवायौ।।

---

[1]. स्वर्ण पर्वत [2]. हठी की लाज चली जाती है [3]. मृत्यु

कबहुँक रंक निसंक भयौ घर, घर फिरि जूँठौ खायौ।
कबहुँक सिंहासन पर बैठ्यौ, छत्र चौंर ढरवायौ।।
कबहुँक कंचन कामिनि लगि रन दूलह विरद बुलायौ।
कबहुँक विषयी विषयिनि कारन, घर तजि मूँड़ मुड़ायौ।।
अैसैं नाना धर्म कर्म करि, जनम जनम डहकायौ[1]।
अबकैं रसिक अनन्यनि व्यासहि, राधा-रवन दिखायौ।।१९४।।

राग सारंग

दुख सागर कौ वार न पार।
जुग जुग जीव थाह नहिं पावत, बूड़त सिर धरि भार।।
तृष्ना तरल वयारि झकोरति, लोभ-लहरि न उतार।
काम क्रोध भर मीन मगर उर, नाहिंन कहूँ उबार।।
श्रीगुरु चरन नाम नौका नहिं, हरि-करिया न विचार।
व्यास भक्ति बिनु आस जाइ नहिं, सत सङ्गति करि वार।।१९५।।

जरतु जग अपनैं हीं अभिमान।
लोभ लहरि तैं भागि उबरियै, रहियै हरिकी आन।।
एकनि विद्या धन कुलकौ मद, एक गुनी गुन गान।
एक रहत जोवन मद-माते, एक जती तप दान।।
भारत रामायन मूसल[2] सुनि, अजहूँ न जागे कान।
व्यास वायसहि वेगि उड़ावहु, हरिकी-कृपा-कमान।।१९६।।

घटत न अजहूँ देह कौ धर्म।
झूँठ नहि होत वेद वानी हरि, फटत नामकौ भर्म।।
साधन विविध कुठार धार हूँ, कठिन कटत नहिं कर्म।
पंडित मूरख कोऊ न जानत, यह संसै कौ मर्म।।
कहत भागवत साधु संग तैं, जाय जगत की सर्म।
व्यास तबहि असमंजस मिटि है, जब ह्वै है मन नर्म।।१९७।।

---

१. ठगा गया २. उदघोषणा

सबै सुख, विमुखनि कौ दुख रूप।
जहाँ न रसिक अनन्य सेईयतु, वृंदावन के भूप।।
जहाँ न जीव-दया न दीनता, भाव-भक्ति न अनूप।
कनक कूट कोटिक लगि तजि, भजि हरिमंदिर जु अजूप[१]।।
व्यास वचन सुनि राज परीछत, विसराये गृह कूप।।१९८।।

तो लगि रवनी लगत रवानी।
जब लगि मोहन मुख छवि वारक, उर अन्तर नहिं आनी।।
तौ लगि श्रवननि लगत सुहाई और पुरान कहानी।
जौ लगि साधुनि पर वारकहूँ सुनी न सुक मुख वानी।।
तब लगि जोग जज्ञ व्रत तीरथ, भावत पावक पानी।
जब लगि गुरु उपदेस न जान्यौं, प्रेम भक्ति हूँ वानी।।
जब लगि व्यास निरास दास है भजी नहीं रजधानी।।१९९।।

राग नट

मनहि नचावै विषय वासना क्यौं हिरदै हरि आवै।
हौं असमर्थ अनाथ, मारियतु पाँचनि को समुझावै।।
सखा संगके अंगु करत नहिं, सखी न मोहिं बचावै।
लहुरौ[२] भैया करि विरोध, औरनि पै मोहि हँसावै।।
विनु अग्निहिं घरु लगत जु लायौ[३], सो कोऊ न बुझावै।
भीतर भागि दुरयौ बाहिर को भक्त न सोधौ[४] पावै।।
तोरौ पानौं सुत, दारा, हँसि वसत परौसी गावै।
एकै आस व्यास मनहि समुझत, खात पिवत वहकावै।।२००।।

सारंग व धनाश्री

(श्री) वृन्दावन न तजै अधिकारी।
जाकै मन परतीति रीति नहिं, ताकै वस न विहारी।।

---

१. शीतल २. छोटा ३. आग ४. सन्धान, अता-पता

कैसैं जारहि भजिहै, तजिहै भर्तारहि कुलनारी।
भागी भक्ति लोभकैं आगैं, मंत्री डोम[१] भिखारी।।
को को भयौ न पर-घर हरुवौ, तात लजी महतारी।
मालहि पहरि गुपालहि छाँड़त, गुरुहिं दिवावत गारी।।
ज्यौं गजकुंभ विदारहिं सिंह, बालक झपटै ज्यौं ल्यारी[२]।
ऐसैं व्यास सूर कायर की, संगति हरिकी न्यारी।।२०१।।

हरि बिनु को अपनौं संसार।
माया मोह बँध्यौ जग बूड़त, काल नदी की धार।।
जैसैं संघट होत नाउ में, रहत न पैले पार।
सुत संपति दारा सौं ऐसैं, विछुरत लगै न वार।।
जैसैं स्वपनै रंक पाइ निधि, औंड़ै[३] धरि भंडार।
अैसैं छिन भँगुर देही कौं, गरवतु कहा गँवार।।
जैसैं अंध आँधरे टेकत गनत न खार पनार[४]।
अैसैं व्यास बहुत उपदेसे, सुनि सुनि गये-न पार।।२०२।।

देव गन्धार

गावत मन दीजै गोपालहि।
नाँचत हरि पर चित दीजै तौ, प्रीति बढ़ै प्रतिपालहि।।
बिनु अनुरागहि राग न मीठौ, सीठौ[५] बिनु गुन मालहि[६]।
सब साधन सीठे धन कारन, कत कूटत है गालहि।।
गद्‌गद्‌ स्वर पुलकति अँसुवनि बिनु, भक्ति न भावत लालहि।
अैसौ काकौ भाग जु दिनप्रति, नाँचत गावत पावत कालहि।।
मुँह गावत गोपालहि कपटी, मनमें धरि भूपालहि।
हाथी को सो स्वाँग धरत पुनि, चलत स्वाँन की चालहि।।
घर घर भटकि भटकि धन कारन, पहिर लजावत मालहि।
पथरा गरैं बाँधि किनि बूड़हि, जब छाँड़त नँदलालहि।।

१. एक छोटी जाति २. भेड़िया ३. अत्यधिक ४. गड्ढा-नाली ५. नीरस ६. धागे के बिना माला

अधम प्रतिष्ठा विष्ठा लगि तजि, वसि वृंदाविपिन रसालहि।
आसा पासि बँधि क्यौं छूटै, व्यास विसारि कृपालहि।।२०३।।

राग सारंग

सो न मिल्यौ जो कबहुँ न बिछुरै।
हरि कौ साथ सु ओर निवाहू[1], जो मन माँझ फुरै।।
जैसैं पथरहि भिदतु न पानी,परसत फटक घुरै[2]।
अैसैं जड़ सचेत के चित सौं, साँचौ हित न जुरै।।
अनी[3], आगिमें परत धनी[4] लगि, सूर सती न मुरै।
गिरवर तरुवर सिंधु भेदि कैं, फिरि न नदी बहुरै।।
ठग, बग, डिम्भी[5] लोगनि की गति, आदि अंत न दुरै।
दया दीनता दास-भाव बिनु व्यास न स्याम ढुरै।।२०४।।

गाइलै गोपालै दिन चारि।
काल भुजंग लोक बलीतैं, हरिके सरन उबारि।।
लोभ कपट तजि साधु चरन भजि, लीजै जनम सुधारि।
दया दीनता दास-भावतैं, गुरुहि न आवै गारि।।
रसना इन्द्री अनी अन्यारी, भेदति तनहिं सम्हारि।
साधु चरन रज की कवची[6] करि, कबहु न आवत हारि।।
कृष्ण कृपा बिनु तृष्ना वाढ़ी, गृह, वन,विषै उजारि।
व्यास अकाज करै जिनि अपनौं,प्यारौ स्याम विसारि।।२०५।।

नियंता पतितन कौ हरि नाम।
उचरत ही मुँह कुचरत कलिकौ, खोज[7] न राखत स्याम।।
चोर मध्य या मित्र ब्रह्म गुरू दारा सुत आराम।
अघवंतन[8] हरि बोलत हीं, भगवंत दियौ निज धाम।।
कौन अजामिलिहूँ तैं पापी, जाकौं जम हँसि कियौ प्रनाम।
हरि-पद-पंकज छत्र छाँह बिनु मिटै न दुख रवि घाम।।
वृजवसि व्यास बबूर किये हरि, और भक्त कुल आम।।२०६।।

---

१. अन्त तक निर्वाह करने वाला २. तत्क्षण बह जाता है ३. सैना ४. स्वामी ५. पाखण्डी
६. कवच ७. अवशेष ८. पापी

जौ पे सबहिनि भक्ति सुहाती।
तौ विद्या, विधि,वरन,धर्मकी, जाति रसातल जाती।।
होते जौ न वहिर्मुख कलियुग, आनँद सृष्टि अघाती।
होती सहज समीति सबनि मैं, प्रीति न कहूँ समाती।।
जौ भागवत रीति गुरू चलते, तौ कति भक्ति बिकाती।
जौ साधुन कौ संग न तजते, तौ कत जरती छाती।।
जौ मंदिर करि हरि कौ भजते, तौ कत लिखते पाती।
यथालाभ सन्तोष रहतही, मिलते स्याम सँगाती।।
कृष्ण कृपा न होइ सबहिनि पै, माया जाहि डराती।
व्यासदास भागि किन उबरौ, आगि ते आसा ताती।।२०७।।

सोई साधु जौ हरि गुण गाया। सोई साधु जो छाँड़ै माया।।
माया कौ फल गृह, सुत, जाया। दामिनि जैसी चमकिनि काया।।
यह संसार धूरि की छाया। स्वपनैं हरिसौं मन न लगाया।।
जार भर्तार कियौ दुख पाया। व्यास सुहागिल श्याम रिझाया।।२०८।।

राग केदारो

नाँचत गावत हरि सुख पावत।
नाँचि गाइ लीजै दिन द्वै, पुनि कठिन काल दिन आवत।।
नाँचत, नाऊ,भाट,जुलाहौ, छीपा नीकै गावत।
पीपा अरु रैदास विप्र जयदेव सुभलैं रिझावत।।
नाँचत सनक सनन्दन अरु शुक नारद,सुनि सचु पावत।
नाँचत गन गन्धर्व देवता, व्यासहि कान्ह जगावत।।२०९।।

राग धनाश्री

जैसैं प्यारे लागत दाम।
अैसैं रसिक अनन्यन लागत,प्यारे स्यामा स्याम।।
काया, जाया सौं रति बाढ़ी, कौंन कहै निष्काम।
राग तान तालहि मन दीनौं, लेई-न हरि गुन ग्राम।।
पाप हरन शुचि करन व्यास पतितन कौ है हरिनाम।।२१०।।

साँचौई गोपाल गोपाल रढ़िवौ।
रूप सील गुन कौंन कामकौ, हरिकी भक्ति बिनु पढ़िवौ।।
जोग जज्ञ जप तप संजम व्रत, कलई कौ सो मढ़िवौ।
नाम-कुठार विना को काटै, पाप वृंदकौ वढिवौ।।
जैसैं अन्न बिना तुष कूटत, वारूमें तेल न कढ़िवौ।
अैसैंहि कर्म धर्म सब हरि बिनु, बिनु वैसाँदर दढिवौ[1]।।
जैसैं परदारा सौं रति करि, पति बिनु रासभ[2] चढिवौ।
अैसैंहि व्यास निरास भये बिनु, कह बातनिकौ गढिवौ।।२११।।

राग कान्हरो

हरि कहि लेहु कछू नहिं रैहै।
सपनौं सो जोवन धन अपनौं, सुत संपति दारा घर जैहै।।
कोटिक कर्म धरम कौ करता, एक भक्ति बिनु गति नहिं पैहै।
संतत सिंह सरन रहि को अब, कोटि स्वान परि धौं कहा लैहै।।
कुल कन्या भरतारहि तजि, गनिका कैसैं पतिहि रिझैहै।
कदली निकट वारिकरि को जड़, अंड[3] बबूर धतूरै बैहै।।
हीरा हेम निगड़[4] दुखदाता, चंदन फूल भार को सैहै।
प्यासे मरत सुधा-सिन्धु हित, कौन अन्ध विष घोर अँचैहै।।
सुरसरि परिहरि कौंन पातकी, पावन छोड़ सुरा जल न्हैहै।
व्यास उपासिक हरिकौ है कैं, देव पितर भूतनि को गैहै।।२१२।।

राग सारंग

जो तू माला तिलक धरै।
तो या तन मन व्रतकी लज्जा, ओर निवाह करै।।
करि बहु भाँति भरोसौ हरिकौ, भव सागर उतरै।
मनसा वाचा और कर्मना, तृन करि गनतु धरै।।
सती न फिरत घाट ऊपर तैं सिर सिंदूर परै।
व्यास दासकौ कुंज-विहारी प्रीति न कहुँ विसरै।।२१३।।

१. बिना आग के जलना २. निर्लज्ज होकर गधे पर चढ़ना ३. अरण्डी ४. जंजीर

छिनु छिनु ग्रसत तनहिं मन काल।
अजहूँ चेति चरन गहि हरिके, आयौ है कलिकाल।।
लाज न कीनी राज-सभा महँ, कत कूटत है गाल।
पेट न भरत करतहूँ चेटक, लोभ पस्यौ मति चाल।।
घर घर भटक्यौ नटके कपि ज्यौं, बहुत भयौ बे-हाल।
बिनु हरि-दास निहाल भयौ को, विमुख भये न निहाल।।
पुत्र, कलत्र, सौं नेह विरस, ज्यौं, गैया चाटत छाल।
दीननिहीं हरि राखि लेत ज्यौं, मीननि सीतल ताल।।
गीध मृगनहीं तकि तकि मारत, जैसे कालहि काल।
अैसे कपट प्रीतिकी संगति सदाँ वढ़ै उर साल।।
मन दुख आँखिनि दुख, श्रवननि दुख सुखदै हरै कृपाल।
व्यासदासकी विनती सुनि पुनि कृपा करी नँदलाल।।२१४।।

भक्ति बिनु मानुष तन खोवै, क्यौं सोवै उठि जागुरे।
विषय अग्नि पर भागि उबरियै, साधुनि सौं कीजै अनुरागुरे।।
देह गेह दारा सुख संपति, ज्यौं कोकिल सुत कागुरे।
लाज बड़ाई गुन चतुराई, जैसो फोकट फागुरे।।
माया मोह जियत नहिं छूटै, जैसो दुमुहाँ नागुरे।
लोक बड़ाई कौ सुख झूँठौ, वाजीगर कैसो बागुरे।।
हरि बिनु क्यौं तरिहै दुख सागर, ज्यौं धन निधन सुहागुरे।
आयु घटत जानत नहिं जैसैं, नदी तीर बड़ बागुरे।।
जैसैं मृग अपनौं हित जानत, सुनत वधिक कौ रागुरे।
अैसैं व्यास वचन बिनु मानैं मिटै, न मनकौ दागुरे।।२१५।।

काहे भजन करत सकुचात।
परधन परदारा तन चितवत, तब कहि क्यौं न लजात।।
मिथ्या वाद-विवाद बकन कौं, फूल्यौ फिरत कुजात[1]।
फूट्यौ कर्म भरम हिय बाढ्यौ, तजि अमृत विष खात।।

१. पतित

डहक्यौ[1] आइ पाइ भल अवसर, भक्ति विमुख भयौ गात।
सहज सिराय गई मायामें, बहुत गये पछतात।।
पाछैं गई सु जान दैरे, अब सुनि लै यह बात।
हरि गुन गाइ नाँचि निर्भय ह्वै, व्यास लखी यह घात।।२१६।।

राग गौरी

(श्री) राधावल्लभ के गुन गाइ लेहु।
तजहु असाधु संग भजि साधुनि, हरिसौं हित उपजाइ लेहु।।
वृंदावन निरुपाधि राधिकारवन सौं प्रीति बढ़ाइ लेहु।
नव निकुंज सुख पुंजनि वरषत, नैंननि सुख दिखराइ लेहु।।
पावन पुलिन रासमंडल में, मन दै तनहि नचाइ लेहु।
गद्गद् स्वर पुलकित कोमल चित, आनँद नीर बहाइ लेहु।।
विमद विमत्सर रसिक अनन्य, चरन रज सिर लपटाइ लेहु।
इहिं विधि महाप्रसादहि पावत, सहचरि व्यास कहाइ लेहु।।२१७।।

राग सारंग

मूँड़ मुड़ाये की लाज निवहिये।
माला तिलक स्वाँग धरि हरिकौ, मारि गारि सबहिकी सहिये।।
विधि व्यौपार जारसो कलिजुग, हरि भर्त्तार गाढ़ौ करि गहिये।
अनन्य व्रत धरि सत जिनि छाँड़हु, विमद संतनि की संगति रहिये।।
अग्नि खाहु विषु पिवहु परौ जल, विषयिनिकौ मुख भूलि न चहिये।
व्यास आस करि राधा-धवकी श्रीवृन्दावन कहँ वेगि उमहिये।।२१८।।

कहा कहा नहिं सहत शरीर।
श्याम सरन बिनु कर्म सहाइ न, जनम मरन की पीर।।
करुनावंत साधु संगति बिनु, मनहिं देइ को धीर।
भक्ति, भागवत बिनु को मेटै, सुखदै दुख की भीर।।

---

१. ठगा जाना या खो देना

बिनु अपराध चहूँ दिसि वरषत, पिसुन[1] वचन अति तीर।
कृष्ण कृपा कवची तैं उबरै, सोच बढ़ी उर पीर।।
नामा, सैंन, धना, रैदास दीनता फुरी कबीर।
तिनकी बात सुनत श्रवननि, सुख वरषत नैंननि नीर।।
चेतहु भैया वेगि कलि बाढ़ी काल नदी गंभीर।
व्यास वचन बलि वृंदावन वसि सेवहु कुंजकुटीर।।२१९।।

मनदै जुगलकिशोरहि गाउ।
सेवत राधा सँग वृंदावन, वारक[2] देखन आउ।।
या सुख तैं टरिये वा सुख लगि, करिये वेगि उपाउ।
अपनैं कर कुठार गहि रहि कत, मारत अपनैं पाउ।।
विषै भोग कहँ, विषयनि सेवत, यह सयान वहि जाउ।
व्यास आस तजि छिन भँगुर की, देहु सवारौ दाउ।।२२०।।

जौ पै (श्री) वृंदावन धन भावै।
तौ कत स्वारथ परमारथ लगि मूढ़ मनहि दौरावै।।
नव निधि अष्ट सिधि वनवैभव, स्वपनैं अंत न पावै।
घर घर भटकत मुक्ति वापुरी, कमलहिं को बतरावै।।
महा पतित पावन जमुना जल, भूतल ताप नसावै।
नव निकुंज रति पुंजनि वरषत हरषि राधे गुन गावै।।
सदा अधीन रहत नित मोहन मन लै प्रियहि रिझावै।
व्यास स्वामिनी रास-मंडलमें चुटकिनि पियहिं नचावै।।२२१।।

राग कान्हरो

पतित पवित्र किये हरि नागर।
एक नाम के लेत सबनि के, सूषि गये अघ सागर।।
अधम अजामिलहुँ कौं उघरी, मुक्ति पौरिकी आगर[3]।
हरि हरि कहत कौंन पापी के, पाप लिखे जम कागर।।

---

१. चुगलखोर २. एक बार ३. मुक्ति ड्यौढ़ी की खान खुल गई

गौरस्याम कौ शरन तक्यौ जिनि, तिनकी कौंन बराबर।
ऐसैं व्यास अनन्य सभामें, और न होत उजागर।।२२२।।

राग सारंग

लगै जौ वृन्दावन कौ रंग।
सब संदेह देहके जैहैं, अरु विषयनि कौ संग।।
जैसैं बाजहि नाजु लगतहीं, करत है उदर मृदंग[1]।
ऐसैं सहजमाधुरी परसत, उपजत गुनकौ अंग।।
जैसैं कामी कामिनि देखत, वाढ़त दुसह अनंग।
ऐसैंहिं व्यास विहार विलोकत, साधन सौं चित भंग।।२२३।।

दुविधा तब जैहै या मनकी।
निर्भय ह्वै कैं जब सेवहुगे, रज श्रीवृंदावन की।।
कामरि लै करवा जब लैहै, शीतल छाँह कुंजन की।
अति उदार लीला गावहुगे, मोहन-स्याम सुधन की।।
इन पाँइनि परिकरमा दैहै, मथुरा गोवर्द्धन की।
व्यास दास जब टेक पकरिहै ऐसे पावन पनकी।।२२४।।

सत छाँड़े हूँ तन जैहै ।
पाकी छाँड़ि गहत है काची, फिरि पाछै पछितैहै।।
हरिके चरन सरन बिनु जुग जुग, सिर अप-कीरति रैहै।
ताहीकौ तनु तनु कौ सोई जो,हरिही सौं हित करि लैहै।।
जाहीकौ धर्म, धर्मकौ जोई, सो हरिकी ओर निवैहै।
जोई गनिकाकौ सुत सोई, बिना करै अब कैहै।।
ताहीकौ कर्म कर्मकौ सोई, जो असि-धारा व्रत गैहै।
भक्ति भाव धरि भजै स्यामकौं, भली बुरी सब सैहै।।
व्यास अनन्य सभा सेवत हूँ, काल व्यालको खैहै।।२२५।।

---

१. जैसे मृदंग वाद्यपर आटा लगाते ही वह बजता है।

राग नट

सुखमें हरि बिसरावै कैसैं, दुखमें हरि कहि आवै।
दुख सुख परै जु हरिहि न छाँड़ै, ताहि न हरि बिसरावै।।
दुख सुख जब लगि, भक्ति न तौ लगि यह भागौत बतावै।
दुख सुख झूँठौ संतत साँचौ हरि हरि-जन मुहिं भावै।।
सुख दुख छूटें शुक, सनकादिक, नारद हरि गुन गावै।
विधि निषेध गुन दोष दुख सुख, विषयनि बाँधि नचावै।।
सुख दुख गयें जु सुख उपजत है, तापै स्याम बँधावै।
हरिवंशी हरिदासी सेवत व्यास तहाँ बन पावै।।२२६।।

राग धनाश्री

गाइ गुन तनहि न दीजै ठालि[१]।
साधुनि की सेवा करि लीजै, कौनैं देखी कालि।।
काल वधिक तकि मारत विमुखनि, विषै विसारी भालि[२]।
हरिहीं क्यौंन सम्हारत अजहूँ, गुरु वचननि प्रतिपालि।।
छाँड़हु आस त्राश सब(हीं) की जग उपहाँस पेटहि घालि[३]।
अैसैंहीं दुख सहिये जैसैं जर, खोदै जीवत आलि[४]।।
हरि करिहै हित सुत कौं जैसैं, गैया आवत थालि[५]।
हाथी कौ धरि स्वाँग व्यास यह, तजि कूकर की चालि।।२२७।।

सारंग व धनाश्री

सोई घरी, सोई दिन, सोई पल, सोई छिन
जबहि मिलत मेरे प्यारे के प्यारे।
सोई घर घरनी, सोई सुत, गुरु हित
जिनके रसिक नैंननि के तारे।।
सोई व्यास सोई दास त्रास तजि हरि भजि,
रास दिखावै सोई प्रान हमारे।।२२८।।

---

१. अवकाश मत दो २. बरछी ३. पेट में रखना (उपहास पचाना) ४. आल का पौधा जड़ खोदने से बढ़ता है ५. स्थल

राग सारंग

हरिसौं कीजै प्रीति निवाहि।
कपट कियैं नागर नट जानत, सबके मनकी डाहि।।
मैं फिरि देख्यौ लोक-चतुर्दस, नीरस घर घर आहि।
अपनैं अपनैं स्वारथ के सब, मन दीजै अब काहि।।
भक्ति प्रताप न जानत विषई, भव-सागर अवगाहि।
जार युवति गनिका कौ बेटा, पहिचानैं न पिताहि।।
जैसैं प्यासौ मृग धावत नहिं, पावत मृगतृष्णाहि।
अैसैं तन, धन, सुत, दारा झूँठे व्यास कहे मधुकर शाहि।।२२९।।

साँची प्रीति हरति उपहासहि।
कपट प्रीति रँग राचि परस्पर, जब कब होहि विनासहि।।
मुँहु मीठी बातनि मन मोहत, हरत पराई आसहि।
दावानलहि न ओस बुझावत, कुहुर न हरत डुकासहि[1]।।
पीर पराई धीर हरत कछु, कहत न आप व्यथा सहि।
घरके सुत ज्यौं जिय कायर, कोकिल चित चोरत कल वासहि।।
अैसैं कपटिन की संगति तजि, व्यास भजहु हरिदासहि।।२३०।।

जौ पै कोऊ साँची प्रीति करि जानैं।
तौ या वनमें राधा-रवनैं, मन लगाई गहि आनैं।।
सुनियत कथा श्यामजू की एक, प्रीति के हाथ विकानैं।
ता मोहनकी महिमा कैसैं, विषई व्यास वखानैं।।२३१।।

नैंननि देख्यौ, सोई भावै।
जोई कपट लोभ तजिकै (श्री)राधावल्लभकै गुन गावै।।
रसिक-अनन्य भक्ति मंडलकी मीठी बात सुनावै।
ताके चरन शरन ह्वै रहिये, दिन प्रति रास दिखावै।।
स्यामास्याम करैं सोई जो, व्यासदास सुख पावै।।२३२।।

१. कोहरे का पानी प्यास नहीं दूर करता

हमारैं कौन भक्ति की रीति।
साधन पौरुष करत कछु नाहीं, संतनिसौं न समीति।।
कायर कुटिल अधम लोभी हम, निसिदिन करत अनीति।
सपनैहुँ स्याम चरन रति नाहीं, विषइनिसौं बहु प्रीति।।
तीरथ करम धरम व्रत नाहीं, लोक वेदकी भीति।
महा पतित पावन हरि कहियतु, व्यासहिं यह परतीति।।२३३।।

राग गौरी

पहिले भक्तन के मन निर्मल।
जिनके दरस पतित पावन भये जीव परसत गंग-जल।।
जिनके हिय तैं हरि न टरत कहुँ कबहुँ एकौ पल।
तिनकौ नाम लेत गुन गावत रति बाढ़ै सद जुगल चरनतल।।
जिनके मद अभिमान न मत्सर तिनके बेगि पंथ चल।
जिन्हें सेइ वृंदावन पायौ व्यास सुकल जन्म फल।।२३४।।

राग सारंग

धर्म दुस्यौ कलि दई दिखाई।
कीनौं प्रगट प्रताप आपुनौ, सब विपरीति चलाई।।
धन भयौ मीत, धर्म भयौ वैरी, पतितन सौं हितवाई।
जोगी, जपी, तपी, सँन्यासी व्रत छाँड्यौ अकुलाई।।
वरनाश्रमकी कौन चलाई, संतनिहूँ में आई।
लीनौं लोभ घेरि आगै दै, सुकृत चल्यौ वराई।।
देखत संत भयानक लागत, भावत ससुर जमाई।
संपति सुकृत सनेह मान चित, गृह व्यौहार बड़ाई।।
कियौ कुमंत्री लोभ आपुनौ, महा-मोह जु सहाई।
काम क्रोध मद मोह मत्सरा, दीनी देस दुहाई।।
दान लैनकौं बड़े पातकी, मचलनिकौं बँभनाई।
लरन मरनकौं बड़े तामसी, वारौ कोटि कसाई।।

उपदेसनि कौं गुरू गुसाईं, आचरनै अधमाई।
व्यासदासकें सुकृत साँकरे[1], श्री(हित) हरिवंश सहाई।।२३५।।

अब साँचैं हीं कलियुग आयौ।
पूत न कह्यौ पिताकौ मानत, करत आपनौ भायौ।।
बेटी बेचत संक न मानत, दिन दिन मोल बढायौ।
याहीतैं वरिषा मंद होत है पुन्य तें पाप सवायौ।।
मथुरा खुदति कटत वृंदावन मुनि जन सोच उपायौ।
इतनौं दुःख सहिबे के काजैं, काहे कौं व्यास जिवायौ।।२३६।।

राग सारंग

जैसी भक्ति भागवत वरनी।
तैसी विरले जानत मानत, कठिन रहनि तैं करनी।।
स्वामी भट्ट गुसाईं अगनित, मति करि गति आचरनी।
प्रीति परस्पर करत न कबहूँ, मिटै न हियकी जरनी।।
धन कारन साधन करि हरि पर, धरि सेवा वन धरनी।
विषै वासना गई न अजहूँ, छाँड़ि विगूचे घरनी।।
सहज प्रीति विना परतीति नहीं शिश्नोदर की भरनी।
व्यास आस जौलगि, है तौलगि, हरि विनु दुख जिय भरनी।।२३७।।

गुरुहि न मानत चेली चेला।
गुरु रोटा पानीसौं घूँटत, सिष्य के दूध पिवैं कुकरेला[2]।।
सिष्यनि के सोने के वासन, गुरुकैं कुँड़ी कुड़ेला।
चौर चिकनियनिकौ बहु आदर, गुरुकौ ठेलीठेला।।
सिष्य तौ माँखीचूसा सुनियतु, गुरु पुनि खाल उचेला।
वह कायर यह कृपन हठीलौ, ईंट मारि दिखरावतु भेला।।
कृष्ण कृपा बिनु विवि असमंजस,दुख-सागर में झेली झेला।
व्यास आस जे करत सिष्यकी, तिनतैं भले भँडेला।।२३८।।

---

१. थोड़े २. पिल्ला

जाके मन बसै काम कामिनि धन।
ताकैं स्वपनै हूँ न संभव, आनँद कंद स्याम-घन।।
भक्ति, भागवत भनत तहाँ नहि, जहाँ विषय आचरन।
दया दीनता करुना तहाँ नहीं, जहाँ जीव आहरन[१]।।
विमद विमत्सर सन्त जहाँ हैं, भगवत लीला सरन।
व्यास आसकी पास बँधे ते, बूड़े गृह आसरन[२]।।२३९।।

साधत वैरागी जड़ बंग[३]।
धातु रसायन औषध सेवत, निसिदिन बढ़त अनंग।।
सुक वचननिकौ रंग न लाग्यौ, भग्यौ न संसै कौ अंग।
विषै विकार गुन उपजै वित लगि, सबै करत चित भंग।।
बनमें रहत गहत कामिनि कुच, सेवत पीन उतंग।
धिक धिक अधमनि, संतनि तजि, हरिकी छाँड़ि उछंग।।
लोभ वचन वाननि अँग अंगनि, सोभित निकर निषंग[४]।
व्यास दृढ़पासि गरै तिहिं भावै रागिनि रंग।।२४०।।

गावत नाँचत आवत, लोभ कह।
याही तें अनुराग न उपजत, राग वैराग सोभ कह।।
मंत्र जंत्र पढ़ि मेलि ठगोरी, वस कीनौं संसार।
स्वामी बहुत गुसाई अगनित, भट्टनि पै न उबार।।
भाव बिना सब विलविलात, अरु किलकिलात सब तेहू।
व्यास राधिकारवन कृपा बिनु, कहूँन सहज सनेहू।।२४१।।

कुंजनि कुंजनि रसमय लूट।
दस दिसि निसि वासर वृंदावन चंद वृंद सब छूट।।
राजभोग अनुरागनि विलसत, जातन देख्यौ कूट[५]।
गुनसागर नागर रसरूप कूप, जल जात न टूट।।

---

१. प्राण हरना २. घर के आश्रित होकर ३. धातु विशेष ४. तरकष ५. कुंज कुटीर

रसिक अनन्य कहाइ अनत वसि, राजा राउ न फूट[१]।
लोग प्रतिष्ठा विष्ठा लगि सुत, हारयौ चारौं खूट[२]।।
ज्यौं अनबोलें ऊँट भार सहि, भजि काटै सरहूट।
ऐसैं व्यास दुरास पास बँधि, क्यौं आवै पसु छूट।।२४२।।

राग विलावल

गुरु गोविन्दहि बैंचत हाट।
भक्त न भयौ माँगनौ जैसैं, डोम कलाँवत भाट[३]।।
कायर कूर कुटिल अपराधी, कबहुँ न होइ निराट।
लोभ गोभ लगि सबै बिगारयौ, ज्यौं रैंनी कौ माट[४]।।
तन पोषत कामिनि मुख जोवत लागि कामकी साट[५]।
पावत है विश्राम न मनमें, उपजत कोटि उचाट।।
पर घर गयैं पांडु पुत्रनि कौं, परिभौ[६] कर्यौ विराट।
द्रुपदसुता कीचकहूँ डारी, धर्म-पुत्रकें[७] रुधिर लिलाट।।
जाके जात सु आवत देखत, बिनु रुचि देत कपाट।
व्यास आस करि हरिहि जु सेवै, ताकी परियौ वाट।।२४३।।

राग सारंग

अब हमहूँ से भक्त कहावत।
माला तिलक स्वाँग धरि हरिकौ नाम बेंचि धन लावत।।
स्यामहिं छाँड़त काम विवश है, कामिनिहिं लगि धावत।
हरुवे होत तूल तृनहूँ तें, पर घर गये न भावत।।
श्रीगुरूकौ उपदेश लेस नहिं, औरन मंत्र सुनावत।
छल बल लेत देत नहिं दीननि, अपनै जसकौ गावत।।
भक्ति न सूझत सुनत भागवत, साधु न मनमें आवत।
कियौ अकाज व्यास कौ आसा, बनहीमें घर छावत।।२४४।।

---

१. राजा से बिगाड़ न हो जाय २. दिशा ३. माँगने वाली जातियाँ ४ रंग वाला मटका ५. मार ६. अनादर ७. युधिष्ठिर

भटकत फिरत गौड़ गुजरात।
सुखनिधि मथुरा तजि वृंदावन, दामनि कौं अकुलात।।
जीवन मूरि जहाँ की धूरहिं, छाँड़तहू न लजात।
मुक्ति-पुंज समता नहिं पावत, एक कुंजके पात।।
जाकी तक्र[1] सक्र[2] कौ दुर्लभ, ताहि न बूझत बात।
व्यास विवेक बिना संसारहिं, लूटत हूँ न अघात।।२४५।।

एक भक्ति बिनु घर घर भटकत।
फिट फिट[3] होत विषै रस लंपट, साधु चरन गहि मनहि न हटकत[4]।।
औरनिकैं सुख संपति देखत, लेत उसास लिलारी पटकत[5]।
दाता कौ दुख, सुख करि मानत, नाँचि गाइ बातैं कहि मटकत।।
जब लगि कंठ उसास न तब लगि, हरि परतीति न कबहूँ अटकत।
गुरू गोविन्द लजाइ, आपनौ सहि अपमान, दान लै सटकत।।
सोवत खात रहत दिन पसु ज्यौं, यामिनि कामिनिकै उर लटकत।
व्यास आसके दास, भिखारी दारुन दुख मेटै ज्यौं उटकत[6]।।२४६।।

दिन द्वै लोग अनन्य कहायौ।
धन लगि नटकौ भेष काछिकैं, फिरि पाँचनि[7] में आयौ।।
सिगरे बिगरे अगनित गुरु करि, सबकौ जूँठौ खायौ।
इत व्यौहार न उत परमारथ, बीचहिं जनम गमायौ।।
खौं[8] खोदी ऊसर वैवे कौं, चोड़[9] भैंस लै माँट मुल्यायौ[10]।
गनिकाकौ सुत पितहिं पिंड दै, काकौ नाम लिवायौ।।
अंधरहिं नाँचि दिखायौ जैसैं, बहरहिं गाइ सुनायौ।
चढ़ि कागदकी नाव नदी कहि, काहू पार न पायौ।।
प्रीति न होहि बिना परतीतिहि, सब संसार नचायौ।
सहज भक्ति बिनु व्यास आस करि, घरही माँझ मुसायौ[11]।।२४७।।

---

१. छाछ २. इन्द्र ३. धिक्कार ४. रोकना ५. माथा पटकना ६. अनुमान करना
७. पांचों विषय, प्रपंच ८. खड्डा ९. दूध होते हुये भी न देने वाली १०. मोल-भाव करना
११. चोरी चला गया

भक्त ठाढ़े भूपनिके द्वार।
उझकत झुकत पौरियन डरपत,गाय वजाय सुनावत तार।।
कहियौं धाइ थवाइत प्रोहित, हमहिं गुदरवी[1] स्वार[2]।
छिन छिन करत विदा की विनती, उपजत कोटि विकार।।
विहँसत लसत कोटि वर अंतर, कलियुग के अनुसार।
होत अनादर विषयिनिकैं जब, तबहीं होत कुतार[3]।।
चन्दन माला औ स्याम विंदनी, दै उलटै उपहार।
व्यास आस लगि नट बाँदर ज्यौं, नाँचत देसउतार[4]।।२४८।।

सारंग व विलावल

कौनैं सुख पायौ बिनु स्यामहि।
सेवत सदा बबूरनि जैसैं, खायौ चाहत आमहि।।
सिंह सरन सूझत नहिं बूझत, पढ्यौ जु सून्य सभा मँहि।
परम पतीव्रत कौ सुख नाहिन, सुपनैं हूँ गनिका मँहि।।
विमल बुद्धि, मन सुद्धि न उपजै, काम क्रोध माया मँहि।
गुरुकुल घर अभिमानहिं जाकैं, व्यास भक्ति नहिं तामँहि।।२४९।।

राग रामकली

वादि सुख स्वाद, बे काज पंडित पढ़त।
श्याम जस, भक्ति रस, कहैं नहिं भागवत,
कहा कनक कामिनि विषै निसिदिन रढ़त।।
करत साधन सकल धन मान चित्त धरि,
कटक[5] भटकत मृषा वचन रचना गढ़त।
अश्व, गज, हेत नृपति नर ठगत, रातनि,
जगत नैंकु आदर जान गर्व पर्वत चढ़त।।
हरिदास निंद करि पित्र भूत वंदि उर
कृष्ण गोपाल सुभ नाम नहिं मुख रढ़त।

१. बखशीश, पुरस्कार २. रजाई ३. कठिनाई ४. लोगों के मध्य ५. समूह, राज शिविर

व्यास मन त्रास नहिं करत यमदूत की
यातना कठिन सहिलेत पावक डढ़त[१]।।२५०।।

राग सारंग

आपु न पढ़ि औरनि समुझावत।
दोषहि प्रगटत गुनहिं दुरावत।।
नीर मिलै सब छीर भिड़ावत।
संत सभा स्वपनैं नहिं आवत।।
अपनैं ही घर बड़े कहावत।
औरनि ठगि आपुन ठगवावत।।
गनिका के से भाव वनावत।
हरि, विमुखनि पै सचु नहिं पावत।।
इहीं विधि जनम जनम डहकावत[२]।
व्यासहिं अभिमानी नहिं भावत।।२५१।।

पढत पढावत ज्यौं मन मान्यौं।
कौन काम गोपाल भक्तिसौं, जौ पुरान पढि जान्यौं।।
घर घर भटकि मटकि कामिनि लगि, गाल पटकि धन आन्यौं।
निसिदिन विषै स्वाद रस लंपट, तजि पाँचनि की कान्यौं[३]।।
स्वपनैं हूँ न किये हरि अपनैं, (श्री) हितहरिवंश वख्यान्यौं।
सुनै न वचन साधु के मनदै, चरन पखारि न अँचयौ पान्यौं।।
सारासार विवेक न जान्यौं, मन सन्देह न भान्यौं।
दया दीनता दास भाव बिनु, व्यास न हरि पहिचान्यौं।।२५२।।

कहत सुनत बहुतक दिन बीते, भक्ति न मनमें आई।
स्याम-कृपा बिनु साधु-संग बिनु, कहि कौनैं रति पाई।।
अपनैं अपनैं मत मद भूले, करत आपनी भाई।
कह्यौ हमारौ बहुत करत हैं, बहुतनि में प्रभुताई।।

---

१. जलना २. ठगा जाना ३. लाज

मैं समुझी सब काहु न समझी, मैं सबहिन समुझाई।
भोरे भक्त हुते सब तबके, हमतो बहु चतुराई।।
हमहीं अति परिपक्व भये, औरनि कैं सबै कचाई।
कहनि सुहेली रहनि दुहेली, बातनि बहुत बड़ाई।।
हरिमंदिर माला धरि गुरु करि, जीवनि के दुखदाई।
दया, दीनता, दास-भाव बिनु मिलै न व्यास कन्हाई।।२५३।।

कहत सुनत भागवत, बढ़ै, श्रोतहि वक्तहि अभिमान।
मद मत्सर न गयौ न भयौ सुख,रुख न करत चष कान[1]।।
भक्ति न भई विषै न गई रति, भूलि गयौ भगवान।
लोभीकौ लोभ न छूटौ न गयौ, कृपनकौ जु सयान।।
केवल कृष्णकृपा बिनु साधु, संग बिनु रंग न आन।
व्यास भक्ति समुझी तबहीं, नारद के सुनत वखान।।२५४।।

राग धनाश्री

कर्मठ गुरू सकल जग बाँध्यौ, करम धरम उरझाये।
काका, बाबा, घर गुरू कीनैं, घरही कान फुँकाये।।
जिनकैं भक्ति कहाँ तें आवै, साधु न मनमें भाये।
क्रोध रारि हिंसा के माँड़े[2], शिष्य न गुरू सुहाये।।
प्रभुता रहत न तनके नातें, कोटिक ग्रंथ सुनाये।
बूड़े कुलीन विद्या अभिमानी, सुतौ पाताल पठाये।।
जगत प्रतिष्ठा विष्ठासो तजि, सरन स्याम के आये।
व्यास दास कुल तजी बड़ाई, जब हरि भक्त कहाये।।२५५।।

राग सारंग

भई काहूकैं भक्ति पढ़ैं न।
धन कौ पंडित कहत भागवत, होत न हरिसौं ढैंन[3]।।
उपज्यौ भाव कबीर धीर कौं वेद पुरान पढ़ैंन।
माँस छाँड़ि रैदास भक्त भये, कृपा तुरंग चढ़ैंन[4]।।

---

१. किसी को देखते सुनते नहीं २. सने हुये ३. मिलन ४. चढ़कर

विषइनि तजैं पिंगला सुधरी, कर नाराज वढ़ैंन।
व्यास प्रतीति बिना न कहूँ सुख, ज्यौं दुख उरग कढ़ैंन[१]।।२५६।।

भक्ति न जनमै पढ़ैं पढ़ायैं।
कृष्ण कृपा बिनु साधु सँग बिनु, कह कुल गाल बजायैं।।
हरिहिं रिझाइ सकै को नटुवा, नट भट पै नचवायैं।
सपनैहूँ न मिलै हरि लोभिन, बाजे विविध सुनायैं।।
सुभटनि जूझत हरि न मिलै, अब सती न पावक पायैं।
दान दिये भगवान न भेटैं, कोटिक तीरथ न्हायैं।।
नाऊ, जाट, चमार, जुलाहे, छीपा हरि दुलरायैं।
मत्सर बाढ्यौ भट्ट गुसाँइन, स्वामी व्यास कहायैं।।२५७।।

राग कान्हरो

सबै करत पद कीरति कहा हम थोरे हरिहिं रिझावत।
राग रागिनी तान मान महि लालन लगतैं आवत।।
कछू जुगति ना मो कहँ उपजत उरमें मोहन गावत।
सवा लाख कीनें जु तिलोचन हरि को दरसन पावत।।
भाव विना न भक्ति रस उपजै, यह सब सन्त बतावत।
कियें उपाय राधिका मोहन, व्यासहि निकट न आवत।।२५८।।

राग विलावल

कपट न छूटै हरि गुन गावत।
काम न छूटै स्यामहिं सेवत, कामिनिहीं लगि धावत।।
कहत भागवत घर नहिं छूटै, मत्सर मद न नसावत।
भक्ति करत हूँ धर्म न छूटै, बाँधे कर्म नचावत।।
हरिवासरकौ भेद न छूटै, महाप्रसादहि पावत।
कर्म विषै नहिं छूटै विषयी, साधुनिकौ समुझावत।।
देह धर्मकौ संग न छूटै, देहै धर्महिं ध्यावत।
कुंजर-सौच[२] करत नहिं डरपत, व्यास वचन विसरावत।।२५९।।

---

१. घसीटना २. गज-स्नान

धर्म छुटत छूटहि किनि प्रान।
जीवत मृतक भयौ अपराधी, तजि गुरु रीति प्रमान।।
विधिहि रवानी करी मूढ मति, करि गोरिल गुन गान।
चढि गादहि सर्वत्र मंत्र पढ़ि, पाप वजाइ निसान।।
यह कारौंचि[1] पौंछि है को अब, लै दै कन्या दान।
मांगर तेल कलस जल धोये, रोवै जड़ वे दान।।
भक्ति न होत देव पितरन कौं, किंकरीन की सान।
चढ़ै काठकी वार[2] वार[3] क्यौं, लगत न कूर[4] कड़वान[5]।।
कपटी अपनौ होइ न कबहूँ, ज्यौं रामी तनु दान।
व्यास पुनीत न होय कूकरी, कोटिक गंग अन्हान।।२६०।।

हियमें आवत हरि न पढ़ैं।
अभिमानी कौ दास होत, दीनन के कॉन्ध चढ़ै।।
भक्ति प्रीति तो खोवत धनि लगि, रोवत गुली डढ़ै।
ठगत राजसिनि, डगत धर्म ते, फूलत दाम बढ़ै।।
जब कब पीतरि प्रगट होत, कलई सो कनक मढ़ै।
व्यास कपट सौं हरि न मिलत, ज्यौं सूरहि रणहि कढ़ै।।२६१।।

गौरी (अठताल)

कहा भयौ वृंदावनहि बसै।
जौलगि व्यापत माया तौलगि कह घरतें निकसै।।
धनं मेवा कौ मंदिर सेवत, करत कोठरी विषै रसै।
कोटि कोटि दंडवत करै कह, भूमि लिलाट घसै।।
मुँह मीठे, मन सीठे कपटी, वचन रचन नैननि विहसै।
मंत्र ठगोरी कबहूँ न तंत्र गद[6], मानत विषय डसै।।
कंचन हाथ न छुवत कमंडल, मै मिलाय विलसै।
व्यास लोभ रति हरि हरिदासनि, परमारथहि खसै।।२६२।।

---
१. कालिख २. हाँड़ी ३. विलम्ब ४ कायर ५. चुनौती ६. विष

राग सारंग

जो पै हरिकी भक्ति न साजी।
जीवतहूँ ते मृतक भये, अपराधी जननी लाजी।।
योग, यज्ञ, तीरथ, व्रत, जप, तप सब स्वारथ की बाजी।
पीड़ित घर घर भटकत डोलत, पंडित मुंडित काजी।।
पुत्र कलत्र सजन की देही, गीध स्वान की खाजी[1]।
बीत गये तीनौं पन कपटी, तऊ न तृष्ना भाजी।।
व्यास निरास भयौ याही तैं, कृष्ण चरन रति राजी।।२६३।।

प्रीति कपट की जब तब टूटै।
चोड़ गाय ज्यौं हुँकरि बछेरुहि, थन लागत मुँह कूटै।।
कबहुँक वचन बोलि मीठेसे, तमकि तुपक[2] सी फूटै।
पाखंडिन की संगति खोटी, ज्यौं ठग मिलि सँग लूटै।।
कृपावंत भगवंत होहि तब, दारुन दुख तें छूटै।
साधु संगतें व्यास परम सुख, भक्ति रतन कह खूटै[3]।।२६४।।

राग नट

कहत सब लोभहिं लागो पाप।
तऊ न छूटत लोभ होत हूँ, वाढ़यौ उर परिताप।।
जैसैं पंकहि पंक न छूटहि, सूखि सरीरहि आप।
अैसैं योग, यज्ञ, तीरथ, व्रत मनकौ मिटै न ताप।।
विद्यमान कृष्ण यादव कौं मुनि, नैं दीनौ कोपि सराप।
व्यास भक्ति विनु दुर्लभ लोकनि, तजत सोक अगधाप।।२६५।।

राग कान्हरो

लोक चतुर्दश लोभ फिरायौ।
कबहुँक राजा रंक सुहायौ।।

---

१. आहार २. छोटी तोप, बन्दूक ३. कम होना

कबहूँ ब्राह्मन सुपच कहायौ।
व्यास वचन सुनि साधुन पायौ।।२६६।।

राग सारंग

लोभी वगरूरे[1] को सो पात।
सात छानि को फूँस धूम सो, काके नैन समात।।
पावस सलिता के तिनका ज्यौं, चलत न कहूँ खटात।
दामनि लगि गनिका लौं निसिदिन, सबके हाथ विकात।।
जो कोउ सर्वसु देइ तोऊ, सन्तोष विना पछितात।
अमुका मेरी भाँजी दीनी, तापर औंठ चवात।।
निजजन सकुच नाहिं घर माँही सबही सों सतरात।
भड़िहा कूकर[2] लौं कारो मारतहूँ न किकियात[3]।।
टूटे घरहि नेक लौं डरपत, जब लगि ददर चुचात।
शूकर पाइ प्रतिष्ठा विष्टा, फूले अंग न समात।।
अधर लार गंडकहि[4] भजन करि, महा मांसहूँ खात[5]।
कृष्ण कृपा बिनु तृष्ना जाकें सो व्यासहि न सुहात।।२६७।।

जाके मन लोभ वसै सो कहा हरि जानै।
स्याम कृपा विनु साधु वचन नहिं मानै।।
साधुन सौं विमुख भूत पितरन कौ मानै।
गनिकाकौ पूत पितहिं कहौ कैसें पहिचानै।।
इहि विधि जगत जनमि जनमि बहुतन के हाथ विकानै।
व्यास स्याम भक्ति विनु को को नहीं खिसानै।।२६८।।

लोभिनि वृंदावन न सुहात।
भागत भोर चोर लौं पापी, विमुखन सेवन जात।।
रहत सोभ लगि लोभ धरै मन, दुःख करै विललात।
सुखहि पीठि दै दुखकौ दौरत, बहुतनि हाथ विकात।।

१. चक्रवात २. चोर के साथ मिला हुआ कुत्ता ३. कों कों की आवाज ४. गण्डा
५. एक प्रकार की वीभत्स तान्त्रिक क्रिया

केलि-कुंज पुंजनि को वैभव, नैंननि महँ न खटात।
सहज माधुरी कौ रस कैसै, नीरस हृदै समात।।
जहाँ स्याम के धोखैं चौंकै, तनिकहु खरकै पात।
जाहि पीठि दै पति गति नासै, व्यासहि सो न सुहात।।२६९।।

राग कान्हरो

जाकैं हरि धन नाहिंन भाल।
जो गरीब गरवत काहे कौं, वादि बजावत गाल।।
है कपूत बंस-कुल-बोरा[1], काँच रच्यौ ज्यौं लाल[2]।
यासौं धनिक कहौ जिनि कोऊ, है कोरौ कंगाल।।
तरपट[3] परैं जानिहै तबही, कंठ गहै जमु जाल।
व्यासदास सपनैं की संपति, को गहि भयौ निहाल।।२७०।।

साकत बाँभन गूँगौ ऊँट।
भार लेत संसार अहार, विकट काँटे को सूँट।।
चालि हालि, सहि नकुवा छेदि चढ्यौ उटहेरौ[4] टूँट।
नक नकाय मारत हारत हूँ, देत न जल कौ घूँट।।
लये कुदान कारटौ[5] खाइ वढ़ाइ निलज जग खूँट।
व्यास वचन मानै बिनु वाढ्यौ दारुन दुख कौ बूँट[6]।।२७१।।

राग सारंग

हरि विमुखन कौं दारुन दुख भायौ।
निशिदिन विषै भोगकी चिंता, अंतकाल दिन आयौ।।
औंड़ी नीव खुदाइ दाम दै ऊँचौ घर करवायौ।
व्यास वृथा ऐसे साधन करि, जनम जनम डहकायौ[7]।।२७२।।

विमुखनि रुचित न कुंजन वसिवौ।
जिनमें राधा-मोहन विहरत, देखि सुखद मुख हँसिवौ।।

---

१. वंश कुल को डुबोने वाला २. जैसे काँचको जवाहरात की शक्ल दी हो ३. आराम, सुख ४. पशु और गाड़ी को जोड़ने वाला काष्ठ ५. मृत्यु भोज ६. वृक्ष ७. ठगा गया

निसिदिन छिन छूटत नहिं कामिनि, चरनन सौं सिर घसिबौ।
चुम्वत मन आनंद बिकाने रह, कुल व्याकुल गसिबौ[१]।।
अंग अंग रसरंग रचे सुख, सचे कुसुम कच खसिबौ।
व्यास स्वामिनीकी छबि पिय संग जमुना जल में धँसिबौ।।२७३।।

बाँभन के मन भक्ति न आवै।
भूलै आपु सबनि समुझावै।।
औरनि ठगि ठगि अपुन ठगावै।
आपुन सोवै सबनि जगावै।।
वेद पुरान बैंचि धन ल्यावै।
सत्या तजि हत्याहि मिलावै।।
हरि हरिदास न देख्यौ भावै।
भूत पितर देवन पुजवावै।।
आपुन नर्क परि कुलहि बुलावै।
व्यास भक्ति बिनु को गति पावै।।२७४।।

पितर शेष जड़ श्यामहिं देत।
तिहिं पापी अपनैं पितरनि के, मुखमें मेली रेत।।
सो ठाकुर सेवक न जानिवौ, जो अधमनि की जूठनि लेत।
तिनकी संगति पति गति जैहै, मेरे चित यह चेत।।
स्याम केस सित होत न धोयैं, केउला होत न सेत।
सहज भक्ति बिनु व्यास व्यास नहीं, किन सेवत ऊसर खेत।।२७५।।

जो दुख होत विमुख घर आयें।
ज्यौं कारौ लागै कारी निसि, कोटिक विच्छू खायें।।
दुपहर जेठ परत बारूमें, घायनि लौंन लगायें।
काँटन माँझ फिरत बिनु पनहीं, मूँड़में टौला[२] खायें।।
टूटत चाबुक कोटि पीठि पर, तरुवा बाँधि उठायें।
जो दुख होत अगिनि में ठाड़ें सर्वसु जुवा हरायें।।

---

१. क्रीड़ा समूह से आनन्दाकुल होकर गसे हुये। २. आघात

ज्यौं बाँझहि दुख होत सौतिकौ, सुंदर बेटा जायैं।
देखत ही सुख होत जितौ दुख, विसरत नहिं विसरायैं।।
भटकत फिरत निलज बरजत हीं, कूकर ज्यौं झहरायैं[१]।
गारी देत बिलग नहीं मानत, फूलत दमरी पायैं।।
अति दुख दुष्ट जगतमें जेते, नैंकुन मेरे भायैं।
दरस परस नहि दीजौ वाकौ, कहत व्यास यौं नायैं।।२७६।।

राग नट

को को न गयौ को को न जैहै।
इहिं संसार असार भक्ति बिनु, दूजौ और न रैहै।।
हरीविमुख नर आतमघाती, नरक परत न अघैहै।
संतचरन दृढ़ सरन नाव बिनु, काल नदीमें बैहै।।
सुधासिन्धु हरि नाम निकट तजि, विषयी विषयिन खैहै।
व्यास वचन कौ कियौ निरादर, फिर पाछैं पछितैहै।।२७७।।

राग गौरी

हरि की भक्ति बिनु तन मन मैलौ।
जैसैं बिनु लाद्यौ बिनु जोत्यौ, गायनि माँझ फिरत खल खैलौ[२]।।
आपु न जानत कही न मानत, अजहूँ गुरुहिन करत असैलौ[३]।
आपुन विगरि विगारत औरनि, ज्यौं जल नायैं काचौ घैलौ[४]।।
जुग जुग जनम जनम याहीतैं, अजहुँ न भर्‍यौ विषैकौ थैलौ।
व्यास वचन माने बिनु जानैं, नरक परैगौ अैलौ पैलौ[५]।।२७८।।

राग धनाश्री

तृष्ना कृष्णकृपा बिनु सबकैं।
जती सती कौ धीरज न रहै, माया लोभ बाघके बबकैं[६]।।
जग घोराहि काम दौरावत, मारत आसा चाबुक ठबकैं।
गह्यौ आसरौ वृंदावन कौ, कट्टर व्यास भयौ है अबकैं।।२७९।।

१. झल्लाना २. वह बैल जिसे काम में न लिया गया हो ३. नीति विरुद्ध ४. घड़ा ५. बहुत ज्यादा ६. उत्तेजित या प्रभावित होकर

राग कान्हरो

श्रीकृष्ण शरन रहें तृष्ना जैहै।
भजि गोपाल कृपालहि निसिदिन, काल व्याल कबहूँ नहिं खैहै।।
साधु सिंह की जो संगति रहै, तौ न निकट मायामृग रैहै।
व्यास भक्ति बिनु गति नहिं लहिवौ, जमकें द्वार नरक दुख सैहै।।२८०।।

राग विलावल

निष्काम है जौ स्यामहि गावहु।
साँचे साँचे साधुनि में तुम, साँचे साधु कहावहु।।
बिनु लीनैं जो नाँचहु तुम, प्रेम भक्ति फल पावहु।
दाम काम ना हरि नामकौ गुन, लगै न कोटि रिझावहु।।
इंद्रीजीत है अजितहि मन दै, तन धन सुख विसरावहु।
विमुखन के द्वारैं उझकतहीं, मुख जिनि हरिहि दिखावहु।।
अगनित दोष रोष तृष्ना महँ कृष्णहिं कहा लजावहु।
आसा बंधन तैं नंदनँदन, व्यासहि वेगि छुड़ावहु।।२८१।।

सारंग व धनाश्री

कलियुग स्याम नाम अधार।
हरिके चरन सरन बिनु कालव्याल पै कहूँ न उबार।।
देवी देवा पूजा करि करि, धार वह्यौ संसार।
श्वान पूँछ गहि भव सागर कौ, क्यौं पावहुगे पार।।
छूट्यौ अपनौं धर्म सबनि पै, ज्ञान विवेक विचार।
एक लोभ कै आगैं सकल, गुननि कौ पर्‌यौ विडार[1]।।
बाँभन करत सूद्रकी सेवा, तजि विद्या आचार।
रज छाँड़ी रजपूत कपूतन, लाज नहीं संसार।।
वनिक वनिकमें मेलि जौंडरी[2], जोरत कपट भँडार।
कुलकी नारि गारि दै भर्तहि ज्यौं रति गाय विजार।।
सबै और असमंजस हरि बिनु, नाहिंन कहूँ उबार।
व्यास वचन मानैं बिनु जुग जुग, सेवहुगे यमद्वार।।२८२।।

---

१. भागना, तितर बितर होना २. छोटे दाने की ज्वार

राग सारंग

कलियुग मन दीजै हरि नामें।
आराधन साधन धन कारन, कत कीजै वे कामैं।।
साधुनके गुन जाहि न लागैं, दोष बिरानैं बामैं।
सेवा मंदिर भक्ति भागवत, अब न होत बिनु दामैं।।
हरि साधुन बिनु कछू न भावै, ऐसे गुन हैं जामैं।
जाहि भलौ सबहीकौ भावै, व्यास भक्त है तामैं।।२८३।।

राग कान्हरो

गाइ लेहु गोपालहि यह कलिकाल वृथा न बितैजै।
बिछुरतहूँ न जानि हैं तन मन धनहिं न भूलि पतैजै[1]।।
दामिनि कैसी चमक मीचुकी, कामिनि त्यौं न चितैजै।
करता हरता परमेस्वर बिनु काजहिं कत पछितैजै।।
भोग करत दुख रोग बढ़त, हरि नाम प्रसाद हितैजै।
व्यास स्यामके दास कहावत, कपट भँडार रितैजै[2]।।२८४।।

हरि गुन गावत कलियुग रहियै।
विधि व्यौहार रह्यौ न कछू अब, साधु चरन निजु गहियै।।
इहिं संसार समुद्र वोहित उठि, हरि हरि कहत निबहियै।
व्यास स्यामकी आस करहु, उपहास सबनिकी सहियै।।२८५।।

हरिके नाम भरोसैं रहियै।
साधन विधि व्यौपार न कलियुग, निसि-दिन हरि हरि कहियै।।
अपनैं धरम बिमुख नर हरि भजन, बिना भवसिंधु न तरियै।
और न कछू उपाय भाव करि, संत चरन रज गहियै।।
माया काल नर गुन सब झूँठे, दुख सुख विधि सब सहियै।
व्यास निरास भयौ हरि के बल, साँचौ सुख तब लहियै।।२८६।।

---

१. विश्वास २. खाली करना

राग गौरी

हरि गुन गावत कलियुग सुनियत, भयौ सबनि कौ काज।
साखि भागवत बोलत अजहूँ, काहे करत अकाज।।
सुक सनकादिक जेहि रस माँते, तजि संसार समाज।
जेहिं रस राज परीक्षत राचे, बिसरि गयौ जल नाज।।
जिहिं रस प्रेम मगन भईं गोपी, तजि सुत पति गृह लाज।
सो रस व्यासदासकी जीवनि, राधामोहन आज।।२८७।।

राग कान्हरो

श्रीराधावल्लभ तुम मेरे हित।
और सबै स्वारथ के संगी, गुर चोपरी[1] दै पोषत पितु।।
यह मैं जानि सबनि सौं तोरी, तुमसौं जोरी दै चरनन चितु।
इतनी आस ब्यास की पुजवहु, ज्यौं चातिक पोषत पावस-रितु।।२८८।।

राग सारंग

जीवत मरत वृंदावन शरनैं।
सुनहुँ सुचित ह्वै (श्री) राधामोहन, यह विनती मन धरनैं।।
यहै परम पुरुषारथ मेरौ, और कछु नहिं करनैं।
स्याम भरोसै, तेरे व्रतके, नहीं व्यास कौ टरनैं।।२८९।।

ऐसैंहि काल जाइ जौ बीति।
निसिदिन कुंजनि कुंजनि डोलत, कहत सुनत रस रीति।।
विमद विमत्सर चरन सरन ह्वै, विषै जाइ जौ जीति।
नाँचत गावत रास रेनुमें, तन छूटै जौ प्रीति।।
या रस बिनु सब साधन फीके, ज्यौं बिनु लौंन पहीति[2]।
रसिकनिकी हरि आशा पुजैहैं, यह व्यासहि परतीति।।२९०।।

श्रीराधे जु आसा पुजवौ मेरी।
हा हा कुँवरि किसोरी बलिजाऊँ, करहु आपनी चेरी।।

---

१. गुड़-चुपड़ी २. दाल

मोहि स्यामकौ डर नहिं स्यामा, छुटत न आसा तेरी।
अगति[1] जाति तैं मेरी देही, भव सागर तें फेरी।।
कामधेनु के संग न सोहै, सदाँ छोतिमय[2] छेरी।
तुव पद-पंकज पारस परसत, व्यास कहा अब खेरी[3]।।२९१।।

बलि, बलि जाऊँ राधा मोहि रहन दै वृंदावन के सरन।
मौकौं ठौर न और कहूँ अब सेऊँगौ ये चरन।।
सहचरि ह्वै तेरी सेवा करिहुँ, पहिराऊँ आभरन।
अति उदार अँग अंग माधुरी, रोम रोम सुख करन।।
देखौं केलि बेलि मंदिर में, सुनि किंकिनि रव श्रवन।
दीजै वेगि व्यास कौ यह सुख, जहाँ न जीवन मरन।।२९२।।

राग गौरी

किसोरी तेरे चरननि की रज पाऊँ।
बैठि रहौं कुंजनि के कौंनैं, स्याम राधिका गाऊँ।।
या रज सिव सनकादिक लोचत[4], सो रज सीस चढ़ाऊँ।
व्यास स्वामिनी की छबि निरखत, विमल विमल जस गाऊँ।।२९३।।

किसोरी मोहि अपनी करि लीजै।
और दियैं कछू भावत नाहीं, (श्री) वृंदावन रज दीजै।।
खग मृग पसु पंछी या वनके, चरन सरन रख लीजै।
व्यास स्वामिनी की छबि निरखत,महल टहलनी कीजै।।२९४।।

राग विलावल

जगजीवन है जीवनि-जगकी।
दीन, हरिहिं आधीनव जैसैं, और न गति वोहित के खगकी।।
जैसैं दंभु अंबुमहँ ठानत, होत जीविका वगकी।
अैसैं कपटी नट भट नाइक पिटभरि करत ठगौरी ठगकी।।

---

१. बुरी गति २. अपवित्र ३. चिन्ता ४. अभिलाषा

पंडित मुंडित तुंड वल भोगी आसा बढै कुटुंबहि मगकी।
सो को व्यास न बँध्यौ दुरास ज्यौं,गनिकाहि कठिन-कुच भगकी।।२९५।।

झूलैं मेरे गंडकीनंदन।
मानहु भटा कढ़ीमें बोरे, अंग लगायें चंदन।।
हाथ न पाँइ नैंन नहिं नासा, ध्यान करत कछु होत अनन्दन।
जालन्धर अरु वृन्दावल्लभ, गावैं व्यास कहाकहि छंदन।।२९६।।

नट व आसावरो

मुँह पर घूँघट नैंन नचावैं। बातन-ही की लाज जनावै।।
अपने ही मुँह सुपत[1] कहावै। जारुहिं लीन भरतार न भावै।।
वाहिर पहिर औढ़ि दिखरावै। भीतर विषकी वेलि बढ़ावै।।
सोई सुहागिल सती कहावै। गुन बल जो इहि भाँति रिझावै।।
अंजन मंजन कै भरताहि नचावै। व्यासुजु साँचे सुख नहिं पावै।।२९७।।

गौरी

स्याम कृपा बिनु दिन दुख दूनौं।
अपनैं ही अभिमान जरत जग, भयौ काज अति झूनौं[2]।।
भक्ति मुक्तिकौ दाता है हरि, प्रभु वगसत अति पूनौं[3]।
कूरनि कौं मुहरें देत व्यास कौं ईंट पाथरचूनौं।।२९८।।

तन छूटतही धर्म न छूटै।
जीवत मरैं न माया छूटै, काल कर्म मुहँ कूटै।।
पुत्र कलत्र सजन सुख देवा, पितर भूत सब लूटै।
कबहुँ रंक राजा कबहूँ ह्वै, विषय विकार न छूटै।।
साधु न सूझै गुन नहिं बूझै, हरि जस रस नहिं घूटै।
व्यास आस घर घालै[4] जगकौ, दुखसागर नहिं फूटै[5]।।२९९।।

---

१. प्रतिष्ठित २. दुर्बल, उपेक्षित ३. भरपूर ४. विनाश ५. पार होना

एक पकौरी सब जग छूट्यौ।
जप, तप, व्रत, सँजम करि हारें, नैंकु नहीं मन टूट्यौ।।
माया रचित प्रपंच कुटुंबी मोह-जाल सब छूट्यौ।
व्यास गुरू (हित) हरिवंशकृपातें,वसि वनराजप्रेमरसलूट्यौ।।३००।।

छप्पय

जय जय श्रीहरिवंश, हंस हंसिनी लीला रति।
जय जय श्रीहरिवंश, भक्ति में जाकी दृढ़ मति।।
जय जय श्रीहरिवंश, रटत श्रीराधा राधा।
जय जय श्रीहरिवंश, सुमिरि नासैं भव बाधा।।
व्यास आस (हित) हरिवंशकी, सु जय जय श्रीहरिवंश।
चरन सरन मोहीं सदा, रसिक प्रशंस प्रशंस।।३०१।।

●

।। श्रीहित राधावल्लभो जयति ।।
।। श्रीहित हरिवंशचन्द्रो जयति ।।

श्रीव्यास वाणी (उत्तरार्द्ध)

गूजरी (हमीरताल)

वन्दे श्रीराधारमनमुदारं[1]।
श्रीवृंदावन घन वीथिनि वीथिनि, कुंजनि कुंजविहारं।
जोरी प्रमुदित निरख मनोहर, रतिपति विमद सुमारं।।
रसिक अनन्य सरन आधारन, दासीजन परिवारं।
स्यामसरीर गौर तन चीर, पयोधर भूषन भारं।।
परिरंभन चुंबन धन संग्रह, अधर सुधा आधारं।
मंदहाँस अवलोकनि अद्‌भुत, उपजत मदन विकारं।।
सहज रूप गुननागर आगर, वैभव अकह अपारं।
यह रस नित पीवत जीवत है, व्यास बिसरि संसारं।।१।।

राग चौतारो

वंदौं (श्री) राधामोहन की प्रीति।
एक प्रान द्वै देह हरद चून लौं रची समीति।।
एक एक बिनु जियें न सारस जोरी कैसी रीति।
गौर स्याम तन घन दामिनिलौं, राजत विपिन वसीति।
विविमुख चंद चकोर नयन रस पीवत, कलप गये सब बीति।
चारि चरन सेये बिनु व्यासहिं, अनत नही परतीति ।।२।।

वन्दौं श्रीराधा-हरिकौ अनुराग।
तन मन एक अनेक रंग भरे, मनहुँ रागिनी राग।।
अंग अंग लपटानैं मानहुँ, प्रेम रंग कौ पाग।
रूप अनूप सकल गुन सीमा, कहत न बनै सुहाग।।

---

१. कई प्रतियों में इस पद के स्थायी चरण के पश्चात् 'श्रीगुरु सुकुल सहचरि ध्याऊँ दंपति सुख रस सारं' यह पंक्ति प्राप्त होती है, परन्तु वि. सं. १८७६ वाली प्राचीन प्रति के पाठ में यह पंक्ति नहीं दी हुई है।

विहरत कुंज कुटीर धीर, सेवत वृंदावन बाग।
निसि दिन छिन न चरन छाँड़त अब व्यासदासि कौ भाग।।३।।

राग कान्हरौ

एक प्रान द्वै देही सहज सनेही गोरे साँवरे।
प्रीति रंग अँग अंग रचे हौ,ज्यौं हरदी चूनौं मिलि रचत आँवरे[१]।।
रूप रासि गुन अधिक आगरे, राधा मोहन नाँवरे।
सुख सागर झेलत खेलत, वरसानैं नन्दगाँवरे।।
वृंदावन घन कुंजनि में रति पुलिन मनोहर ठाँवरे।
मंद-हँसनि छबि कोटि चन्द रवि, व्यासहिं लागत झाँवरे[२]।।४।।

राग गौरी

राधामोहन सहज सनेही ।
सहज रूप गुन सहज लाड़िले, एक प्रान द्वै देही।।
सहज माधुरी अंग अंग प्रति, सहज रची (है) वन गेही।
व्यास सहज जोरी सौं मन मेरे, सहज प्रीति कर लेही।।५।।

मोहन मोहनी संग ।
सुख में, रस में, आनन्द में, गुन गन में, सम्पति अंग।।
सहज प्रीति रस रीति बपु धर्‍यौ, रचे सहज रस रंग।
सहज विलास रास में सहज माधुरी उरज उतंग।।
सहज बसन, भूषन में सहज विनोद मोद अनुषंग[३]।
सहज सु राग भोग में सहज सखी सेवत सुःख अभंग।।
सहज मृगज, मलयज, कुँकुम, कर्पूर सुगंध लवंग।
व्यास सहज विधु सरद बसंत, विपिन ब्रज वारि विहंग।।६।।

सहज वृंदावन सहज विहार ।
सहज स्याम स्यामा दोऊ कामी, उपजत सहज विकार।।
सहज कुंज-रस पुंजनि वरषत, सहज सेज सुख सार।
सहज सैंन नैंननि दै सहज हँसनि, भुवभंग सिंगार।।

---

१. गहरा २. मुरझाई हुई, फीकी ३. युक्त

सहज अधर मधु चूँवत सहज सचिक्कन बगरे वार।
सहज उमग भेंटत दुख मैटत, पीन पयोधर भार।।
सहज गंड खंडित दरसित जनु विकसे सुपक्व अनार।
सहज सुरति विपरीत सहज कुंजनि किये मार सुमार[1]।।
सहज व्यास सहचरि झकझोरत, अंचल चंचल हार।
सहज माधुरी सागर नागर, धन्य अनन्यनि के आधार।।७।।

भौतिला व गौरी

मेरौ श्याम सनेही गाइयै। तातैं वृंदावन रज पाइयै।।
श्रीराधा जाकी भाँवती करि कुंजनि कुंजनि केलि।
तरुन तमालै अरुझी मानौं, लसति कनककी बेलि।।
महा मोहनी मोहियौ रति रास विलासनि लाल।
कुच कमलनि रस वस कियौ, लट बाँध्यौ मनहुँ मराल।।
नैंन सैंन सर मनु बिधयौ हौ, तनु बेध्यौ कल गान।
अंजन फंदनि कुँवर कुरंग बँध्यौ, चलि भौंह कमान।।
नकबेसरि बंसी लग्यौ, छवि जल चित चंचल मीन।
गिधयौ[2] अधर सुधा दै वदन चकोर कियौ आधीन।।
अंग अंग रसरंग में हो मगन भये हरि नाह।
व्यास स्वामिनी सुख नदी पिय संगम सिंधु प्रवाह।।८।।

जिला —

मेरौ स्याम सनेही गाइयै।
वृंदावन कौ चंद्रमा राधा पति गति जो पाइयै।।
छैल छबीलौ भाँवतौ नैंननिही माँझ दुराइयै।
निर्धन कौ धन श्यामरौ, भागिनि पायौ न दिखाइयै।।
अंग अंग सब रँग भर्‌यौ मुख देखत ताप बुझाइयै।
जासौं बिछुरन कबहुँ नहिं ता हरि सौं हित उपजाइयै।।
सब सुखदाता जग-पिता के है, अनत न जाइयै।
हरि सौं प्रीति प्रतीति कै अब, मन मनसा न चलाइयै।।

१. पराजित २. चसका लगना, लुब्ध

कौतिक अवधिविनोद की लीला रस सिंधु बढ़ाइयै।
स्याम सिंह के सरन रहत माया हिरनी विझुकाइयै[1]।।
तब सुख संपति जानिवी जब एक चित्त मन लाइयै।
देखि विहरत जुगल किसोर व्यास तब दासनि कौ सिर नाइयै।।९।।

गौड़ मलार –

स्यामा स्याम रति आसार।
सुभग वृंदाविपिन बाढ़ी सुख-नदी रस-धार।।
नारदादि शुकादि गावत, कुंज नित्यविहार।
प्रेम वस ब्रज वल्लवी तजि, नेम कुल आचार।।
ब्रह्म सिंभु सुरेस सेस न लेस जानत नार।
व्यास स्वामिनि सुजस जगिमगि रह्यौ जुगनि उदार।।१०।।

सारंग व धनाश्री

सहज प्रीति राधासौं हरि करि जानीरी।
जसु रसु स्यामा स्याम जु राख्यौ, वृंदावन रजधानीरी।।
परिवसी राउ[2] रसिक-नृपतिनि की, परिपाटी पहिचानीरी।
सब विधि नाइक गुनगन लाइक, नवल राधिका मानीरी।।
मान करत हँसि चरन धरत, अपमानु करति ब्रजरानीरी।
लोक चतुर्दस की प्रभुता तजि, सहज दीनता मानीरी।।
अंगनि पट भूषन पहिरावत सेवा करत रवानी री।
तोरत तृन जु दिखाइ आरसी, वारि पियत पिय पानीरी।।
विविध विनोद विहार अधार की, घर घर कहत्त कहानी री।
अद्भुत वैभव निरखि, सची अरु कमला रति बिलखानी री।।
चारि मुकति नवधा दसधा गति, जहाँ रहत अरगानी[3] री।
यह कौतिक देखत ललितादिक तृपति न सदा अघानी री।।
खग, मृग, गो, सरिता, सरवर दंपति कौं ये सुखदानी री।
संतत सरद वसंत विराजति लाजत सुनि अभिमानी री।।

---

१. डराना २. प्रेमियों के राजा अथवा पराधीन राजा ३. मौन हो गई

ता महिमाँहि कहत विथकित भई, वेद उपनिषद् वानी री।
यह लीला अब मंद व्यास पै, कैसैं जात बखानी री।।११।।

राग धनाश्री–

सुनी न देखी ऐसी जोट।
उपजी अबहीं कै पहिलैंहीं यह रूप गुननि की पोट[1]।।
गौर स्याम सोभा मानौं कंचन मर्कत के गिरि कोट।
भामिनि चलत न देखत चरननि तुंग कुचनि की ओट।।
घटत न बढ़त एक रस दोऊ जोवन जोर झझोट[2]।
रति रन वीर धीर दोउ सनमुख सहत समरसर चोट।।
वृंदारण्य अनन्य खेत के, सम-रस नित्य गभोट[3]।
व्यास उपासिक प्रभुहि न जानत, नीरस कवि कुल खोट।।१२।।

सारंग व देवगन्धार ––

सुनि राधे तेरे अँगनि पर सुंदरता न बची।
लोक चतुर्दस नीरस लागत, तेरे सरीर सची।।
पद-नख की छबि निरखि विलखि रति कमला आइ लची।
तो कारन सुत पति गृह सब तजि, गोपी रास नची।।
किसलय दल कुसमनि की सैया कौतिक अवधि रची।
सहज माधुरी रोमनि वरषत, रति रन कीच मची।।
तोसी नारि न पुरुष स्याम सो, विधि बेकाज पची।
व्यास सुमेरु कोटि की पटतरि, क्यौं पावै गुँगची।।१३।।

राग सारंग–

बने अंग अँग जनु रँग नग चोखे।
केसरि, चोबा, हीरा, मर्कत लाल, काल बल ओखे[4]।।
गौर स्याम सोभा बादर में, उपमा सागर सोखे।
पाँचि पिरोजा[5] पदिक[6] पदारथ, पुंज गुंज[7] सौं जोखे[8]।।

---

१. राशि २. झकझोर ३. रसपूर्ण ४. दूषित ५. एक प्रकार का रत्न ६. हीरा ७. घुंघची ८. तौलना

पोति जंगालि[1] जोति नहिं मोतिहि स्वाँति बूँद पय पोखे।
विविध वरन घन दामिनि दार्‌यौं[2] कुसुमनि कौ संतोखे।।
कंचन घट बिद्रुमहि परी चिट[3], और सबै निरदोखे।
(श्री) व्यास स्वामिनी की छवि वरनत कविन परत दिन धोखे।।१४।।

राग सारंग —

घूँघट पट न सम्हारति प्यारी
उर नख अंक ससि जनु तिलकन सुंदर सरस सिंगारी।।
मरगजी माल सिथिल कटि किंकिनि, स्वेद सलिल तन सारी।
सुरत भवन मोहन् बस कीनैं, व्यासदासि वलिहारी।।१५।।

सारंग व नट —

सुनहुँ किसोर किसोरी चोरी प्रगटत भोर सिंगार।
छूटी लट पट पलटि परे छबि, पीत पिछौरी सार।।
अंग सुरँग दुरंग हठीले, गाँठि-गठीले हार।
दुगुन दसन मंडित गंडनि पर, खंडित अधर उदार।।
कुच नख रेख निमेषनि नैंननि, सैंन सुवेष सुढार।
सुरत समर सुख सूचत मोहन, उपजत कोटि बिकार।।
गौर स्याम सलिल सागर मिलि, बिसरी विधि कुल धार।
व्यास स्वामिनीके रस वस हरि कीनैं मार सुमार।।१६।।

अति आवेस केस विगलित जनु दामिनि तर वरषत घन घोरी।।
निरखत अद्‌भुत छवि उपजति जनु सुख सागर में बोरी।
मोहन अंग अनंग कीच महँ, नख सिख कुँवरि चचोरी[4]।।
रसिक सिरोमनि गुनसागर की, सींव सुदृढ़ हरि तोरी।
हित चित दासी करि परिहासी, कर अंचल झकझोरी।।
पुजवति आस व्यास की जुग जुग राज करौ यह जोरी।।१७।।

---

१. नीला रत्न २. विदीर्ण ३. दरार ४. आस्वादन करना

गावति आवति पिय सँग स्यामा।
केलि सँग तैं भोर चले उठि, विधु सम मनहुँ त्रिजामा[1]।।
छूटी लट टूटी मुकतावलि लर लटकति अभिरामा।
उरज करज अंकित मृगमद मनहुँ माह मौरै हैं आमा।।
बिलुलित कटि पर अरुझानैं पट, तिरनि[2] रुनित मनि दामा।
जनु संग्राम विषय सुख सूचत, बाजत काम दमामा[3]।।
बिहसति हसति बिखंडित सैंननि बँक बिलोकनि बामा।
व्यास स्वामिनि की उपमा कह, ललकौ काम ललामा।।१८।।

देव गन्धार –

आवत गावत प्रीतम दोऊ बने मरगजे बागें।
सुरत कुंज तैं चले प्रात उठि, पिय पाछैं धन आगैं।।
छूटी लट टूटी बनमाला, अध घूँघट चल पागैं।
फूले अधर पयोधर मंडित गंड बिराजत दागैं।।
नख-सिख विषिख कुसुम[4] की सेना, रन छूटी जनु बागैं।
व्यास स्वामिनी कौ सुख सर्वसु, लूट्यौ स्याम सभागैं।।१९।।

राग सारंग –

झूलत कुंजनि कुंजकिसोर।
सुरत रंग सुख सैंननि सूचत, नैंन रँगीले भोर।।
सिथिल पलक महँ बंक बिलोकनि, बिहँसनि चित वित चोर।
फिरि फिरि उर लपटात समात न, फूले तन कुच कोर।।
अधर मधुरमधु प्याइ जिवाये विवि बर बदन चकोर।
मादक रस रसना न अघाति, लहति मंडल चल छोर।।
बीचि बीचि नाँचति मिलि गावत, कल सुर मंदर घोर।
रीझि पुलकि चुंबन करि कुलकित, झुलवति जोवन जोर।।
हरिवंशी फूलत हरिदासी, निरखत सुरत हिण्डोर।
व्यासदास चंचल अंचल करि, मोद विनोद न थोर।।२०।।

---

१. रात्री २. नीवी ३. नगाड़ा ४. कामदेव

नट तथा षट्–

आजु पिय के सँग जागी भाँमिनी।
चोरी प्रगट करत तेरे अँग, रति रँग राचे जाँमिनी।।
भूषन लट अंचलु न सम्हारति, हँसति लसति जनु दाँमिनी।
पुलकित तनु श्रम जलकन सोभित, बेपथजुत गजगाँमिनी।।
फूले अधर पयोधर लोचन, उर नख भुज अभिराँमिनी।
गंडनि पीक मषी[1] न दुरावति, व्यास लाज नहिं काँमिनी।।२१।।

देव गन्धार –

कहा निसि जागे रसिक सुजान।
सुरत रंग, अँग अंग रचे हैं, दुरवत अपनै जान।।
नैंन कपोल पीक रस मंडित, खंडित अधरनि पान।
बिगलित केस कुसुम-कुल वरषत, उर लागे नख बान।।
मनिमय माल हृदै आलंकृत, कुच जुग उरज बितान।
मानहुँ उड़गन सहित गगन महँ, मिले उभै ससि भान।।
नख-सिख प्रति, रति रस वरषावति, विटकुल नृपति निदान।
बिथकित कोटि व्यास कवि मति या छबिकी उपमा न आन।।२२।।

राग गौरी –

आजु पियके सँग जागी राति।
दुरति न चोरी कुँवरि किसोरी, चीन्हैं परसति गाति।।
पुलकित कंपित गातनि संकति, बात कहत तुतराति।
जावक, पीक, मषी रँग रंजित, सारी स्वेद चुचाति।।
छुटी चिकुर चंद्रिका उरजनि पर, लटकति लर पाँति।
मानहुँ गिरिवर कंचन ऊपर, मेघ घटा धुरवाति।।
खंडित अधर पीक गंडनि पर, लोचन अलस जभाँति।
हँसति अकोर देत चित चोरति, अंग मोरि ऐंड़ाति।।
कहा कहा रति वरनौं वैभव, फूली अंग न माति।
वेगि दिखाउ बहुरि यह कौतिक, व्यास दासि अकुलाति।।२३।।

१. काजल

राग सारंग—

देखि सखि आँखिन सुखदैंन दोऊ जन।
विथुरि-अलक पीक-पलक, खंडित-अधर,
मंडित गंड, शिथिल-वसन गौर साँवरे तन।।
नव निकुंज, कुसुम-पुंज रचित सैंन मैंन,
केलि कलित दुहुँ अँगअँग श्रम-जल झलकन।
आवेस अरुन चकित नैंन चाहत विवि कमलनैंन,
सैंननि कछु कहत व्यास दासी जन।।२४।।

आज कछु तनकी छबि फबि आई।
कहत न बनति देखि मुखसुख अति, दुख पुनि कहत न जाई।।
निसिकी विपति विसरि गई प्रातकी संपति उर न समाई।
रंग दुरायैं दुरति न अंगनि, कहि दीनी चतुराई।।
व्याकुलता इतकी जु लालचिनि, लाज सरीर सहाई।
विकल वेदना अधिक व्याधिकी, मिटत न पीर पराई।।
जाकी प्रकृत्ति विकृत्ति रस राच्यौ, तासौं कछू न बसाई।
सुनत हियमें राखि व्यासकी स्वामिनि पिय पहँ[1] आई।।२५।।

सारंग व गौरी—

पिय प्यारेहि कहाँ छाँड़ि आई।
लैंन गईही दैंन परम सुख, मुख दिखाइ दुखु लाई।।
अंग अनँगनि कीसी नगरी, नागर सुवस बसाई।
दोऊ सुरत परस्पर राचे, थाती लूटि लुटाई।।
वंक निशंक ससंक नैंन छबि, स्याम अरुन सित झाई।
एक चोर पहँ चौरमंडली, कैसैं दुरति दुराई।।
देखत कुच नखरेख निमेष लगावति हँसनि सुहाई।
विहरत व्यासस्वामिनी भोर, किसोर हियैं न समाई।।२६।।

---

१. निकट

विराजत स्याम उनीदे नैंन।
अरुन अलस इतराति रँगीले, सूचत रति रस चैंन।।
निसि कौ अनुभव भोर न भूलत, चितु-वितु चोरत सैंन।
भुवविलास कल हाँस न विसरत, जुव सौं कहैं जु वैंन।।
अजहूँ कर कुंचित रँग रंजित, सकुचत कुचनि गहैंन।
उर कम्पित मुख चुँवनरस सुख जाचत वनित धरऐंन।।
अजहूँ बाहूँ उछाहु करति बलि, भैटत तरुनि गहैंन।
वलित कुटिल कटि ललित नेति रट, भामिनि,भारु सहैंन।।
कोक-कला अँग अंग नचावति और गुननि गति मैंन।
अद्‌भुत कथा व्यासके प्रभुकी, मोपै कहत बनैंन।।२७।।

निरखि मुख कौ सुख नैंन सिरात।
सैंननि कौ सुख कहत बनै नहिं, निमेष ओट मुसिकात।।
अंग अंग आलिंगन के रस, रोमनि पुलक चुचात।
कुच गहि चुंवन करत अधर मधु पीवत जीवत गात।
व्यास वंश निधि सब निसि लूटी किसोर भोर पछतात।।२८।।

सैंननि बिसरे नैंननि भोर।
बैंन कहत कासौं पिय हियमैं, विहँसत कितब किसोर।।
दुख मैंटत भैंटत तुमकौं नहिं, चुंवन देत न थोर।
काहि देत जोवन धन करि गहि लै कुचकोर अकोर।।
काके पाँइ गहत मेरे प्यारे कासौं करत निहोर।
कौंनैं विकल किये नव नागर, तुम पनिहाँ[1] तुम चोर।।
निजु विहार आरोपि अन्तःपुर कोपि मान-गढ़ तोर।
व्यासस्वामिनी विहँसि मचाई, सुरत समुद्र हिलोर।।२९।।

यातैं माई तेरे नैंन विसाल।
यातैं उनमद पिय पुतरीमें, घरु कीनौं नँदलाल।।

१. भेद जानने वाला

याही तैं विंबाघर जलधर, बरषावति सब काल।
याही तैं त्रिषित पपीहा पियकौ, करत सदा प्रतिपाल।।
याहीतैं कुच सकुचत नाँहीं, पीन कठोर रसाल।
तातैं हरि मन कूँ हरिलीनौं, कसि कंचुकि बँद जाल।।
याही तैं तुव चरनकमल की पिय पहरी उर माल।
याहीतैं मान सरोवर बूढ़त, उबरे कुँवर मराल।।
बोलनि चितवनि हँसनि छबीली, गावति नाँचति चाल।
(श्री)व्यास स्वामिनिहि बरनि सकै को,नीरस कुकवि शृगाल[1]।।३०।।

गौरी—

नैंननि नैंन मिलत मुसक्यानी।
मुख सुखरासि निरखि उर उमगत, दुख करि लाज लजानी।।
आरज पथ बेपथ करि भाज्यौ, संका सकुचि उरानी[2]।
धीरज सटकतहू नहिं मटक्यौ मानु गयौ अभिमानी।।
आस गई उपहास त्रास सँग, सुधि बुधि अंग समानी।
रह्यौ न अंतरु डरु करि दूती सब धूती[3] मुरझानी।।
तनसौं तन मनसौं मन मिलियौ ज्यौं पिय पय में पानी।
रसिकनि की गति व्यास मंद पहँ कैंसैं जात बखानी।।३१।।

राग सारंग —

वन की कुंजनि कुंजनि केलि।
विविध वरन वीथिनि महँ वीथी, विगसित नव द्रुम बेलि।।
तिनि महँ सहज सेज पर स्यामा स्याम बिराजत खेलि।
अंगनि कोटि अनंग रंग छवि सुरत सिन्धु महँ झेलि।।
मुख विधु वारिज पर लट लटकति, अंसनि पर भुज मेलि।
मादक अधर सुधामधु पीवति, जीवति नवल नवेलि।।
जोवन जोर किसोर जगे रस निसि, भोरहि अवहेलि[4]।
व्यास स्वामिनीहिं सेवत मोहन, निज वैभव पग पेलि।।३२।।

१. सियार २. समाप्त हो गई ३. कम्पित ४. उपेक्षा, ध्यान न देकर

कम्मोद—

जुगल जन राजत जमुना तीर।
नंदनँदन वृषभाननंदिनी, कृतरुचि कुंज-कुटीर।।
कुसुम-सेज-सजि साजु सुरतकौ, सौंधौ भूषन चीर।
कल सीकर मकरंद कमलके, परसत मलय समीर।।
कुच-गहि चुंवन करत परस्पर, परिरंभन रसवीर।
मुख मुसक्यात गात पुलकित सुख, मुखरितु मनिमंजीर।।
खर[1] नख सर उर उरजनि लागत,नभ गत[2] सही सुभीर।
वैंन कहत रस अैंन सैंनदै, नैंननि करै अधीर।।
विगलित केस सुदेस रोम वरषत सोंमनि[3] श्रमनीर।
विरह जनित दुखवाकै वैरी, मारि करे सब कीर।।
विविधि विहारनि ललितादिक की, दूरि करत सब पीर।
व्यास किसोर भोर नहि विछुरत, जोवन जोर सरीर।।३३।।

षट —

जमुनाजल खेलत जुगलकिसोर।
सुरत विवस सब राति जगे दोउ, कोऊ न विछुरत भोर।।
पानि कमलमुख जलभरि तकि तकि, छिरकत वोट हिलोर।
नैंननि नीर लगत नहि सकुचत, अरुझत जोवन जोर।।
बुड़की लै उछरति एकहि-सँग, अंग सहत झकझोर।
तरत न डरत प्रवाह पग पेलत, खेलत मिलि दुरि चोर।।
करतल ताल बजावत नाचत, गावत मंदर घोर।
व्यासदासकी स्वामिनी पियहि, मिली दै उरज अकोर।।३४।।

राग धनाश्री—

मान करि मानसरोवर खेलति।
ग्रीषम ऋतु रजनी सजनी सँग, विरहताप पग पेलति।।

---

१. तीक्ष्ण २. निकट से (आमने सामने) ३. फूल से (फूल जैसे सुकुमार वपुओं से)

बुड़की लै जलही जल आये, हरि सहचरि कौ वपु धरि।
थाँह लेतही जहाँ राधिका, धाइ धरी आँकौं भरि।।
परिरंभन चुंवन पहिचान्यौं, नागरिजान्यौं नागर।
इहिंविधि जल थल विहरत छलबल, व्यास प्रभु सुखसागर।। ३५।।

राग मारंग—
रति रस सुभग सुखद जमुनातट।
नव नव प्रेम प्रगट वृंदावन, विहरत कुँवरि नागरि नागर नट।।
शीतल तरल तरंग अंबु-कन वरषत पदम पराग पवन वर।
कुसुमित अमित कुसुम-कुल परिमल, फूलत जुगलकिसोर परस्पर।।
विविधि विलास रास परमावधि, गावत मिलि दोऊ रीझति अति।
मधुप, मराल, मोर, खंजन, पिक, विथकित अद्भुत कोटि मदन रति।।
कुंकुम कुसुम सयन मंजुल मृदु, मधु पूरित कंचनमय भाजन।
रजनीमुख सनमुख दल साजत, सुभटनि लौं जूझत लाजत न।।
अति आतुर कंचुकि बँध खोलत, बोलत चाटु वचन रचनाँ रचि।
नेति नेति कल-बोल श्रवनिसुनि, चरनकमल परसत मोहन लचि।।
इहिंविधि करत विहार मगन दोऊ, पोषत रति सुखसागर।
व्यास ललित लीला ललितादिक देखत रसिक उजागर।।३६।।

विलावल व विहागरौ—
सुभग राधामोहन के गात।
विहरत अंग अंग विवि तन मन, सहज मधुरता तात[१]।।
निरुपम अति उपजति छबि कविकुल उपमा कौं अकुलात।
वर वंधूक अति मूक होत सब, मनु मनसाहि लजात।।
कोटि कोटि जौ कीजै बुधि बल सरवा सिन्धु न मात।
कैसैं व्यास रंककी वसनी[२], लंक सुमेरु समात।।३७।।

१. प्रवाह २. मुद्रा रखने की थैली

राग सारंग—

देखत नैंन सिरात गात सब नागरता की खानि।
कोटि चंद्रमनि मंद करत मोहन मुख मृदुमुसकानि।।
खंजन मीन मृगज कुंजनि, मन हरति चितै नैंनानि।
कोटि काम कोदंडनि खंडित, भ्रू-भंगनिकी वानि।।
केस निचय घन रुचिजसकरी, कुंतल अलि वलि जानि।
उरज करज[1] गजकुंभ हेमघट, श्रीफल छबिकी हानि।।
दाख सिता मधु सुधा मुधा[2] तैं (या) अधरामृतु पहिचानि।
बाहु विलोकत उपजी सकुच, मृनाल भुजंग लतानि।।
दसननि देखि दुरी दामिनी, दार्यौ[3] उर अति अकुलानि।
व्यासस्वामिनी स्याम भामिनी सबअंगनि सुखदानि।। ३८।।

षट—

कौंन कौंन अंगनिके रंग रूप वरनौं।
तिनके रस विवस स्याम रहत सदा सरनौं।।
कामातुर कुँवर धाइ धरत सीस गौर चरनौं।
अधर-सुधा-पान मिटत विरहताप जरनौं।।
मधुर वचन रचना सुनि अति जुड़ात करनौं[4]।
नैंननिकी ओट होत आनि बनत मरनौं।।
व्यासदासि आसअधिक अनत नहीं सरनौं।।३९।।

राग सारंग—

उरज जुगल पर सहज स्याम छबि उपमा कह कवि पचिहारे।
रूप वरन गुन जस रस राचे, सुखकी रासि दुखारे।।
कनक-कमल मकरंद पिवत अलि,चलि नहिं सकत सुखारे।
मानौं नूतमंजरिनि बैठे, कोकिल करत कुरारे।।
नखसिख सुंदर कनकलता के फल जनु रसमय भारे।
मानौं हितकरि वदन दिठौना कज्जल विंदु अन्यारे।।

१. हाथी का बच्चा २. व्यर्थ ३. विदीर्ण ४. कान शीतल होते हैं

बिनु भूषन भूषित पट सुंदरि, सहज सिंगार विसारे।
व्यासस्वामिनी वैरी मेरे प्राननिके रखवारे।।४०।।

सारंग व नट—

सबै अँग कोमल उरज कठोर।
कहि काहेतैं आपुन गोरे, सुंदर स्यामल वोर[1]।।
ते बाँधे रिस कैं कंचुकि महँ, ये मेरे चितचोर।
तोरि तनी चमकत जोबन बल, माँगत नैंन अकोर।।
मोहू पीठि दई इन लोभिनि, कीनौं कपट न थोर।
ताकौ फल पावत हैं निसदिनु दसनखकी झकझोर।।
निर्दय हृदय भेदत जु वैरि करि, डरत न अपनैं जोर।
व्यासस्वामिनी इनसे हैं ऐई, प्रान जीवनि धन मोर।। ४१ ।।

कामोद—

सब अंगनि के हैं कुच नाइक।
जिनि पर पहिलैं दृष्टि परतही, मया[2] होत मन भाइक।।
मनकौ दुख न हरत मुख देखत, ताप नसावत काइक।
पीर व्याधि मैटत देखतहीं, कर परसत सुखदाइक।।
दोऊ सूरवीर रति रन में, टरत न सनमुख पाइक।
मेरौ उर वेधत तो कारन, सहत नखर नख साइक[3]।।
घूँघटपट अंचल चोलीबँध ये सब मेरे घाइक।
व्यास स्वामिनी प्रेम नेमतैं, हौं कछूक तो लायक।।४२।।

धनाश्री—

बधिकहुँ तैं अधिक उरजकी चोट।
अनी अन्यांरे बान धनुष बिनु, तकि बेधत तन-वोट।।
मोहन मृग मोह्यौ बिनु नादहि, लगत न जानत चोट।
व्यासहि वरवस हाव[4] कियौ हठि, चंचल अंचल ओट।।४३।।

१. कुचाग्र २. भ्रम ३. बाण ४. पास बुलाना

राग सारंग—

पाछैं बैठे मोहन मृगनैंनींकी बैंनी गुहत,
सोभा न कही परै देखत नैंन सिरात।
नखछबि रवि जानि पानि-कमल फूले,
निकसि चली अलि सैंनी अधरात[१]।।
मानौं वारिज विधुसौं रिपु मति तजि,
सदल सुधा पीवत न अघात।
श्याम-भुजंगिनिके डर डोरी बांधत,
व्यासकी स्वामिनीकौ सुंदर अकुलात।।४४।।

नट—

वैंनी गुही मृगनैंनीकी पिय।
चंपकली सोहति अलकनि बिच,
मोहति मन नैंननि सुख लागतु,
निरखि आरसी उमग भई जिय।।
नखसिख अंग बनाइ रँग-रस-रचि,
मिलवत हियसौं हिय।
गुनगन निपुन व्यासकी स्वामिनी,
रति महँ गति उपजावति,
गावतसी तत् थेई तताथिय।।४५।।

कमोद—

पाटी सिलसिली[२] सिर लसति।
सहजसिंगार सुकेसी केसनि, स्वरन जूथिका लसति।।
रंगभरे नग मंग विराजत, लाजत मुक्ता, मन न खसति।
मृगनैंनीकी वैंनी मानहुँ, स्याम भुवँगिनि विधु मधुहि ग्रसति।।
अनुपम छबि देखैं दबि रहै सुखमा, सकुचि रमापति पछपाइ हँसति।
व्यासस्वामिनी पियके हियतैं, निमिष न इत उत धसति।।४६।।

१. अधीरता पूर्वक २. माँग के दोनों ओर का शिथिल (सिलसिली) केश विधान

सारंग—

आजु बनी वृषभानुदुलारी।

अँगराग भूषन पट रचि रुचि, मोहन आपुन हाथ सिंगारी।।
चिकुरनि चंम्पकली गुहि वैंनी डोरी रोरी मॉंग सँवारी।
मृगज विंदुजुत तिलक इंदु छबि झलकति, अलक मनहु अलिनारी।।
श्रवननि खुटिला[1] खुभी[2] झुलमुली[3], नैंननि अंजन रेख अन्यारी।
नाशापुट लटकनि नकवेसरि भौंह तरंग भुजंगिनि कारी।।
मन्दहास वसि वलि दामिनि जलधर, अधर कपोल सुढ़ारी।
कंठपोति उर-हार चारु कुच, गरु नितंब जघननि अतिभारी।।
गजमोतिन के गजरा, हाथनि, चारु चुरी, पहुंचिन पर वारी।
नील कंचुकी, लाल तरौटा[4], तनसुख की तन झूमक सारी।।
नखसिख कुसुम विसिख[5] रस वरषत, रौमनि कोटि सोम[6] उजियारी।
व्यासस्वामिनी पर हँसि तृन तोरत,रसिक निहोरत जय जय प्यारी।।४७।।

कान्हरो

आजु बनी वृषभानुदुलारी।

नव निकुंज बिहरत प्रीतम संग, मंद पवन चाँदिनि उजियारी।
भूषन भूषित अंग सुपेशल,नील वसन तन झूंमक सारी।।
चिकुर चंद्रकनि चंपकली गुहि, सिर सीमंत सुकंत सवारी।
मनिताटंक विलोल कपोलनि नासामनि लटकनि लटकारी।।
झलकति अलक तिलक भौंहनि छवि, नैंननि अंजन-रेख अन्यारी।
स्याम दसन सित चौका[7] चमकत, अधर विंव प्रतिविंव विहारी।।
कुच गिरि पर घनस्याम कंचुकी, कृस कटि, जघनि नितंवनि भारी।
तरुवनि कुमकुम नखनि महावर पद मृगमद चूरा चौधारी।।
नखसिख सुंदरता की सीवाँ व्यास स्वामिनी जस पियप्यारी।।४८।।

---

१. कर्णफूल २. लौंग के आकार का कर्ण भूषण ३. चमकदार ४. अतरौटा ५. कामदेव ६. चन्द्रमा ७. आगे के चार दांतों की पंक्ति

सारंग

सुभग सुहागिल नवल दुलारी।
नखसिख अंग रंग सागर छबि, नागर सुहथ सवारी।।
गजमोती सिर सुंदर बैंनी, जनु अहि वधू[१] मन्यारी[२]।
चिकुरनि चंपकलिन की रचना, सिंदुर सरस पनारी।।
अलक तिलक झलकत गंडनि पर, ताटंकन लटकारी।
भौंह धनुष सर नैंन मैंन हन[३] ,अंजन रेख अन्यारी।।
अधर सिंधु सर राधा मोहन विहँसत दसननि उजियारी।
सोभित स्यामलविंदु चिबुक शुक नासा ललित रवारी[४]।।
बाहु मृनाल नाहु के अंसनि, पीन पयोधर भारी।
नील कंचुकी, लाल तरौंटा, लटकत झूमक सारी।।
गुरु नितंब किंकिनि-रव कृसकटि जघननि बीच विहारी।
मुखरित मनिमंजीर अधीर करति रति गति की चारी।।
निभृत-निकुंज-भवन महँ सुखपुंजनि वरषत पियप्यारी।
विविध विनोद मोद दिन देखति, व्यासदासि बलिहारी।।४९।।

कम्मोद

सोहत सिर सार[५] की उढ़ैंनी।
नारी कुंजर[६] कौ लंहगा कटि, किंकिनि पर रूरकत है बैंनी।।
तनी तरतनी कुचुकि की कसि, लेत उसास उरज उर उमगे,
रहसि स्यामहि मिलि मृगसावक नैंनी।
रति रस सूर व्यास की स्वामिनि, दामिनि सी चंचल घन महँ,
जनु वरषावति सरनि हँसति चैंनी।।५०।।

विलावल व विहागरो—

गौर मुख चंद्रमाँ की भाँति।
सदा उदित वृंदावन प्रमुदित, कुमुदिनि वल्लभ जाति।।

---

१. नागिन २. शोभायुक्त, मणि युक्त ३. पराजित करने वाले ४. समानुपात वाली ५. वस्त्र विशेष ६. वस्त्र विशेष

नील निचोल गगन में सोभित, हार तारिका पाँति।
झलकति अलक,दसन-दुति दमकति मनहुँ किरनि कुल काँति।।
गंड कोष पर श्रम-जल ओस जु, अधरनि सुधा चुचाति।
मोहनकी रसना सु चकोरी, पीवति रसु न अघाति।।
हँास कला-कुल सरद सुहाई, तन छबि चाँदिनि राति।
नैंन कुरंगिनि, कटि सिंघनि डर, उनि पर अति अनखाति।।
नाह निकट, नहिं राहु विरहु डरु, पट सोभा न समाति।
देखत पाप न रहति व्यास दासिनि तन ताप बुझाति।।५१।।

राग सारंग—

राधावदन चंद्रमाँकी जुन्हईया शीतल सुखदाई।
नंदकिसोर चकोर पियतु हूँ, अरु पूजी न अघाई।।
हरषित स्याम तनूरुह भूरुह, वरषत श्रम-जल ओस सुहाई।
अधरसुधा मकरंद माधुरी, वृंदाविपिन पुरंदर पाई।।
हाँस-कला फबि पूरन मंडल, संतत राकातिथि जु बढ़ाई।
भूषन निकर किरन नग परसत, विरह तरनि तन ताप बुझाई।।
महाराज वृषभान घरनि वपु प्राचीदिसि जु जननि जग गाई।
वल्लवकुल सागर अति प्रमुदित,निरखत व्यासदास वलिजाई।।५२।।

नट—

प्यारी तेरे वदन-कमल-रस अटक्यौ लालन अलि।
तनसौं तन मनसौं मन अरुझ्यौ न सकतु चलि।।
तुव वृंदावन कनक बेलिसी रही उरजनि फलि।
यह सुख निरखत व्यासदास जाइ बलि।।५३।।

नट व खट

देखि सखी राधामुख चारु।
मनहुँ छिड़ाइ लयौ इनि सब उपमानिकौ रूप सिंगारु।।

दारयौ[1], दामिनि, कुंद मंद भये, दसननि दै सतु सारु।
विद्रुम वर वंधूक बिंब मिलि, अधरन दै रस भारु।।
शुक, किंसुक, तिलकुसुम तज्यौ मद निरख नासिका ढारु।
सुभग कपोलनि बोल दियौ तनु, अधिक मधुप उदारु।।
खंजरीट, मृग, मीन, कमल नैंननि कीनौं सब आरु।
अंजन भौंहनि धनुष कियौ रद, चल सैंननि सिरदारु।।
चंदन बिंदु ललाट इंदु सम, अलकनि किरनि प्रसारु।
नकवेसरी तरौना तरका[2] श्रवन कुरंग उफारु[3]।।
स्यामल रसमय चिकुरनिके डर, मेघन परयौ विडारु[4]।
बैंनी लट पटतरहि डरानौं, भुजंगनि गह्यौ पतारु।।
स्याम सहित स्यामाहि विलोकत भूल्यौ रतिहि भरतारु।
कमला कहति सुनहुँ पति, दंपति पर वारौं संसारु।।
गौरस्याम सोभा सागरकौ, नाँहिन वारापारु।
व्यासस्वामिनि की छबि आगैं, सकल सरूप उगारु।।५४।।

विलावल व विहागरौ—

राधे तेरे नैंननि काहूकी दीठि लगीसी।
लगत न पलक जम्हाँति मनौं खिजति सब राति जगीसी।।
झलमलाति ऐंड़ाति दृगसौं डारत लाज भगीसी।
लटकति लट मनौं हाथ देत, मोहन ठगु आजु ठगीसी।।
कज्जल बिंदु दिठौंना से कछू, पीक पराग पगीसी।
व्यास वचन सुनि विहँसति अति आनंद सिंधु उमगीसी।।५५।।

सारंग—

नैंन करसायल[5] से विडरे[6]।
मोहन रूप अनूप हरे तृन चाखत गर्व भरे।।

---

१. अनार २. फूल के आकार का कर्ण भूषण ३. भागना ४. तितर–बितर होना ५. कृष्ण मृग ६. गतिशील होते हैं

मनिताटंक जुगल फंदा लट फाँसी देखि डरे।
भौंह कमाँन बान बिनु जानैं, आतुर जियहि हरे।।
सरनु तक्यौ कच विपिन सघनमें, मदन वधिक निदरे।
व्यास त्रास कर भाजत वागुरि[१], घूँघट माँझ परे।।५६।।

अंजन पनिच[२] धनुष सम भौंहें।
वंक निशंक अनी अनियारे, लगत नैंन शर सोहैं।।
मुख सुखरासि नागकी फाँसि बँध्यौ मोहन मृग मौहें।
स्यामहि डर उपज्यौ देखत जनु कामि सिंघ विछौहैं।।
तजैं पीतपट नागर नट जानत मानहुँ बलदौहैं।
व्यासस्वामिनी त्रास हरि हँसि कुच गिरि पर आरौंहैं।।५७।।

निरुपम राधा नैंन तुम्हारे।
वंक विशाल स्याम सित लोहित, तरलित तुंग अन्यारे।।
अंजन छबि खंजन मदगंजन, मीन पानि बुड़ि हारे।
निसि शसि डरत पंकजकुल सकुचत, बधिकनि मृगज विडारे।।
पीक पलक भुव अलक कुटिल, विकट निकट घुँघरारे।
डरत न हरत परायौ सर्वसु, व्यास प्रान धन वारे।।५८।।

कमोद व कान्हरो

मनमोह्यौ री मेरौ नैंननि।
चितवत ही चित-वितु इनि चोर्‌यौ, फोर्‌यौ तनु घनसर सैंननि।।
यह छवि कहूँ न है, नहिं ह्वै है, कवि बपुरा कहि सकत न बैंननि।
यह गति खंजन, मीन कमल अलि, सुनी न देखी मिटैंननि।।
याहीतैं तेरे खरे पियारे, जातें मोहन वसतु सु अैंननि।
कच कुच चिवुक भौंहमें तेरे, श्रीव्यासस्वामिनी चैंननि।।५९।।

---

१. हिरन को फँसाने का जाल २. धनुष की डोरी

भौंतिला—

नैंन खग उड़िवेकौं अकुलात।
उरजनि डर बिछुरे दुख मानत, पलक पिंजरा न समात।।
घूँघट विटप छाँह बिनु विहरत, रविकर-कुलहि डरात।
रूप अरूप चुनौं चुनि निकट अधर सर देखि सिरात।।
धीर न धरत पीर कहि सकत न, काम वधिककी घात।
व्यासस्वामिनी सुनि करुना विहँसि पिय उर लपटात।।६०।।

धनाश्री—

नैंन बनैं खंजन से खेलत।
चपल पलक तारे अतिकारे बंक निसंक ठगौरी मेलत।।
भृंग कुरंग मीन कमलनिकी, भाँति काँति छबि कवि अवहेलत।
अंजनरेख विसिखि मद गंजन, सैंन चलनि मैंननि पग पेलत।।
घूँघट पट मँह चितै कुँवरकौ चितु चोरति रति सिंधुहि झेलत।
व्यासस्वामिनी तेरौ प्यारौ, बड़भागी सुखरासि सकेलत।।६१।।

गौरी व षट—

नैंननिहीं की उपमाँकौ को है री।
सैंननिहीं मैननि उपजावति, भौंहनि मन मोहैरी।।
वारिज अंग[१] विहंग, मीन, मृग, विनती सुनि को हैरी।
अञ्जन पर खञ्जन मधुकर, बलिजात गात तोहैरी।।
जिनमहँ बसतु लसतु अति मोहन, रति-सुख-रस दोहैरी[२]।
व्यासस्वामिनी सिखयौ मोहन वसीकरन सोहैरी।। ६२।।

सारंग—

नैंन छबीले कतहि दुरावति।
घूँघट पट पिंजरा महँ मानहुँ, खंजन जोट चुरावति।।
लेत उसास कुचन पर चोलीके बँद कतहि दुरावति।
व्यासस्वामिनी विहसि विरह बंधनतैं पियहि छुड़ावति।। ६३ ।।

---

१. कमलदल २. दोहन करना, प्राप्त करना

नटवा नैंन सुधंग दिखावत।
चंचल पलक शबद उघटत ग्रं ग्रं तत् थेई थेई गावत।।
तारे तरल तिरप गति मिलवत गोलक सुलप दिखावत।
उरप भेद भ्रूभंग संग मिलि रतिपति कुलनि लजावत।।
अभिनय निपुन सैंन सर अँननि, निसि वारिद वरषावत।
गुनगन रूप अनूप व्यासप्रभु, निरखि परम सुख पावत।।६४।।

भूपाली—

चितै मन मोहत पियकौ नैंन।
सर्वसु हरत करत रों रों[1] सुख, चल अलकनि विच सैंन।।
भ्रुवविलास कल हँास मनोहर, प्रगट नचावत मैंन।
व्यासस्वामिनी की अद्‌भुत छबि, कवि पै कहत बनैं न।।६५।।

राग धनाश्री—

दिनहीं दिन होत कंचुकी गाढ़ी।
बैठत पौढ़त चलत नई छबि, संभ्रम पियहि देखिकै ठाढ़ी।।
पोषी रस प्यौसार[2] माइकैं, खाति दूध की साढ़ी[3]।
बोलति चितवति हँसति धोखैं जाति राति रूठि जब करति उकाढ़ी।।
व्यासस्वामिनी के गुन गावत रसिक अनन्य सु ढाढ़ी।।६६।।

सारंग—

छिनहीं छिन जोबन सलिता बाढ़ी।
स्याम सजल-घन रतिरस वरषत, करार गिरावत चाढ़ी।।
सोभित भँवर फैंन कुल पंकज, पोषत पै दधि साढ़ी।
कुच-कठोर चकवनि पर कँचुकी चीन[4] तरंगिनि गाढ़ी।।
कंज मृनाल, व्याल, गज, खंजन केलि त्रास गहि काढ़ी।
मीन मकर वनसीमें वीधे, मृगमाला ढिंग ठाढ़ी।।
पथिक न वार पार पावत जस गावत दादुर ढ़ाढ़ी।
व्यासदास खग• उपवन सेवत, नेह सनेह न आढ़ी[5]।।६७।।

१. तीव्र सुख, सुख का कोलाहल २. पीहर ३. मलाई ४. एक प्रकार का रेशमी वस्त्र ५. व्यवधान

नवरंग नवरस नव अनुराग जसु नव गुन नव रूप नव जोबन जोर।
नव वृंदावन नव तरुवर घन, नवनिकुंज क्रीड़त नवलकिसोर।।
नव घन, नव दामिनि नवबूँदैं नवराग रागनि सुनि नटित नवल मोर।
नवल चूँनरी, नवल पीतपट, तन नवल मुकुट नव सिरपाटी फूल जोर।।
नव नव चूँवन, नव परिंरभन, नव कच मीडत नव कुच कोर।
नवल सुरत भाव हावनि प्रगटत देखत व्यासहि नव प्रीति न थोर।।६८।।

गौड़ मलार—

नव निकुंज सुख पुंज नगरकौ नागर साँचौ भूप।
मृगज कपूर कुमकुमा[1] कुंकुम कीच अगर दिसि धूप।।
संग षडंग सुधंग सुदेसी रागिनि राग अनूप।
जीवतु, निरखि लाड़िली-राधा-रानी कौ गुन रूप।।
नव नव हाव भाव अँग अंग अगाध सुरत रस-कूप।
व्यासस्वामिनी सौं हरि हार्‌यौ सर्वसु रति रन जूप[2]।। ६९ ।।

कल्याण—

चंद्र बिंब पर वारिज फूले।
तापर फनि के सिर पर मनिगन तर मधुकर मधुमद मिलि झूले।।
तहाँ मीन, कच्छप, शुक, खेलत बनसिहि देखि न भये विकूले।
विद्रुम दार्‌यौंमें[3] पिक बोलत, केसरि नख पद नारि गरूले।।
सरमें चक्रवाक वक व्यालिनि विहरत वैर परस्पर भूले।
रंभा, सिंघ बीच मनमथ घरु, तापर गान धुनि सुनि सुख मूले।।
सबही पर घनु वरषत हरषत सर सागर भये जमुना कूले।
पूजी आस व्यास चातक की, स्थाबर जंगम भये विसूले[4]।।७०।।

राग सारंग—

नव जोबन छबि फबति किसोरिहि देखत नैंन सिरात।
वलि वलि सुखद मुखारविंद की चंद वृंद दुरि जात।।

---

१. केसर २. जुआ ३. अनार में ४. आनन्दित

गौर ललाट पटल पर सोभित, कुंचित कच अरझात।
मानहुँ कनककंज मकरंदहि, पीवति अलि न अघात।।
दुखमोचन लोचन रतनारे, फूले जनु जलजात।
चंचल पलक निकट श्रवननि के, पिसुन कहत जनु बात।।
नकवेसरि बनसीके संभ्रम, भौंह मीन अकुलात।
मनिताटंक कमठ[1] घूँघट डर, जाल बिधे पछितात।।
स्यामकंचुकी माँझ सजि फूले, कुच-कलस न मात।
मानहुँ मद गयंदकुंभनि पर, नीलवसन फहरात।।
नखसिख सहज सुंदरिहि विलसत सुकृती स्यामलगात।
यह सुख देखत व्यास और सुख उड़त पुराने पात।। ७१ ।।

राधिका सम नागरी नवीन को प्रवीन सखी,
रूप गुन सुहाग भाग आगरी न नारि।
वरुन नागओक भूमि देवलोककी कुमारि,
प्यारीजू के रोम ऊपर डारौं सब वारि।।
आनँदकन्द नंदनँदन जाके रसरंग रच्यौ,
अंग वर सुधंग नच्यौ मानतु है अति हारि।
ताके बल गर्वभरे रसिकव्यासके न डरे,
लोक वेद कर्म धर्म छाँड़ि मुकुति चारि।।७२।।

देवगन्धार—

रूप गुन ऊषकौ रस राधिका पायौ,
सुजस और त्रियनिकौ छोई[2] आग।
अति करुनाकरि पिय हित कारन,
कुच-घट-भरि राख्यौ प्रेमहीकौ पाग।।
छिन-छिन भोग करत कामरोग नासै,
याही तैं न कह्यौ परै मोहनजूकौ भाग।
रोम रोम प्रति व्यासहिं कोटिक रसना,
होय तौ न वरन्यौ परै प्यारी कौ सुहाग।।७३।।

---

१. कछुआ २. रस निकाल कर फैंका हुआ गन्ने का छिलका

कम्मोद—

गौरस्याम सुंदर मुख देखत मेरे नैन ठगे।
मानहुँ चंदकिरनि मधु पीवत राति चकोर जगे।।
सरद-कमल मकरंद स्वाद रस जनु अलिराज खगे।
निरखत हँस विलास मधुरता लालच पल न लगे।।
चंचल चारु दृगंचल चितवत प्रेम पराग पगे।
भृकुटि कुटिल कच तरल तिलक चितवत अँसुवा उमगे।।
नासाभरनि हसन दामिनि छबि दसन फूल सुभगे।
नखसिख अंग निहारत आरजपथतैं व्यास डगे।।७४।।

नट—

हसति ज्यौं ज्यौं ही री त्यौं त्यौं दसन लसत,
मनहुँ शरदशशि-कोटि उज्यारी।
वरषत रस बिंबाधर जलधर,
पीवत चातिक कुंजविहारी।।
नैंननि सैंननि दै चितुचोरत,
लै भ्रूभंग नचावति प्यारी।
गावति मोहन मृगहि रिझावति छातीसौं लगावति,
निरखि व्यास जुग जुवती वारी।।७५।।

कल्याण—

गौरअंग रंगभरी, दुसह विरहसिंधु तरी,
सुख गिरवर सर सुंदर स्यामवंदिनी।
प्रानरवन वदन कमल नयन कुमुद मुदितकरन,
हास रस विलास सरद सूर चंदिनी।।
मोहन मन चपल मीन खंजरीट सरन,
रोमावलि नीलछबि कलिंदनंदिनी।

नव नव निजवृंदावन सुरत पुंज कुंज-रवन,
प्रानवल्लभा करेनु[1] दुखनिकंदिनी।।
नागर वर कुँवरलाल मधुप जीव जीविका,
पीनुतुंग उरज जलज सुदृढ़ फंदिनी।
कृष्णराधिका प्रताप सुनत दूरि होत ताप,
नेति नेति वदति व्यास निगम छंदिनी।।७६।।

गौड मलार—

बनै न कहत राधाकौ रूप।
बिहसि विलोकनि विमोह्यौ मोहनु, वृंदावनकौ भूप।।
अँगनि कोटि अनंग सोमकुल[2], एक अंगकौ कूप।
नखसिख भोग भोगवत नागरु, अधर सुधारस तूप[3]।।
लैत उसास वासु सुख महकत मनहुँ अगरकौ धूप।
मानहुँ चंपेकौ वन फूल्यौ गोरौ गात अनूप।।
वाम पयोधर राजत मानहुँ, सुरतजज्ञकौ जूप[4]।
व्यासस्वामिनी सौं विहरतही, मोहन लगत सरूप।।७७।।

राग सारंग—

बनी (श्री) राधामोहनकी जोरी।
नील पीतपट भूषनभूषित, गौरस्याम तन गोरी।।
दुखमोचन चल लोचन चार्‌यौं चितै करत चितचोरी।
वंक निसंक चपल भ्रुवभंग अनंग नचावत होरी।।
नाँचत अंग सुधंग किसोरहि सिखवति कुँवरिकिसोरी।
गावति पियहि रिझावति नागरि, सुखसागरमें बोरी।।
नवनिकुंज कमनीय कुसुम शयनीय सुरँगरचि भोरी।
विहरत व्यास स्वामिनीकी उपमा कहुँ भामिनि कोरी।।७८।।

---

१. हाथी २. चन्द्र समूह ३. भण्डार ४. स्तम्भ

राधिका मोहन की प्यारी।
नखसिख रूप अनूप गुन सीमा, नागरि श्रीवृषभानदुलारी।।
वृंदाविपिन निकुंजभवन तन कोटिचंद उजियारी।
नव नव प्रीति प्रतीति रीति रस वस किये कुंजविहारी।।
सुभग सुहाग प्रेमरँग राची, अँग अँग श्याम सिंगारी।
व्यास स्वामिनी के पदनख पर,वलि वलिजात रसिक नरनारी।।७९।।

षट

सुभग गोरी के गोरे पाँइ।
स्याम कामबस जिनहिं हाथगहि, राखत कंठ लगाइ।।
कोटि चंद नखमनि पर वारौं, गति पर हंसके राइ।
नूपुरध्वनि पर मुरली वारौं, जावक पर व्रजराइ।।
नाँचत रास रंग महँ सरस, सुधंग दिखावत भाइ।
जमुना जलके दूरि करत मल, चरननि पंक छुटाइ।।
सघन कुंज बीथिन में पौढ़त,कुसुमन की सेज बनाइ।
कुंकुम रज कपूर धूरि भुरकी, छवि बरनि न जाइ।।
धनि वृषभान धन्य बरसानौं, धनि राधा की माइ।
तहाँ प्रगटी नवनागरि खेलत, रति सौं रति पछिताइ।।
जाके परस सरस वृंदावन, वरषत सुखनि अघाइ।
ताके सरन रहत का को डरु, कहत व्यास समुझाइ।।८०।।

गौरी

सुभग सुहाग कौ चीनौं[१] प्यारी तेरे चरननि सोहै।
जिनकी रज राजत वृंदावन, देखत ही मोहन मनमोहै।।
गौर अंग छबि स्यामहि फबि गई, सकल लोक चूड़ामनि जोहै।
व्यास स्वामिनी की-उपमा कौं, भवनचतुर्दस कामिनि कोहै।।८१।।

---

१. परिचय

कान्हरा तथा कमोद—

मेरे माई स्यामास्याम खिलौना।
पलक ओट जिनि होहु लाड़िले, अनत करौ जिनि गौना[1]।।
प्रीति रीति परतीति बढ़ावत, मेलि परस्पर टौना।
निसिदिन कुंजनि विहरत वृषभान नंदके छौना।।
हँसत वदन सुख सदन छबीले, चितवत लोचन कौना।
चारि भुजनि के बल आलिंगन उरज होत नहि वौना।।
दरस परस रस भोजन करिकैं अधरामृत के लेत अचौना।
वाइस व्यास विटारै सुरति सुख जूठनिहूँ कौ दौना।। ८२ ।।

गौरी—

राधाजू के वदनकी वलि जैहौं।
कोटिमदन वसंत रवि ससि करि न्यौछावर दैहौं।।
हँसत दामिनि लसति दसननि, अधर बिंब रसाल।
नासिका शुक मुक्तफल छबि, तिलक मृगमद भाल।।
लाल लट सुकपोल श्रवननि खुभी खुटीला चारु।
अलक झलकति झुलमुली छबि, नीलसिरपर सारु।।
भृकुटिभंग तरंग उपजति, चिबुक स्यामलविंदु।
व्यासस्वामिनी नैंन सैंननि वसकिये गोविंदु।। ८३ ।।

जयति श्री—

मोहन मुखकी हौं लेंउँ बलाइ।
बोलत चितवत हँसत लसत, छबि उपजत कोटिक भाइ।।
भँवरनिकौ संभ्रम करि भँवरिनि, भैंटति अलकनि आइ।
खेलत नैंननिसौं खंजन भुव धनुषहि रहै उराइ।।
दार्‌यौं दशन जानि सुक दाता भँवरनि बँधि अकुलाइ।
अधर सुधाकर मानि चकोरी, दुख मैटति सुखपाइ।।

---

१. गमन

वाँम कपोल विलोल कुटिल लट, उरज रही अरुझाइ।
श्याम भुजंगिनि मनहुँ सुधाघट पीवतहू न अघाइ।।
निरुपम कह उपमा थोरी सब मनमें रही लजाइ।
व्यासस्वामिनी विहसि मिली हँसि, चुंवन दै पछिताइ।।८४।।

कमोद—

रसिकसिरोमनि ललना लाल मिले सुर गावत।
मत्त मधुर विवि धुनि सुनि कोकिल कूजत तन मन ताप बुझावत।।
मोरमंडली नाँचति प्रमुदित, आनँद नैननि नीरु बहावत।
मंद मंद घनवृंद गरजि लजि, सीतल सजल सीकर वरषावत।।
नादस्वाद मोहे गो, गिरि, तरु, खग, मृग, सर, सरिता सचुपावत।
वृंदाविपिन विनोदी राधारवन विनोद व्यासमन भावत।।८५।।

राग धनाश्री—

जैसैंही जैसैंही गावै मेरौ प्रीतम तैसैंही तैसैंही हौं मिलिचलौं ताहि।
नीचैं लेत ऊँचैं लैउँ सम नेम दोऊ घोर मैंवऽथोर निषाद निवाहि।।
सुघरराइ गुनसागर नागर न थहायौ जाइ जाहि।
व्यासकी स्वामिनी मोहनसौं वादु भयौ विकट औघर गाइ रिझाहि।।८६।।

ताल मंदर स्वर सबही पहँ आवत,
सोई सोई बदिजै जु गावै घोरि।
कंठ सुकंठ रागरंग सचि काचिहि मतिहि,
सुघरु क्यौं साँचि थोरि यै भली कोर।।
तुमहीं पै होइ आवै प्रीतम,
तौ देहौं नव-उरज अकोर।
व्यासकेप्रभु कहि घटिबढ़ि आवत,
रवकि भेटिहै जोबन जोर।।८७।।

कमोद व कान्हरो—

जोई भावै सोई क्यौं जानैंरी परत गाइवौ।
कोऊ अनी वांनी गिररी लै कोऊ औघर सुर बढ़ाइबौ।।
कठिन है रंग महलकौ रिझाइबौ (औ) सहचरि कहाइबौ।
यह सब छबि तबही फबि आवै,
जब व्यासस्वामिनीके चरनकमलमकरँद पाइबौ।।८८।।

षट—

मृगनैंनी पिकबैंनी तू राधिका विनती सुनि नैंकु गाउरी।
पंचमसुर आलापि, तासु हरि, षट-रागके पटु तान सुनाउरी।।
सरस विरम बुधि तोहि पैंह पावत, याही तैं लालच कीजतु तू गुनराउरी।
व्यासकी स्वामिनि तेरे दरस परस बिनु,
मो अनुचर कहँ अनत न सहाउरी।।८९।।

लालकौं धीरज न रह्यौ ललनाके गावत।
सुनतही सुख लागै, बूझेतें भरमु भागै, अनुराग गिरिपर्‌यौ बेंनु बजावत।।
रंगकौ रसरंगनि भायौ तान तरंगनि छायौ,
प्रिया बाहु बिच नाहु लगावत।
व्यासकी स्वामिनि हियौ पियहि लगावति,
चेत्यौ कुँवर अधर मधु प्यावत।।९०।।

कमोद व सारंग—

बहुत गुनी मैं देखे सुनेरी,
सुधि न परै राधे तेरे गानकी।
मोहू कछु गर्व हुतौरी गुनकौ,
हौं पचिहार्‌यौ समुझि न परै कछु तेरे तान की।।
तू जानति गति रेख नेमकी,
ताल मंदर घोर सुर बंधानकी।

व्यासकी स्वामिनि तेरे गावत,
कछु सुधि न रही मेरे लोचन कानकी।।९१।।

कल्याण—

गावति गोरी नैंन नचावति।
सुघराई तन मुख सनमुख करि विहसि दसन चमकावति।।
रीझति सुघर नवतरुनि नागरी, सुनि धुनि पिकहि चुनावति।
तान बंधान तकिही तकि मारति, मोहन मृगहि गिरावति।।
लेत उसास कठिन-कुच उकसत, स्यामहि काम बढ़ावति।
व्यासस्वामिनी आतुर पियकौं रवकि कंठ लगावति।।९२।।

गौरी—

गोरी गायौ सुनि स्याम रिझायौ।
लटक्यौ मुकुट पीतपट झटक्यौ चटक्यौरी,
नासापुट सुंदर करतें बेंनु गिरायौ।।
नैंननि असुवाँ गिरत श्रमित अति,
कंपित जानि रवकि उर लायौ।
व्यासकी स्वामिनि कुंजमहलमें, अधरसुधारस प्यायौ।।९३।।

गौरी व कल्याण—

नटनागरिकौ औसरु देखत रसिक सिरोमनि रीझिरह्यौ।
सरस बजावत नाँचत गावत अंग दिखावत रंगु रह्यौ।।
राग, तान बँधान मिलि देसी सुधँग न परत कह्यौ।
जो कछु गुनकी मन-महँ उपजी, सो नखसिख तर लै निवह्यौ।।
मोहित धुनिसों लाज छाड़ि पुनि कौतुक देखत जग उमह्यौ।
व्यासस्वामिनिहि रीझि लटू ह्वै, हारि मानि पिय चरन गह्यौ।।९४।।

धनाश्री—

आजु बनी कुंजनि ज्यौंनार।
जैंवत स्याम परोसति स्यामा नखसिख अँग उदार।।

सपरि[1] स्वेद जल गंडुष[2] कर गहि, धोइ कमलदल थार।
अम्रित अरुन सुपक्व अधर, षट-रस-मादिक आहार।।
दरस सुगंध सुस्वाद तहाँ पुट, रुचिकर मधुरस षार।
माँगि सबै सब लेत देत सुख, तन मन स्वाद सुसार।।
रोम रोम आनंद सोमकुल श्रवत सुधा मधु धार।
सर्वसु देत न डर भयौ दातहि, जाचक कीन संभार।।
लालचही की लटी लोलता[3], लचत न लागी वार।
अैसैंही विविधिविहार विलोकति, व्यासदास वलिहार।।९५।।

आसावरी—

बनी बन आजुकी ज्यौंनार।
जैंवत राधामोहन अँग सँग, उपजत कोटि विकार।।
धूमकेतु[4] मकरध्वज मानहुँ, जानिदु:ख इंधन भार।
सुरत सुदारि[5] चिर कुंचित[6], आतुर तजि आचार।।
संतत सद्य सुवास गातरस मीठौ देत उदार।
कुसुमपत्र पत्रावलि रचिकरि, नैंन चषक सुखसार।।
तृपति न भई छुधा न गई अचवत अधरामृत धार।
व्यासस्वामिनी भोग भोगवत,हरि गुन सिंधुअपार।।९६।।

धनाश्री—

आरती कीजै जुगलकिसोर की।
नखसिख अंग बलैया लीजै, साँझ दुपहरी भोर की।।
भूषन पट नागरि नट अद्‌भुत, चितवनि चंचल कोरकी।
व्यासदासि छबि नैंननि फबि रही, अंचल चंचल छोर की।।९७।।

षट—

छूटी लट न सम्हारति गोरी अंचल डारैं आवति।
घूँमत नैंन बैंन तुतरानैं लटकति अंग नचावति।।

---

१. नहाकर २. कुल्ला ३. चंचलता ४. अग्नि ५. श्रेष्ठ कामिनी ६. सदैव लज्जाशील

स्यामअंस भुजधरैं करें वस हँसनि भौंह मटकावति।
सावधान परवसी यही रस यहै रीझि अधर-मधु प्यावति।।
कबहुँक रति विपरीति मीत पर सुख-वारिद वरषावति।
इहिं विधि विहरत संतत देखत व्यासदासि सुख पावति।।९८।।

सारंग—

स्यामकैं गोरी सहज सिंगार।
कञ्चन-तन हीरा दशनावलि नख-मुकता सुखसार।।
कुच-कलसन महँ प्रान रतन धरि अधर सुधा आधार।
चरन शिरोमनि कर नैंननि धरि भुज चंपक मनि हार।।
अंग अंग सेवा रस मेवा वन-विहार आहार।
परिरंभन पट भूषन चूँवन चितवनि हँसनि भँडार।।
पियके गंड अधर रसना मुख सुखमय जूठौ थार।
व्यासदासि दिन पीक पियत बड़भागिनि लेत उगार।। ९९ ।।

भूपाली व सारंग—

लटकति फिरति जोबनमद माती चंपक वीथिनि चंपक वरनी।
रतनारे अनियारे लोचन दुखमोचन लखि लाजति हरिनी।।
अंस भुजा धरि लटकति लालहि निरखि थके मद-गजगति करिनी।
वृंदाविपिन विनोदहि देखत वैमानिक[१] मोही वृंदारकघरनी[२]।।
रासविलास करत जहाँ मोहन बलि बलि धनि धनि है बन धरनी।
श्रीवृषभाननन्दिनी के सम व्यास नहीं त्रिभुवन महँ तरुनी।।१००।।

कान्हरो—

चलहि तू भेदकी माई चाल।
रचि रचि चरन धरति गति उपजति, देख लजाने कीर मराल।।
किंकिनि कंकन नूपुरधुनि सुनि नदित मृदंग सुधंग सुताल।
हस्तकमल हस्तकनिहि दिखावति, मनु मिलवति अरु बाहुँ मृनाल।।

१. विमान में बैठी हुई २. देवताओं की स्त्रियाँ

अंचलमाँझ न चंचल कुचघट मटकि चटकि चितु हरत रसाल।
मुरि मुसक्याति भाँतिसौं चितवति काम करत स्यामहिं बेहाल।।
गावति कामबान तकिमारत, विथकित मोहनमन मृगमाल।
इहिविधि व्यासस्वामिनीकेसँग बिहरत जीवनिकौ फलपायौ लाल।।१०१।।

षट व गोरी—

फिरत सँग अलिकुल मोर चकोर।
घन रु जुन्हाई[1] सरद बसंत मनहु हैं जुगलकिशोर।।
निकट कुरंग कुरंगिनि आवत सुनि मुरली धुनि घोर।
व्यास आस करि त्रास तजत सर चक्रवाक भरि भोर।।१०२।।

सारंग—

चलति तू भेदकी माई चाल।
गावति मनिमंजीर बजावति मिलवति गति झपताल।।
झलकत-अलक छबीली भौंहैं चंचल नैंन विसाल।
मानहुँ बधिक डराने विडरे खंजन मीन मधुप मृगमाल।।
पीन गगन कुच उन्नत देखति पग डगमगत रसाल।
मानहुँ फंदनिके संभ्रम मग तजत गयंद मराल।।
मंदहसनि घूँघटमें सोभित उर-लटकत लटजाल।
व्यासस्वामिनी तो तन देखत स्याम भयौ बेहाल।।१०३।।

भोपाली—

आवति सखि चंदा साथ अँध्यारी।
घन दामिनि चकोर चातिक मिलि मोरति राका प्यारी।।
गज मराल केहरि कदली सर वक चकवा शुक सारी।
खंजन मीन मकर कच्छप मृग मधुप भुजंगिनि कारी।।
कमल मृनाल लाल मनि मुक्ता हीरा सरसु पवारी[2]।
व्यास स्वामिनीकी सुख-संपति लूटत कुंजबिहारी।।१०४।।

१. चाँदनी २. मूँगा

षट—

देखौ माई शोभा नागरि नटकी।
मानौं चपल दामिनी जामिनि मेह सनेहनि अटकी।।
कुंजशयन कमनीय किसोरी राजति पिय उर लटकी।
कोमल सुंदर पानि जुगल महँ छबि उपजत कुच घटकी।।
जनु वारिजपर मधुकर जोरी हंस वैरु करि हटकी[१]।
परिरंभन चुंवन करि करधरि अधर सुधामधु गटकी।।
मनौं चकोर-मिथुन मधु पीवत बन गति विधु संकटकी।
लोचन सफल करत निजु दासी अति आतुर नहिं अटकी।।
परमउदार व्यासकी स्वामिनि सर्वसु देत न मटकी।।१०५।।

राग सारंग—

समाइ रहे गातनि में गात।
निकसत नहीं निकासे प्यासे रस पीवत न अघात।।
गौर स्याम छबिकी उपमा कह कोटिक कवि अकुलात।
मधुर बैंन सुनि सैंननि नैंननि सोभा सिंधु न मात।।
वसीकरन आकर्षन मोहन मंत्र वरन लपटात।
सहज रूप लावण्यनदी महँ गुन नौका न समात।।
कुंज कुटीर तीर जमुनाके खेलत द्यौस विहात।
व्यास विपिन वैभव सुनि सिरधुनि कमलापति पछितात।।१०६।।

गौरी व गौड मलार—

देखौ माई शोभा नागरि नटकी।
विहरत राधाके सँग निरखि विलखि रति कमला सटकी।।
सुरत श्रमित प्यारी प्रीतमके कंठ भुजा धरि लटकी।
मनहुँ मेघमंडलमें दामिनि चंचलता तजि अटकी।।
मोहन करजनि बीच सोभियति सुंदरता कुचघटकी।

---

१. मना करना

मानहुँ कनक कमल पर हंस चरनिधरि भँवरनि हटकी।।
कुचगहि चुँवन करत अधर खंडित हूँ (राधे) कुँवरि न मटकी।
मानहुँ निकट चकोर चंचु गहि चंद सुधा मधु गटकी।।
गौर गंडरस मंडित स्याम बदन गति नैंक न ठटकी।
मानहुँ नूत मंजरीके रस अनत न कोयल भटकी।।
देखत ही सुख कहत न आवे क्रीड़ा वंशीवटकी।
व्यास स्वामिनीकी छबि वरनत कविनु लिलारी[1] पटकी।।१०७।।

धनाश्री—

मोहन माई राधिकाकौ कंतु।
विहरत वृंदावन घन वीथिनि वसतु सु सदा वसंतु।।
नवनिकुंज प्यारी सँग अँग अँग सुख पुंजनि वरषंतु।
प्रगट करत रसरीति छबीलौ प्रीतहिं नाहीं अंतु।।
गनतु न काहू जोबनके बल जनु हाथी मैमंतु[2]।
रूप अनूप देखि जग भूल्यौ मुदित जल थल जी जंतु।।
बड़भागी अनुरागी नागर सुघर कुँवर भगवंतु।
व्यास सहे उपहाँस स्यामकौ सौभागनि नेह जरंतु।।१०८।।

राग सारंग—

मोहन बनकी सोभा स्याम।
स्याम हरित दुति तनमहँ उपजति सो छवि कवि अभिराम।।
बदन चंद करि रंजित दोऊ मानहुँ सरदनि याम।
भूषन उडगन दमकत नील निचोल गगन सुखधाम।।
अधर अरुन पल्लव सुसोभित बिहसनि कुसुमनि बाम।
श्रीफल कुच काँपि सु कल फूलें लाजत मौरे आम।।
चालि दृगंचल चंचल खंजन मीन मृगज अलि जाम[3]।
कुंजन कुहू कुहू पिक कूँजत पियहि बढ़ावत काम।।

---

१. माथा २. मदमत्त ३. विथकित

सकल अंग घनश्याम वनहिं पोषत नव सुरस ललाम।
व्यासस्वामिनी कौ रसवैभव गोपी ग्वाल सुदाम[१]।।१०९।।

षट व टोड़ी—

कुँवरि प्रवीन सुवीन बजावति।
वंशीवट निकट निकुंजनि बैठी, सुख पुंजनि वरषावति।।
स्यामचुरी पौंची कर सोभित, अँगुरिनि रंग बढ़ावति।
ताँति[२] मोरि नासारि[३] पानि सजि, हँसति दुतिहि मनभावति।।
उपजति राग रागिनी अद्भुत, मोहन मृगहि रिझावति।
सुर वँधान तान मानहि मिलि, ग्रीवा नैंन नचावति।।
गावति गीत मीत के श्रवननि वर संगीत सुनावति।
विवस जानि कुँवरहिं करुनाकरि अधर सुधादै ज्यावति।।
कोटि काम दै स्यामहि मोहति हँसि हँसि कंठ लगावति।
लेति उसाँस देति कुच दरसन परसत सकुचि दुरावति।।
कुसुम-सयन पर कोककला-कुल परगट पतिहि सिखावति।
इहि विधि रसिकनिकी निधि राधा,व्यासहि सुख दिखरावति।।११०।।

सारंग—

बजावत स्यामहि बिसरी मुरली।
मोहन स्वर आलाप जु गायौ राधा चितु-वितु चुरली।।
अरुन बरुन दिसि निसि ससि विकसित सकुचत कमलकली।
तमचुर सुर सुनि मिलि बिछुरी चकबनि की जोटि छली।।
फूली धरनि सदा गति भूली तरनिसुता न चली।
विकल भँवर पिक पथिक अचल पथ रोकत कुंज-गली।।
स्थावर जंगम, संगम बिछुरे, सबकी गति बदली।
कै यह मरमु जानिहै महलनि कैरुव्यास वृषली[४]।।१११।।

---

१. सुंदर माला २. वीणा के तार ३. मिजराव ४. किशोरी सखी

सारंग—

वन में कुंजनि कुंजनि केलि।
जमुना पुलिन कमल मंडल महँ रहे रासरस झेलि।।
बीथिन वर विहार गहवर गिरि लीला ललित सुबेलि।
खोरि, खिरक प्रति रचना सखिरी जानि[1] बाहु गल मेलि।।
रससरिता झिरना सौरभ जल अवगाहत पग पेलि।
व्यासस्वामिनी विरचित छिनु छिनु निस दिन पियसँग खेलि।।११२।।

कान्हरो—

कुँवरि कुँवरकौ रूप भेषधरि नागर-पिय्र पहँ आई।
प्यारिहि हरि मिले सकुच जिय उपजी, तब इक वुधि उठाई।।
हौं वृन्दाबनचंद छबीलौ राधापति सुखदाई।
तू को 'प्रिया' 'प्रिया' कह टेरत, तजि बनभूमि पराई।।
कैसी तेरी तरुनि सुहागिल कहि मोसौं समुझाई।
'राधा' नाम गाँव वरसानो, बड़े गोपकी जाई।।
सुंदर पुरुष स्यामतन मोहन, प्रिया अधिक गौराई।
तेरीसी उनिहारि 'वारिहौं' जब मो-तन मुसिकाई।।
नकवेसरि के बेह नेह में मृगमद बाँटि लगाई।
व्यासस्वामिनी विहसि मिली जब प्रगट जानि चतुराई।। ११३।।

गौरी—

सुनि गोरी तें एक किशोरी वनमह देखी जात।
ता बिनु दीन छीन हौं डोलत, कोऊ न बूझत बात।।
तेरीसी उनिहारि नारिके सबै लुभ्यारे गात।
चितवत चलत अधिक छबि उपजति, कोटि मदन-सर घात।।
तू अपनौं व्यौरौ कह मोसौं, अधनैंननि मुसिकात।
व्यासस्वामिनिहि वार न लागी, स्याम कंठ लपटात।।११४।।

---

१. प्रियतम

जयतिश्री—

कहि धौं तू काकी बेटी।
वन महँ फिरति अकेली सुंदरि सहचरि सँग न चेटी[1]।।
तोसी कुँवरि न ब्रज में कोऊ मैं देखी गुजरेटी[2]।
बिनु चोली अंचलहू डारें उरजन मृगज लपेटी।।
वरषति स्वेद हर्ष रोमनि वेपथ तन जीभ लपेटी।
प्रानबल्लभा मेरी बिछुरी विरह पीर तैं मेटी।।
सुनत बचन हँसि बोली राधा कहाँ विहसि पिय भेटी।
रतिरस राखि व्यास की स्वामिनि कुंज महल महँ लेटी।।११५।।

सारंग

चंपक वीथिनि फिरत अकेली सुंदरताकी खानि।
राति अचानक स्याम कुँवरि के लोचन मूँदे आनि।।
काकी नारि गारि हौं दैहौं तेरी करौं न कानि।
तूँ पाछे तैं छलकरि मोहि सुनाउ नैंक मुख वानि।।
गजमोतिन के गजरा चचरि चुरी मुदरी तव पानि।
पीन पयोधर पीठि गड़ावति दीठि बरावति[3] जानि।।
सबै मनोरथ पुजऊँ तेरे करि मोसौं पहिचानि।
कृपा वचन सुनि सनमुख करि हँसि भेटी सुक्ख निधानि।।
व्यास स्वामिनिहि मिलत कुँवरकैं भई लाज की हानि।।११६।।

केदार—

देखि सखी खेलत नागरि नट।
अद्‌भुत बात कहत नहिं आवै, क्रीड़ाकरत चढ़े वंशीवट।।
मोहनके करजनिमें सोभित प्यारीके कुच कनक सुधाघट।
मानौं हेमकमल पर मधुकर, रिसकरि हंस गहै कर संकट।।

---

१. दासी २. गूजरी ३. दृष्टि बचाना

चुंवन करत लरत नासा शुक, दार्यौं दसन स्वादरस लंपट।
नैंननि चंचल खंजनमिलि विहरत, मधुर बचन बोलत कोकिल रट।।
रति रन साजत भाजत नाहिन नखसिखते अँग अंग सुघर भट।
यहरस व्यासदासिहि न उवीठतु[1] जदपि सेतभई सिरकी लट।।११७।।

गौरी–

कहत दोऊ मिलि मीठी बातैं।
मन मन विहसत नैंन नचावत, अधरसुधा मधु मातैं।।
अनतहि चितु, चितवत दोऊ अनतहि लखत न कोऊ घातैं।
कछु वे गहत, कहत कछु वे दोउ खात न पेट समातैं।।
तन मन मिलि अरुझे जनु कोटिक चंद अमावस रातैं।
गौरश्याम सागर मिलि बाढ्यौ व्यास अंगनि रंग चुचातैं।। ११८।।

आसावरी (मूलताल)

मोहनी कहत मोहनसौं बात।
कोमल मधुर मनोहर धुनि सुनि, पियके श्रवन सिरात।।
सरस अधर मधु मादक वरषत, रसिक कुँवर पीवत न अघात।
जनु अलि-लंपट के मुख मेलत, मकरंदहि जलजात।।
दंपति की छबि निरखि दामिनी, दार्यौं कुंद लजात।
मनौं कोकनद[2] माँझ किरनिका[3] केसर तृषित बसात।।
नैननि नैन मिलत सैननि दै, मंद मंद मुसक्यात।
जनु खंजन खेलत प्रतिबिंबनि, जल में चंचल गात।।
रसना एक अनेक रूप गुन, बरनत कवि अकुलात।
कोटिक व्यास करतहूँ बुधि बल, सरवा सिंधु न मात।।११९।।

देवगन्धार–

कुँवरि छबीली तेरी बतियाँ।
सुनत सिरात श्रवन मन आनंद, सुख पावति अति छतियाँ।।

---

१. अरुचि नही होती, न उबना २. अरुण कमल ३. कर्णिका

विहँसत अधर कपोल नयन भ्रुव, उपजावति गुन गतियाँ।
अँग अँग फूल, निरखि नकवेसरि उर लटकति लटपतियाँ।।
गावत लेति उसास उरज उमगति, मारति करि घतियाँ।
व्यासस्वामिनी मेरौ सर्वसु, लूटि लेत निज थतियाँ।।१२०।।

कमोद—

सुनि सुंदरि इकबात कहत हौं।
मेरी गति मति तुही कृपा तेरी चाहनि मैं चहतु हौं।।
सर्वोपरि मेरौई भाग जु तेरे संग रहतु हौं।
तू जु मोहि अपनौं करि जानतु हौं पुनि इतौ लहतु हौं।।
मेरे छमि अपराध जु बरसौ करजनि उरज गहतु हौं।
खंडतु तेरे अधर मधुर धरि हौं अति पीर सहतु हौं।।
निर्दय बहुरि भेंटि तोहि हौं दुखसागर न थहतु हौं।
व्यासस्वामिनी अंग संग के रंगहि लै निबहतु हौं।।१२१।।

कान्हरौ—

नैंन सिरानैंरी प्यारी देखत मुख।
सुनि राधा बाधा न रही अब तैं कीनौं मो पर रुख।।
श्रवण सीतल भये बचननि सुनि, गये दारुन दुख।
व्यासकीस्वामिनी सौं मिलि विहरत नख-सिख भयौरी परम सुख।।१२२।।

गन्धार —

रूप तेरौरी मोपै बरन्यौं न जाइ।
रोम रोम जो रसना पावौं तौ गाऊँ तेरौ गुन अघाइ।।
कोटि जतन जौ कीजै कैसैं हूँ सरवा सिंधु न माइ।
कैसैं व्यास रंक की बसनी[१], लंक, सुमेरु समाइ।।१२३।।

निरखि मुख सुख पावत मेरे नैंन।
श्रवण सिरात गात उमगत सब, सुनत छबीले बैंन।।

१. मुद्रा रखने की थैली

विहसनि बंक बिलोकनि भौंहैं धनुष तैं चलै सर सैंन।
रोम रोम गति सेन बिराजति, कोटि कोटि रति मैंन।।
महा-माधुरी-सिंधु समात न, अंग साँकरे अैंन।
श्रीव्यासस्वामिनी की अद्भुत छबि, कवि पै कहत बनैंन।।१२४।।

धनाश्री —

तब मेरे नैंन सिरात किसोरी जब तेरे नैंन निहारौं।
कोटि काम रति, कोटिचंद वदनारविंद पर वारौं।।
तब मुख सुख जब तेरे प्यारी पावन नाम उचारौं।
हाथ सनाथ होंत जब तेरे अंग सुमाँग सिंगारौं।।
श्रवन रवन तबही जब तेरे गुनगन सुनत उरधारौं।
तब रसना रसमय जब तेरे अधर सुधाहि न डारौं।।
उरकौ जुरु[1] जात न तब जब भुजनि बीच तैं टारौं।
तव बुधि मन चित मेरौ हित जब रूप अनूप विचारौं।।
तब मम मोर--मुकुट साँचौ जब सेजमहल रज झारौं।
तब वंशी धुनि जगत प्रसंसी जब तब जस न बिसारौं।।
तू भूषन धन जीवन मेरैं, यह व्रत मन प्रति पारौं।
व्यासस्वामिनी के तन मन पर राई लौंन उतारौं।।१२५।।

कल्याण —

चपल चकोर लोचन मेरे तरसत देख्यौरी चाहत वदन मयंकहि।
घूँघट पट महँ कतहि दुरावति कृपन दुरत ज्यौं देखत रंकहि।।
तो बिनु मो कहँ ठौर न और कहुँ इतनौ भरोसौ करि अब जिनि संकहि।
बिहसिलगीपिय के हियराधाव्यासकीस्वामिनीहठिमेटतिकलंकहि।।१२६।।

सारंग —

पिय के हिय तैं तू न टरति री।
मेलि ठगौरी खेलि स्याम सौं, मोहूतैं न डरतिरी।।

---

१. ज्वर, ताप

मेरौ नाह कि तेरौ कहिधौं जासौं प्रीति करतिरी।
हौं इनकी प्यारी तू न्यारी हौंहिब, कति जु अरतिरी।।
जद्दपि रूप रासि तेरे अँग निरखति आँखि जरतिरी।
जोबन जोर किसोरचंद कौ, चितु वितु चाह हरति री।।
इतनौं सुनत कुँवरि के तनतैं स्वेद नदी उतरति री।
हँसि हरिराम व्यासकी स्वामिनि लालहि अंक भरतिरी।।१२७।।

कल्याण—

गुन रूपकी अवधि राधिका तैं रसिक राइसिरोमनि वस कियौ।
तनु मनु धनु जोवनु भूषन प्रानप्यारे कैं और न वियौ।।
बोलत हँसत मिलत चितवत ही मोहन कौ चित चोरि लियौ।
नवनिकुंज वृंदावन विहरत सीतल करत व्यासकौ हियौ।।१२८।।

वसन्त—

सुन्दरता की रासि नागरी देखत नैंन सिरात।
अंगनि कोटि अनंग वारियतु विहसि कहत जब बात।।
कोटि कल्प कोऊ जौ जीवै रसना कोटिक जात।
निरुपम नखकी छबि उपमा-कहँ कोटिक कवि अकुलात।।
लोक चतुर्दसकी वर तरुनी तरुन सुनत वलिजात।
नयन श्रवन उर अयन साँकरे सोभासिंधु न मात।।
बड़भागी अनुरागी मोहन हिलत मिलत न अघात।
धन्य व्यासकी ठकुराइनि राधा कहि स्याम सकात[1]।।१२९।।

गौरी व भैरव—

काम कुंजदेवी जय राधिका वरदानी,
निश्चैं देहि प्रिये वृंदावन वृंद-वासिनी।
करत लाल आराधन साधन वलि कर,
प्रतीति नामावलि मंत्र जपत जय विलासिनी।।

१. हिचकना

प्रेम पुलक गावत गुन पावन मनभावत अति,
नाँचति गति रीझि देखि मंदहासिनी।
अंगन पट भूषन पहिराइ आरसी दिखाइ,
तोरत तृन लै वलाइ सुख निवासिनी।।
करजोरें चरन गहत कहत चाटु वचनावलि,
विनती सुनि दासकी दुखरासि नासिनी।
प्रतिपालय करुनालय मोसौं जिनि मान करै,
देहि प्रिय प्रान वदत व्यासदासिनी।।१३०।।

मलार—

तू कत मोहि मनावन आई।
कोटि वार वरजेहू पिय चंचलकी टेव न जाई।।
मो देखत अपनैं उर (में) मोहन सुंदरि वसन दुराई।
मोहूतैं गुन रूप अतिआगरि, तातैं तन मन भाई।।
मोसौं विरति वढी वासौं रति करी तब हौं विसराई।
करि अपराध साधु है बैठे, तोहि सिखै चतुराई।।
पट भूषन तजि छलकरि नागर तन कुमकुम लपटाई।
व्यासस्वामिनी निरखि हँसी सुंदर हँसि कंठ लगाई।। १३१।।

सारंग--

रूसैंहूँ न तजी चतुराई।
सकति वसीठी सीठी जानत, नैंननि सैंन चलाई।।
आजु नेह सौं बात कहत सुनि श्रवननि रुचि उपजाई।
विनु काजैं रूठै झूठौ दुखपावति, कहत लुगाई।।
आपनु सौं सब भले कहावत, हरत न पीर पराई।
तब ताकौ अपराध न दुरिहै, कहि दैहै जल झाँई।।
इतनौ कहि जमुना महँ मुख देखत ही लाज-गवांई।
स्याम कामबस व्यासस्वामिनी, राखी कंठ-लगाई।।१३२।।

बाधा दै राधा कितहि गई।
वृंदाविपिन अछत प्यारी बिनु, सब विपरीति भई।।
मेरे मन्दभाग्य तें काहू पोच प्रकृति सिखई।
मुख सुखरासि उरज देखे बिनु क्यौं जीवै विषई।।
ताके प्रान रहहिं क्यौं जिय वह, अधर-सुधा अचई।
व्यासस्वामिनी विहसि मिलत ही, वाढ़ी प्रीति नई।।१३३।।

नट—
काहे कौं लाड़िली मौसौं मान करति।
मेरी प्रकृति जैसी,तैसी तुही जानति,गुन अपुगुन कत जिय महँ धरति।।
ताहि पर कीजै कोप जाही सौं सपनैहूँ न बीचु नीचु कामहि पाछैं हूँ डरति।
व्यासस्वामिनि तू चतुरसिरोमनि,औचकापाछैंतेनीकैंआँकौ भरति।।१३४।।

सारंग—
विरह व्याधि तन बाढ़ी राधा करि उपचारु।
दै अधरामृत मृतक रसाइनि कुच-गुटिका घटिका[1] उर डारु।।
रोगहरन निज चरन सीस धरि, नैंननि पर कर पंकज चारु।
अंगराग अजना[2] सु देहि अब, अंजन पीक लीक गदसारु[3]।।
प्रतिपालय, करुना वरुनालय, तो बिनु अनत नहीं निस्तारु।
यह सुनि व्रत तजि पिय अंग संग, व्यासस्वामिनी करत विहारु।।१३५।।

कमोद व झझौटी (इकताल)—
मान दान दैरी प्रान राखिलै।
विनती सुनि मुनिव्रत तजि बलि जाऊँ रिस सलिताकी सींव नाखिलै।।
तोहि वृषभानकी सौंह वेगि कहि जियके प्यारे को अधरसुधा चाखिलै।
विरह-सिन्धु हौं मगन होत कुच तूँबी दै उबारु,
जौन पत्याहि तौ व्यास साखिलै।।१३६।।

---
१. गगरी २. औषधि विशेष ३. रोग से रक्षा करने वाला

विलावल—

राधाप्यारी हौ मान न करु।

अन्तर विरह दहन तन जारत,

वरषावहिं बिम्बाधर जलधरु।।

बिनु अपराध कोप न कीजै दीजै हौ प्यारी,

प्रान-दान-धन, राधा तेरौ हौं अनुचरु।

व्यासस्वामिनी मन्दहँस करि,

कण्ठ लगाइ लयौ सुन्दरवर।।१३७।।

केदारौ (तालचौताल)—

मुखछबि अद्‌भुत होत रिसानै।

नैंननिकी सैंननि महँ सुन्दरि, तेरे हाथ विकानै।।

तारे तरल वंक भ्रुव वोटनि मनहुँ मनसिज शर तानै।

पलक अलक मिलि अनखु करति हँसि ताहि वदौं जु वखानै।।

विहसत अधर कपोल औल[1] गुन माँगत नित पहिचानै।

चमकत दशन दामिनी मानहुँ पट घन अरि अरुझानै।।

फरकत उर भुज करत चाव इत जघननि स्वेद चुचानै।

तोरत अँग रँग भरि पुलकित, रिसि न तजत अकुलानै।।

अपनौं काज विगारति नाहिंन, आतुर कुशल सयानै।

व्यास उसास लेत दोऊ जन, रवकि कण्ठ लपटानै।।१३८।।

मान तजि मानिनि वदन दिखाउ।

दुखमोचन तेरे दरसन बिनु, लोचन जरत बुझाउ।।

मन्द मधुर मृदु कोकिल केसे, अपनैं वचन सुनाउ।

पञ्चमसुर पटतार[2] अलापति, तू षटरागहि गाउ।।

परम भाग मेरौ अब सुन्दरि, देखे तेरे पाउ।

(श्री) व्यासस्वामिनी विहँसि मिली हँसि विरह-सिन्धुकी नाउ।।१३९।।

---

१. अवलम्बन २. समान

कल्याण—

तेरौ जान कुँवरि मैं जान्यौ।
मोहू से अनुचर कौ तें, अनुराग नहीं पहिचान्यौ।।
तो बिनु मोहि अनाथ जानि अब, मदन-बान सन्धान्यौ।
चन्दन, चन्द, पवन तन जारत, करतु कछू नहिं कान्यौ।।
तेरे विरह भयौ दारुन दुख, कैसैं जात वखान्यौ।
तेरे चरन शरन हौं सुन्दरि व्याससखी गहिआन्यौ।।१४०।।

भूपाली—

अजहूँ माई टेव न मिटति मानकी।
जानति पियकी पीर न मानति सौंह बबा वृषभानकी।।
कुसमित सेज भयानक लागत भवन पवन गति खानकी[1]।
वनकी सम्पति कहि न जाति, सही जाति न विपत जानकी।।
भूषन वसन सुहात गात नहिं विकल, न सुरत गानकी।
चातिक कृष्णहि, तृष्णा बाढ़ी, जलधर अधर पानकी।।
सुनि पिय उरज ओट दै, चोट बचाई मदन-वानकी।
व्यासस्वामिनी हरि जाचक कौं दानी प्राननिदान की।।१४१।।

कल्याण—

सुखके शरीर महँ, अगनित दुखरासि,
कैसैं कै समातिरी कहिधौं राधिका प्यारी।
यह मेरे जियकौं संशय तूँ दूरि करि,
जै तीन्यौ परि होइ सुखारी।।
थोरैं ही कहैं हम, बहुत समझि,
तूँ अतिही सयानी जानी कुञ्जविहारी।
व्यासहि जानि निजु दासी मानि मनावौ,
हँसि पियहि मिलौ श्री वृषभान दुलारी।।१४२।।

---

१. क्षीण गति वाली

षट—

कबहूँ तैं काहूकौ कह्यौ न कियौ।
जुरत वसीठी[1] ते सीठी[2] करि डारी, हठ करि कछु न लियौ।।
नैंननि तोहि कुटिलता सिखई, और न हेत वियौ।
कठिन कुचन की संगति कौ फल, ह्वैगयौ कठिन हियौ।।
बिनु अपराधहि साधु पियहि तैं कबहुँ न चैंन दियौ।
सरघाहू[3] तें कृपन अधर-मधु रस पिय न अघाइ पियौ।।
सुनत चली आतुर ह्वै चातुर, विसरइ संग सखियौ।
व्यासस्वामिनी भेटत ही मेरौ मोहन मरत जियौ।।१४३।।

मानिनी मानु लड़ैंती तोहि मन मोहन बोली।
चाहति फिरति तोहि हौं कुञ्जनि कुञ्जनि बूझत डोली।।
तो कारन रचि पचि पिय पठई चम्पकलिनकी चोली।
सुन्दरि गोरे गात पहिरि चलि, नीलसारि पचतोली[4]।।
पाइन परत करति हौं विनती, तोसौ बोलति बोली।
लेत बलाइ करति हौं हा ! हा ! अब जिन होइ अबोली।।
प्रान-दान-दैन चली अली सँग, प्रीति बढ़ी निरमोली।
व्यासस्वामिनिहि कुँवर मिले हँसि, कञ्चुकि, नीवीवँध खोली।।१४४।।

जयतिश्री—

कहा लौं कहियै दुख की बात।
सुनि सुन्दरि तो बिनु सुन्दर कौ, जैसैं द्यौस विहात।।
एक संदेशौ कहि पठयौ पिय, आतुर अति अकुलात।
तौ जीवै जौ मेरी सखी दिखावैं तू उरजात।।
मोहि बहुत सुख ह्वैहै मेरी दूतिहि उर लपटात।
मेरौ हियौ सिरैहै दूतिहि, चूँवन दै मुसिकात।।
जो कछु सहचरि कहै सु मेरौ, कह्यौ जानिबौ जात।
व्यास विनोद समझि, हँसि प्यारी, पिय सँग विहरत प्रात।।१४५।।

१. दूती २. फीकी, महत्व हीन ३. मधुमक्खी ४. अत्यन्त हल्की

सारंग—

नवल नागरि री मान न कीजै पियसौं।
बहुत वार मैं तूँ सिखराई तो बिनु छिन क्यों,
जीवै विषई नागरु रूस्यौ अपने जियसौ।।
तोहि जनाउ दयौ मैं चितकै, तोतें होइ सु तूँ करि,
कौजु बराबरि करि सकै सुन्दरि वृषभान धियसौं[1]।
दीनबचन सुनि उठि चली अली संग,
सहज सनेह रँग सद मत व्यासस्वामिनी,
हँसि कुँवर लगाइ लियौ हियसौं।।१४६।।

श्यामगूजरी—

विहरत मोहन कुञ्ज-कुटीर।
सुनि प्यारी तो बिनु छिन पियके, प्रान न रहत शरीर।।
छबि दबि गई मुखारविन्दकी, तरलित स्वास समीर।
विरह दहन तन जरत बुझावत, वरषिनैंन-घन पीवत नीर।।
वेपथु स्वेद सहित पुलकावलि, चलि नहिं सकत अधीर।
कहत रहत राधा बिनु कब लगि, धरियै मन महँ धीर।।
सहचरि व्यास वचन सुनि सुन्दरि, वेगि चली पिय तीर।
कंठ लगाइ लये, अधरामृत प्याइ, हरी तन पीर।।१४७।।

गौरी—

कहाँ लगि कहिये दुखकी बात।
सुनि राधा तेरे विछुरत पियके, सीदत[2] सब गात।।
गिरि गिरि परत सम्हार न तनकी, चलत चरन अरुझात।
यह वदनारविन्द देखे बिनु, लोचन अलि अकुलात।।
अंग निरंग भये जैसैं हिम मारुत सुखतजिकै विल्लात।
मन मनसा[3] सँग उड़ै, फिरित ज्यौं विटप पुरानै पात।।

---

१. पुत्री २. कष्ट पा रहैं है ३. मनोरथ

दासिनिसौं करजोरि निहोरत, हँसि पूछत कुशलात।
प्रान-अधारहिं वेगि मिलावौ, पुनि पाँइन लपटात।।
कुञ्जभवन कल गावत अलि, शुक, पिक बोलत न सुहात।
हा राधे! रव रटत अटत[1] वन नैंननि नीर चुचात।।
तो बिनु भामिन कोटि कल्प सम, जामिन जाम विहात।
सुनि करुणाकरि व्यासस्वामिनी पियहि मिली मुसिकात।।१४८।।

सारंग

विहारी वन विलपत विरही।
जौ न पत्याउ[2] सुनहि श्रवननि दै, हा राधा! टेक रही।।
श्याम जपत तो नाम काम-शरकी तन चोट सही।
तू दाता, है लची, परायौ सर्वसु चाँपि रही।।
चरन गहत हौं, कहत कछू नहिं, सैंनदै विहसि रही।
व्यासस्वामिनी मिली प्रीतम कौं बढ़ाइ सुरत रही।।१४९।।

नट—

समुझि राधिका कीवौ अब मान।
तेरे दुसह विरह प्रीतम कौ दुखित रहत सखि प्रान।।
रसमें विरसु न कीजै सुन्दरि, तो तैं कौ अति जान।
दारुन विपति परति पियकौं, तो बिनु सुखदानि न आन।।
तुव गुन, रूप, शील, छवि क्यौं कवि पहँ जात बखान।
मीठी व्यास वसीठी जोरी, मिलि कीनौं बन्धान।।१५०।।

सारंग—

मान तें होत निशा रस हानि।
तो बोलि-बोलि बूझत है री, वेगि चलहु सुखदानि।।
बिलपत कुञ्ज कुटीर कुँवर की, पीर धीर पहिचानि।
मृत भय दासहि दै अधरामृत जीवय शिरधरि पानि।।

---

१. भ्रमण कर रहे हैं २. विश्वास करना

चेतय श्रवनन टेर सुनावहि इहि रव मधुरी बानि।
करसौं उरज मिलाउ चरनु करि गोरी राखहि कानि।।
आतुर चली अली सँग चातुरता विसरी हित जानि।
व्यासस्वामिनी कण्ठ-लगावति, रसिकहि रतिरस सानि।।१५१।।

मेरे कहैं न मानति तू, सर्वोपरि मोहनकी भामिनि।
प्रानरवन सौं हिलिमिलि खेलि, शरदकी जामिनि।।
चलि बलि जाउँ मुखारविन्दकी विहँसि गजगामिनि।
बिछुरि विराजति नहीं व्यासकी स्वामिनि, ज्यौं घन दामिनि।।१५२।।

कामसौं श्यामहि काम पर्‌यौ।
घन बसन्त वैरिनि मिलि तो बिनु, दीन जानि निदर्‌यौ।।
हा! राधा हा! कुँवरिकिशोरी, विलपत विपत्तु भर्‌यौ।
जैसैं पंक कूपमें बीध्यौ, कौन करि[1] निबर्‌यौ।।
वरषत मनसिज की पीर अति, पति धीरज न धर्‌यौ।
जैसैं दृढ़ वागुरमें[2] अरुझौ सु को जु मृग विडर्‌यौ[3]।।
लाल भयौ बेहाल विरह वस पहिलौ सुख बिसर्‌यौ।
जैसैं वृषभ बल गह्यौ अजासुत बचन न सुख उचर्‌यौ।।
कौन कौन दुख बरनौं पिय कौ जो दुख फरन फर्‌यौ।
व्यासस्वामिनी करुना करि हरि कौ, सब परिताप हर्‌यौ।।१५३।।

लाड़िली मान मनावौ पियकौ मुख चाहि।।
तो बिनु दीन, मीन ज्यौं जल बिनु, तासौं कहा रिसाहि।।
जलधर अधर राखि मोहन-चातककी मेटि तृषाहि।
बेगि किसोर चकोरहिं चंद्रवदनकी प्याउ सुधाहि।।
जैसी प्रीति रीति करि आये, तैसी ओर निबाहि।
सुनत वचन करुनाकरि व्यासस्वामिनी मिली ललाहि।।१५४।।

१. हाथी २. हिरण फँसाने का जाल ३. भागना

पिय पर जियतैं करहि न रोषु।
तेरे तामस कुमरानौ मोहन मुख पंकज कोषु।।
साँची झूठी बात कहत तूँ, करत नहीं निरजोषु[1]।
कवन भवन तैं सुंदर देख्यौ, जाहि लगावत दोषु।।
उठि चलि बेगि जाउँ बलि तेरी, अधर सुधा दै स्यामहि पोषु।
सुनत वचन प्यारेहि मिलतही, मिट्यौ व्यासकौ सोषु[2]।।१५५।।

नट—

ठाड़े लाल कुंज-महल के द्वारैं।
हा राधा बिलपत मनमथ डर सुनरी करत पुकारैं।।
इक इक मूँठि[3] पांच-सर[4] वरषत मोहन गात उघारैं।
अंचल कवच उढ़ाउ स्याम उर डारत काम बिदारैं।।
तेरौ बिरह बढ्यौ है बैरी दिनहीं डारत मारैं।
जीबै मृतक तबहि नैंननि पर पीन-पयोधर डारैं।।
नैंकु कृपाकरि मुखमहि वरषहि अधर सुधा रस धारैं।
व्यासस्वामिनिहि मिलि नागरु रति-रन कह भयौ उतारैं।।१५६।।

कमोद

कह्यौ मानिरी मेरौ भामिनि।
कुंज-महल तल मोहन विलपतु हा ! हा ! कैसी कामिनि।।
बेलि विटप विछुरे न विराजत जैसैं घन बिन दामिनि।
ऐसैं जोटहिं ओट न सोभा विधु बिनु सरद की जामिनि।।
इतनौं सुनि उठि चली अली-सँग, गावति अति अभिरामिनि।
बीचहिं भेटि, मेटि पियकौ दुख, व्यासदासकी स्वामिनि।।१५७।।

वृंदावन गोरी मानरी मान निहोरौ[5]।
तोसी चतुर सुजान आन को, मोहन है अति भोरौ।।
प्रान-रवन के भवन गवन करि, मन महँ धरि हठ थोरौ।
अति कै कोप ओप[6] नाहिन कछु, स्याम भयौ तन गोरौ।।

१. निर्णय २. शोषण ३. प्रहार ४. कामदेव के पाँच बाण ५. अनुनय-विनय ६. शोभा, आभा

छमि अपराध साधु तेरो उर, पिय हिय सौं हित जोरौ।
व्यासस्वामिनी मिलि प्रीतम सौं मचकति सुरत हिंडोरौ।।१५८।।

सुचित है सुनि सखी बात नवीन।
तेरे कोप धोप[1] दै संगी दुखित करे सब दीन।।
जीव जीविका बिनु क्यौं जीवै, निराधार आधीन।
हानि दानि की जाचिक विमुखै, कैसैं चलै प्रवीन।।
पियत पपीहा घन ही कौ, वन-सेवत जियहि न मीन।
प्रान दान कौ देहि चकोरहि भयौ चंद्रमा खीन।।
इहै विचित्र जु मानसरोवर हंस होइ क्यौं छीन।
वन वसि करत विलाप भोगवत करि परलय प्राचीन।।
मुनि मन धीर नहिं पीर सुनि मिले हरषि करपीन[2]।
व्यासस्वामिनी सुखहिं दियौ दुख, करिकैं हरि बल-हीन।।१५९।।

श्याम सरोवर कौ जल छीन।
गोरे गात मेघ वरषे बिनु, तन मन लागत दीन।।
आस नितंब बिंब कंदावलि[3], त्वचा कमलिनी पात।
नाल मृनाल जघन भुज कर पद कमल सुदल कुम्हिलात।।
लोचन-हीन मीन पियके बिनु कुंडल मकर थके।
केस सैवाल निरख भूषन गन, शंख सीप अटके।।
रोमावलि उपवन नहि बोलत वाँनी कोकिल कीर।
मुख इंदीवर विकसत नाहिंन, कूजत मधुप अधीर।।
सुरत जलद-रस पूरित सर, ऊसर, वलि वसि व्यास गँभीर।।१६०।।

नट—

कौन समै सखी अबहि मानकौ।
सरद निसा गई, अरुन दिसा भई, होत न उदौ भान कौ।।
दधि भाजन घनघोरि घमर व्रज, सुनियत सबद गान कौ।
चकई बोलति भैंवरिन गुंजति तोहि स्वाद नहिं कानकौ।।

---
१. प्रहार २. हाथ पकड़ना ३. कमल की जड़

विलपत रुदन करत तन छाँड़ै लोभ करत नहिं प्रानकौ।
लेत उसास वास लै तेरी, करि विस्वास दान कौ।।
चौंकि चितै उझकत तेरौ पथ, आहट सुनतहिं पानकौ।
धरकि धरनि पर लुठत उठत नहिं, डरु करि पंचवानकौ।।
रति के भूखे पतिहि परोसति भोजन अंग दानकौ।
व्यासस्वामिनी दियौ ऑंचवनु कुँवरहि अधरपानकौ।।१६१।।

देवगन्धार—

राति विहात न वन वन भटके।
तो विनु छिनु जुग-सत सम लेखत, मोहन रति गृह अटके।।
संभ्रम हरि जुन्हाई भेटत, चकित पानके फटके।
तव पथ जोवत, रोवत ठाढ़े, तर हरि वंशीवट के।।
जमुनाजल झंपत अति कंपित, मानत नाहिन हटके।
क्यौं करि धीर धरै अलि लंपट, या मुखकौ मधु गटकै।।
इतनौं सुनि मुनिव्रत तजि नागरि आई नागर नटके।
व्यास आस पुजई, हँसि वस कियौ लालन भौंहनि मटके।।१६२।।

गौरी—

मान गढ चढत सखी कत आजु।
स्याम कामवस घेरि सुदृढ कै, करिहै अपनौ काजु।।
तेरे सुभट कटकई[1] जोर तोरि, हित करत अकाजु।
मन सेनापति मिल्यौ याहि लै, जाहि लग्यौ सब काजु।।
मेरौ कह्यौ सुनहि किनि पियहि, अकोर उरज दै गाजु।
व्यास वचन सुनि कुँवरि निवाज्यौ[2] स्याम लयौ सिरताजु।।१६३।।

सारंग—

आवति जाति विहानी राति।
समुझायैं समझत नहिं तूँ सखि, ताहू पर अनखाति।।

१. सैना २. कृपा की

वह देखि चकई पियहि मिलन कौ, अति आतुर अकुलाति।
चंचल भ्रमरनि भ्रमर मिलन कौ कमल-कोष-मँडरात।।
तेरे विरह हमारीऊँ अँखियनि, अँसुवा उमगि चुचाति।
सो करि जु तोतैं होइ सयानी, पाँ-लागति मुसक्याति।।
इतनौं सुनि मुनिव्रत-तजि नागरि, पियके हिय लपटाति।
विहरत देखि व्यास निजु दासी फूली अंग न माति।।१६४।।

देवगिरी व गन्धार—

क्यौं मन मानैं गोरी कैसैं इनि बातनि।
बेही काजकौं मनावन आई, मान किये कौ,
दुख सुख उपजतु देखैं पिय गातनि।।
स्याम लै आपनैं काजुकौं बावरे,
वधिक तैं अधिक जानत घातनि।
व्यासकौ स्वामी कोकिलाहू तें कपटी अपनी,
चौंप अपन्याइत करि पुनि अंत मिलै पितु-मातनि।।१६५।।

कल्याण—

सन्देसौ कह्यौ दूतिका आनि।
अनबोलैं सब अंग दिखाये, नागरि लैहै जानि।।
वदन पसार निमेषनि बिनु चितयौ, सिर पर धरि पानि।
कान कुकाइ[1], गाइ, हँसि, नाच्यौ, धरनि गिरनि मुरझानि।।
पुलकित कंपित स्वेद भेद तन, अँसुवनि आँखि चुचानि।
मूँदत श्रवन उसास कंठ धरि फारत पट दुखदानि।।
वनमाला तोरति जोरति कर पाँइ परति मुसकानि।
सीतल भेंटि कमल उर पँह धरि, कदलि खंभ लपटानि।।
और विपद सुनि मुनिव्रत तजि छूटी जियकी वानि।
व्यासदासिके समुझि विनोदनि, कुँवरु जिवाये आनि।।१६६।।

१. कूक देना

सारंग—

देहि सखि पियहि प्रानकौ दान।
तूँ अति चतुर उदार-सिरोमनि, करत कृपनता मान।।
वन विलपत, मुख देखे बिनु, दुख पावत रूप-निधान।
उठि चलि करुनावन्त कंत की, तन वेदन पहिचान।।
जियत स्याम तव नाम, गाइ गुन, करि करि रूप वखान।
पतति पतत्र पत्र रव सुनि सुनि, पथ जोवत दै कान।।
सारंगनैंनी चली अली सँग, सुनि सारंग की तान।
व्यासस्वामिनी रति रन जीति, हन्यौ नूपुर नीसान।।१६७।।

धनाश्री—

तेरे दरसन कहँ सुनि राधा प्रीतम अति अकुलात।
राति-विहात न भटकत कुंजनि, विलपत काल न जात।।
विसर्‍यौ वेनु रेनु तन लागी, पीरौ पट न सुहात।
गुंजा विपति पुंज मनि भूषन, गिरत गात निरधात[1]।।
पुलकित कंपित स्वेद श्रवत अति नैंननि नीरु चुचात।
तेरे कुच आलिंगन बिनु क्यौं उर संताप बुझात।।
मिली व्यासकी स्वामिनी करुनासिंधु रसिक पीवत न अघात।।१६८।।

कान्हरौ—

कुँवरि करि प्रान रवन सौं हेत।
तेरे त्रास उसास न आवत, मोहन भयौ विचेत।।
तोहू अछत मदन कदनानल[2], स्यामहि अति दुख देत।
जलधर-अधर वरषि किनि सींचहिं, सुरत बीज कौ खेत।।
त्राहि विरहि विपदा तैं सुंदरि, कुँवरहिं हमहि समेत।
तो बिनु वृंदावन हम कहँ भयौ, कारागृह संकेत।।
आतुर हमहि निहोरत, पाइँन-परतु, बलैया लेत।
पियहि मिली हँसि व्यासस्वामिनी, सुख सागर कौ खेत।।१६९।।

---

१. विश्वकित २. दुःखाग्नि

सारंग

गावत प्यारौ राधा तेरौ जसु।
तेरौई नाम जपत और बिलपतु है, कामकौ स्यामहिं संक सु।।
कह्यौ न परै दारुन दुख प्यारी तेरे विरह मोहन के कंठ रह्यौ असु[१]।
व्यासस्वामिनी करुनाकरि राख्यौ हरि चाख्यौ अधर-सुधारसु।।१७०।।

मानसरोवर हंस दुखारौ।
सीतल कमलखंड मंडन बिनु, कैसे होत सुखारौ।।
नीर छीर नहिं निवरतु प्यासैं, विलपतु ह्वैगयौ कारौ।
मुकताफल बिनु दीन छीन भयौ, जौवन धन कौ गारौ।।
खंजन, मीन मधुप देखे बिनु जानत जग अँधियारौ।
व्यास हंसिनी विहँसि मिली, निजु अंग चुनायौ चारौ।।१७१।।

जयतिश्री—

करि प्यारी पियकौ सनमान।
मानिनि मान मनायौ वलि जाउँ, सुनि विनती दै कान।।
सुंदर सुघर रसिक-कुँवरहि तू निज अनुचर करि जान।
तू जीवन धन भूषन हरिकैं, तो बिनु सरन न आन।।
तोहू अछत मृदुल उर वेधत, विरह वधिकको वान।
अधर-पान प्रीतम माँगत सखि, दै विवि उरज प्रधान।।
मदन भुजंग गरल की औषधि, तुव अधरामृत पान।
तेरौ प्यारौ जाचक जाचतु, तोपै जीवन दान।।
तो बिनु दीन छीन विलपत ज्यौं, जल बिनु मीन तजत है प्रान।
सु करु जु तोतैं होइ सयानी, तौसौं कौंन सुजान।।
तो बिनु विपिन भयानक, कुंज महल अति करत विथान[२]।
फूल, त्रिसूल, दुकुल दहन सम, चंद किरन जनु भान।।
धीर समीर तीरसे लागत, करत भँवर पिक गान।
मोर मुकट सिर भार हार सखि, चंदन गरल वितान[३]।।

१. प्राण, २. व्यथित ३. विस्तार (लेपन)

कहौं कहालौं कहौ धीरकी पीर, सखी जिय जान।
हा राधे, हा कुँवरिकिसोरी, विलपत रूपनिधान।।
सुख साधन सब दुखभाजन भये, कहत न बनैं बखान।
करुनासिंधु व्यासकी स्वामिनी, पियहि मिली तजि मान।।१७२।।

कोप करति कत बात कहेतें।
रास रजनि में बिरस होत सखि, पियसौं रूषि रहेतें।।
धरमु न रहतु नाइका कौ कछु, पति कौं बिपति सहेतें।
कीरति बिमल बाढ़ि है जुग जुग प्रीतम ओर निबहेतें।।
बलि बलि जाऊँ रहै न कछू सुख चंचल मन उमहेतें।
यह सुनि पिय के हिय लपटानी व्यासहि चरन गहेतें।।१७३।।

सारंग तथा बिलावल --

तुम बिनु स्याम भयौ अति दीन।
जैसैं जल बिनु जेठकी सलिता, कैसैं जीवत मीन।।
कृपन गाँउँ महँ कैसैं जीवै, जाचिक वपुरा छीन।
यौं तो बिनु वृंदावन कौ सुख, कुँवरहि लागत खीन।।
चंदहि लग्यौ चकोर व जैंसैं चातृक घन आधीन।
ऐसैं तेरे अंगन के रस, जीवत कुँवर प्रवीन।।
जैसैं सकल-कला गुन प्रगटत, नहिं जानत गुन-हीन।
अैसैं व्यासस्वामिनी कुच विच, प्रीतम कीनौं लीन।।१७४।।

मारू व मालव –

आवत जात सबैनिसि निघटी[1] अजहूँ सुनि मान निवारिये मानिनि।
तेरौ मग जोवत मनमोहन, तुव पटितर कोउ और न भामिनि।।
तुही राज, तुही पाट,तुही तन, तुही मन, तुहीप्राननकीप्यारी,गजगामिनि।
कुंजमहल में तलप साजि बैठे, बेगिपाउधारियेव्यासकीस्वामिनि।।१७५।।

---

१. बीत गई

केदारो—

रजनी विहान[1] होत तुव न मान हीनौ।
काहेकौं कुँवरि ऐसौ हठ कीनौ।।
चंदा-दुति मंद, तारागन छबि छीनौ।
तू अनारिनि सरस लागतु नवीनौ।।
कुमोदनी कुंदनकीकली कुम्हिलानी।
रति-रस रिसिभरी तैं न प्रीति ठानी।।
अरुनवरन दिसा रवि प्राची अनुरागी।
नैंनकोर ओर निरख तू न प्रेमपागी।।
विकसन लागे कमल, मधुप मधुर बोलैं।
बाँके, बड़े टौंनहा[2], ये तौंन नैंन खोलै।।
व्यासिदासि कहत ही, कह्यौ मानु मेरौ।
जानौंगी जो लालजू सौं मानु रहै तेरौ।।१७६।।

कहौं कासौं समुझै को बात।
जानै जान सयान कहैहूँ, मानैं मन अकुलात।।
कैसैं जियै चकोर कहा पिये चंदहि गगन समात।
पियै न वारि विडास्यौ चातृक, करि मन घनकी घात।।
दीन न होत मराल, मीन-कुल, सर सूखै मरिजात।
माधूकरी न माँगत मधुकर गिरत कमलदल पात।।
वारि बियारि झकोर दुखित है गिरि पर मेघ चुचात।
कनक चुरायैं बिनु करन चुरैयैं, सहज सुखी न अघात।।
मृगतृष्ना लगि दुहुँदिसि धावत, व्याकुल मृग न बुझात।
व्यास वचन सुनि मन मिले खेलत सोच सकुचि पछितात।।१७७।।

कमोद—

सब निसि ढ़ोवा[3] करति किसोरहि भोर मान-गढ़ टूट्यौ।
गोरे गात गढौई[4] गाढै[5] मन सेनापति कौ सतु छूट्यौ।।

---

१. प्रातः काल २. जादू करने वाले ३. आना जाना ४. किलेदार ५. दृढ़ता से

स्याम-अंगसौं निकस्यौ जो दल छलबल तें जनु खूट्यौ[1]।
उरनि डरनि रनभूमि न छूटी, जदपि काम सुभट हूँ कूट्यौ।।
साहसु बाँह सुनि राखि सहजही सुख सागर जनु फूट्यौ[2]।
व्यासस्वामिनी मिली बाँहदै पुनि लचि लालन लूट्यौ।।१७८।।

नट—

तू नेंकु देखिरी प्रीतम कौ मोहन मुख।
गौर चरन पर, अरुन श्याम छवि, मानौ विधुकुल सौं करत कमल रुख।।
अरु लोचन जल विंदु विराजत मनहुँ मधुप मधु वमत मानि दुख।
आरत जानि आनि, उर लालहि, व्यासस्वामिनी देति सुरत सुख।।१७९।।

कान्हरो—

कहा भयौ जो प्रान रवन तें वारक चूक परी।
ठाकुर लेइ सँवारि बेगि ज्यौं, सेवक तें विगरी।।
तेरे डर कर-काँपत पियके, पियरि परी मुखरी।
अलकनि ओट पलक नहिं नैंननि हिरनी सी विडरी।।
अधर दुरावत उरहि धकधकी, सुध बुध सब विसरी।
लेति उसास, व्यास प्रभुकौ उपहास करहि जिनरी।।१८०।।

केदारो व कमोद—

पीन पयोधर दै मेरी दीनैं।
अधर-रस-मधु प्याइ जिवावहु, विरह रोग बलहीनैं।।
ओली[3] ओड़ति[4] चोली के बँध, खोलन दै आधीनैं।
कुच गहि चुँवन दानु लैंनदै, चरनकमल रज लीनैं।।
अपनें अंग नगनि के घर में, मिलन दै स्याम नगीनैं।
व्यासस्वामिनी सुनि रति सलिता पोषत मोहन मीनैं।।१८१।।

मलार—

मान विमान चढ़ी तू धावति।
पाछैं लाग्यौ फिरत कुँवर ताहू मुख न दिखावति।।

१. रोक लेना २. सीमा लाघँना ३. पल्लो ४. पसारना

तेरी कानि करत वन निविडनि, कुंजन निकस न पावति।
तो बिनु कामविवस स्यामहि कत वन वीथी अरुझावति।।
सनमुख हरि आये सहचरि है, रवकि कंठ लपटावति।
दै चुंवन हँसि व्यासस्वामिनी प्रगट वेद बौरावति।।१८२।।

निसि अँधियारी दामिनी कौंधति
राधिका प्यारी बिनु कैसैं रहै वृंदावन।
घुमरि घुमरि घन धुनि सुनि दादुर,
मोर पपीहा सुघर मलार सुनावन।।
उन्मद मदन महीपति दल सजि,
विरही कौ बल धीर हलावन।
कोटिक कहिकहि मैं समुझाई,
व्यासस्वामिनी मान न कीजै सुनि श्रावन।।१८३।।

सावन मान न कीजै माननि।
काम नृपति दल साजैं आवत, पठयौ बादर धावनि[1]।।
दादुर, मोर, पपीहा बोलत, कोकिल शब्द सुहावनि।
गर्जत सावन आयौ वन-घन, दामिनि-असि चमकावनि।।
निशि अँधियारी विहारी आयौ, पैयाँ लागि मनावनि।
व्यासस्वामिनी हँसि उर लागी तनकी ताप बुझावनि।।१८४।।

होति कत पियहि मिलनकौ सीरी[2]।
उठि चलि-वेगि राधिका, वह देखि पश्चिम खसित ससीरी।।
तेरे नाम, रूप, गुनकी छबि मोहन उर माँहिं बसीरी।
आवत जात मनावत व्याससखीकी वैस खसीरी।।१८५।।

मनावौ मानिनि मान अलीरी।
विलपत विपिन अधीर स्याम, कहि पठई बात भलीरी।।

---

१. दूत २. मौन, निरुत्साहित

घन दामिनि कबहूँ नहिं बिछुरत मधुकर कमल कलीरी।
सारस कोक मराल मीन जल, प्रीति रीति कुसलीरी।।
सहचरि वचन-रचन-सुनि सुंदरि, मुरि मुसकाइ चलीरी।
व्यास त्रास तजि विहरत दोऊ, रति संग्राम बलीरी।।१८६।।

स्यामकौ काम करत अपमान।
सुंदर सुघर कुलीन दीन अति, दाता रूपनिधान।।
तासौं रूसत क्यौं मनभान्यौं जान्यौं तेरौ जान।
साधुहि हठ अपराध लगावति, व्यौरौ करति सयान।।
तेरौ नाउँ जपतु विलपतुरी, करतु रहतु गुनगान।
मोहू कत बतरस बौरावति बाढ़तु बहुत बखान।।
बचन सुनत उठि चली अली सँग, छौड्यौ निजुकरि मान।
पियके हिय हँसि लगी व्यासकी स्वामिनि दै जिय दान।।१८७।।

मान न कीजै मानिनि वरषा ऋतु आई।
अंग संग मिलि गाउ राधिका, राग-मलार सुहाई।।
बिनु अपराधहि रूसनौं छाँड़िदै श्रीवृषभान दुहाई।
व्यासस्वामिनी साँवरे-सुंदर, पाँइनि लागि मनाई।।१८८।।

विलावल—

बोलन लागेरी तमचुर[1] मधुर मधुर बोल।
अजहूँ न आई प्रान-पियारी फूलन लागे कमल टोल।।
वरुन-दिसा[2] खसत ससि कंजकोष मधुप लोल।
मदन दहन ताप ज्वलित अंगराग कुसुम झोल[3]।।
पिय बिलाप सुनत निकट मिलत कंपु पुलकित कपोल।
विहरत व्यासस्वामिनी मोहन बस कीनौं बिनु मोल।।१८९।।

---

१. कुक्कुट २. पश्चिम दिशा ३. जलन

धनाश्री—

देखि धौं री इहिं मग राधा आवति।
तन चमकत भूषन धुनि सुनियत, अरु गुनगति लै गावति।।
अद्‌भुत राग रागिनी घन वरषत, आनंदसिंधु बढ़ावति।
सौंधौ महकि रह्यौ तन गोरे अंग परसि सब ताप बुझावति।।
व्यासस्वामिनी उझकि औचका पियहि हीयसौ लावति।।१९०।।

तन मन धन न्यौछावरि ताहि हौं दैहौं,
जो मोसौं कहै वेगि राधा है आवति।
ताहीकौ हौं सदाई सेवकहौं जोइ प्यारीहि रूसी छलबल कै मनावति।।
और सब भली यै सखी सहेली हित चित करि तेरे जिय भावति।
पुजवति मेरी आस व्यास दासी चौंप लागैं मोहि तोहि मिलावति।।१९१।।

नैंकु सखी राधा पुनि आवति।
नूपुर धुनि सुनियतु है निकटही विकट वीथिनि कोऊ ऐसैंही गावति।।
अरु गोरे अंगनकौ परिमल महकत मैं पहिचान्यौं मदन बढ़ावति।
इतनी कहत व्यासकी स्वामिनी रहसि विहसि
पिय उर लागी सुरत पुंज कुंजनि वरषावति।।१९२।।

कान्हरौ वागेश्वरी (मूलताल) व सारंग—

अबहीं आवैगी पिय प्यारी।
काम पोचु[1] अति, स्याम सोच तजि,
सुनहु मते की बात श्रवन दै तनक रही उजियारी।।
जैसियै तुमहिं चौंप तैसियै उनहि जानि,
मोहि संतोष आनि जाउँ वलिहारी।
धीर धरहु मन, पीर सहहु तन,
तुम जु कहावत सूर सबही विधि, कहा करैं वह नारी।।

---

१. तुच्छ, निर्बल

अरबरात, हौं अबही देखि आई,

विकट वीथिन धाई, देह न सिंगारी।

व्यासकी स्वामिनी दामिनिसी चमकति,

लखी न परति अंग अंग लपटानी विहरत विहँसि विहारी।।१९३।।

धनाश्री—

गोरी एक सीख सुनि हित बात कहौं।

प्रान मान सौं बैरु बढ्यौ क्यौं दारुन विपति सहौं।।

दुखकी राति विहात न सुख बिनु, क्यौं करि कुंज रहौं।

को तन ताप बुझावै कहिधौं, काके पाँइ गहौं।।

जान अधीर पीर को मेटै, जानत जुगति न हौं।

जोबन-मंतहि मिलत व्यास कहि आनँद लै निबहौं।।१९४।।

कमोद—

सहचरि मेरौ सन्देसौ कहियहु।

करि मनुहारि, वारि जल पीजहु पदपंकज गहि रहियहु।।

जो कछु कहैं किसोरी मोसौं, तू सब सनमुख सहियहु।

मेरी ओरतैं बड़ी बेर लौं, कुच आँकौ भरि रहियहु।।

मेरे दुख सागरहि सोषि सुखसागरकौ जल थहियहु।

इतनौ करत व्यासस्वामिनि कह पिय हिय ओर निबहियहु।।१९५।।

गौरी—

कौंनसौं कहिये दारुन पीर।

सुनि ललिता वनिता विनु छिनु छिनु, जैसी सहत शरीर।।

जीव न रहतु जीविका विछुरैं, का की कुंजकुटीर।

मदन दहन उर जारत उमगि बुझावत लोचन, नीर।।

प्रान पयान करतु अनदेखैं, देखें विनु धरत न धीर।

दरसन आस उसास रही, दुखदानि सखिनिकी भीर।।

भूषन वृष[1] पूषन[2] तन लागत धूमकेत[3] सम धीर।
मालावलि व्यालावलि, मुकुट कुकुट[4], वंशी खरतीर[5]।।
कंटक किसलय सेज, चंद्रमा, चंदन गरल समीर।
सुनत भयानक मोर चकोर हंस पिक मधुकर कीर।।
करुनाकरि सहचरि लै आई, ये दोउ रति रणधीर।
विहरत व्यासस्वामिनिहि बाढ़ी-सुरत नदी गंभीर।।१९६।।

जयतिश्री—

क्यौं सखि जामिनी जाम विहात।
कछु बाधा न रही, राधा बिनु प्रान छूटि है प्रात।।
दुखसागर महँ मोहि छाँड़ि गई, भामिनि भरि अधरात[6]।
कुंज-महल महँ अंधकूप जनु, कोऊ न पूछत बात।।
हौं वलि ताकी ललिता, मोहिं मिलावै गोरे गात।
तब नैंननि तैं मैन निकसि है, जब दैखौं उर जात।।
सुनि आरतहि पुकारत, प्यारी पियहि मिली अकुलात।
पियत किसोर चकोर वदन-विधु, अधर-सुधाहि चुचात।।
रति लंपट नटनागर सरवसु, रस लूटत न अघात।
व्यासस्वामिनी कौ रससागर स्याम गात न समात।।१९७।।

केदारौ तथा सारंग—

चलि ललिता क्यौंहू कै बोलौ राधामाननि आवै हो।
अधर विधुहिं मुखमें वरषावहि प्राननि मरत जिवावै हो।।
वरषत मदन कामकी चोटहि उरजनि ओट बचावै हो।
राधिकावल्लभ गहि भुज पल्लव दुखितहिं कंठ लगावै हो।।
सुनि विहँसी वृषभाननंदिनी, लालहिं मोद बढ़ावै हो।
व्यासस्वामिनी सब आसा पुजवति, हँसि रति रास नचावै हो।।१९८।।

---

१. गोरपंख २. सूर्य ३. अग्नि ४. चिनगारी, लौ ५. तीक्ष्णतीर ६. आधी रात

कान्हारौ—

जौ तू राधा मन क्रम वचन परम हितु मोपर
करि आई तौ वलि वलि कुमया[1] नहि कीजै।
नैंकु सुदृष्टि कै मोतन जो चितवौ तौ,
अपनौं जीवन जनम सुफल करि लीजै।।
तेरे रूप रँग रस चितु चिहुँट्यौ,
तोसी कौंन जाहि मन दीजै।
तोसी तुही तातें व्यासकी स्वामिनि
कंठ लगाइ अधरामृत पीजै।।१९९।।

गौरी—

मेरे तू जियमें वसति नवलप्रिया प्रानप्यारी।
तेरेई दरस परस राग रँग उपजत,
मान जिन करि करौं हा हा री।।
तूही जीवन तूही प्रान, तुही सकल-गुन-निधान,
तो समान कोऊ और नाहिंन, मोकौं हितकारी।
व्यासकी स्वामिनि तेरी मया[2] तें,
मैं पायौ नाम विहारी।।२००।।

मलार तथा कल्याण—

बोल वन्धान न मान करौ अपराधहि हौ न छमौंगी।
लवा लूतरी[3] अब न मानि हौं, देखत कछू कहौंगी।।
दुरुख दुभाषहि साख नही कछु, इक रुख दुखहि डहौंगी[4]।
आतुर होइ न चतुर स्याम सुनि, हौं फिरि पाँइ गहौंगी।।
वरवट[5] लट पट गहत व्यासकी प्रीतिहि लै निवहौंगी।।२०१।।

धनाश्री—

सुनहि पिय जियतैं हौं न रिसानी।
तुम्हरे मनकौ मरमु लेतिही, अरु चित काज निसानी।।

---

१. निष्ठुरता २. अनुकम्पा ३. चुगली ४. जलाना, नष्ट करना ५. वरबस

साँचेहूँ दुख पायौ, सुंदर मुखकमल कांति कुम्हिलानी।
मेरौ कोप जानिवौ झूँठौ सदा मौन अभिमानी।।
प्रगटी ऊपर सबै कालिमा भीतर कौंनैं जानी।
उर न समाति विपति की संपति, सुनियत कपट कहानी।।
लेत उसास आस करि हरि हरि कहि सहचरि मुसकानी।
समुझि विनोद व्यासकीस्वामिनि स्याम कंठ लपटानी।।२०२।।

जयतिश्री—

कबहूँ अब न रूसि हौं प्यारे।
सदा तूठि[1] हौं सुख दै प्रीतम कृतहि[2] न मानत कारे।।
तुम बड़जीव जीविका हौं, पिय तुम अखियाँ, हौं तारे।
तुम मन, हौं मनसा, तुम चित, हौं चिंता प्रान-पियारे।।
तुम सरीर, हौं अन्तरजामी हौं धन तुम रखवारे।
तुम विषई, हौं विषै, भोगता तुम, हौं भोग ललारे।।
हौं चाँदिनी चकोर तुमहौ, हम घन, तुम चातक वर न्यारे।
हौं जलरुह, तुम अलि, हौं जल, तुम मीन अधीन हमारे।।
हम तुम वृंदावनकी संपति दंपति सहज सिंगारे।
व्यासदास रस-रीति हमारी, लूटति कोटि विसारे।।२०३।।

कान्हरौ—

मान करत मैं कीनौ फिरि पाछैं पछितानी।
रस महँ विरस कियौ क्यौं प्रीतम सुनत तुम्हारी करुना वानी।।
हम तुम एक-प्रान द्वै देही, सहज सनेही ज्यौ पय पानी।
कहनि, रहनि, गति, मति रति एकै प्रीति रीति क्यौं जाति वखानी।।
मेरौ तनु तुम्हरौ भूषन धन यहै हिलग सकल जग-जानी।
तातें तुमसौं लाड करति हौं, जातैं तुम नाहिंन अभिमानी।।
जो हौं करति सोइ सब छाजति, तुम सो पति, वन सी रजधानी।
ललितासी सहचरि अनुगत अब व्यासदासि मम हाथ विकानी।।२०४।।

---

१. सन्तुष्ट २. कर्म को

कमोद—

कहि यासौं तोहि कौन सिखाई।
तू गोरी यह स्याम किसोरी धन्य तुम्हारि लुनाई।।
इहिं वन कबकौ वासु तुम्हारौ कहि मोसौं समुझाई।
अद्भुत रूप तुम्हारौ देखत, नैंननि नहीं अघाई।।
तुम राधा मोहन हूँ तें सूझत अंग अंग अधिकाई।
कोटिक कवि रसना पावैंहूँ मुख छबि कहत न जाई।।
इतनौं सुनत मानतजि माननि कौतिक देखन आई।
व्यासस्वामिनी नागर हँसि कैं सरस हियैं लपटाई।।२०५।।

देवगिरि—

आज बन एक कुँवरि बनि आई।
ताहि देखि रीझे मनमोहन-पिय, तातैं तूँ न मनाई।।
बाजत ताल मृदंग संग उहि अंग सुधँग दिखाई।
गावति हस्तक भेद दिखावति, नखसिख स्याम बनाई।।
रास रसिकसौं हिलिमिलि खेलति, सबविधि सुघर सुहाई।
मोहि पत्याहि न तौ तूँहीं चलि वलि वृषभान दुहाई।।
वचन मानि धुनि सुनि दुखसुख करि, सहचरि उरलपटाई।
विन कुच सकुच समझि व्यासस्वामिनी हँसी, रसिक रिझाई।।२०६।।

विलावल—

ऐसी कुँवरि कहाँ पिय पाई।
राधाहूँ तैं नखसिख सुंदर अबलौं कहाँ दुराई।।
काकी नारि कौंन की बेटी, कौंन गाँउ तैं आई।
सुनी न देखी व्रज वृंदावन, सुधि बुधि हरति पराई।।
याकौ सुभग सुहाग भाग अति, भाम जुवति मनभाई।
याही के रसवस है तुम, वृषभानसुता विसराई।।
यह विनोद सुनि देखन आई रवकि कंठ लपटाई।
व्यासस्वामिनी विहँसि मिली तहाँ सरस सुधँग नचाई।।२०७।।

धनाश्री—

सुनि राधा, मोहन हौं दूती, कपट वचन कहि कहि बौराई।
तोहि मनावन मोहि पठै पुनि दूती एक अनत दौराई।।
मैं अपनौं सौ बहुत कियौ पै कहा करौं लंपट अधिकाई।
अति सूरौ जौ चना वधूरौ[1] तौ पूरौ गिरि भेदि नु जाई।।
चलि हौं कौतिक तोहि दिखाऊँ, सुंदरि एक ललन पहँ आई।
तोहू तैं गुन रूप अवगरी, मानहुँ रंक परम निधि पाई।।
इतनौं सुनि उठि चली अली सँग, रुचिकरि कुँवर कंठ भुज नाई।
अंगनि अंग परसि हँसि दोऊ व्यास गिरे आतुर उरझे मुसकाई।।२०८।।

गौरी

मोहन की देही उलट रचीरी।
भई स्याम तैं पीत वरनि दुख तरनि प्रताप तची[2] री।।
नैंननि सर बूड़त विरह दहन तैं जरत बचीरी।
हा राधे रव श्रवन सुनतही अजहूँ न निठुर लचीरी।।
चंदन चंद पवन वन पनकरि दुखकी रासि सची री।
तो बिनु अनत न सरन मीत कहँ भीत सभा बिरची री।।
इतनी सुनि उठि चली अली सँग, अंग सुधंग नचीरी।
व्यासस्वामिनी रतिरस-वरषति रति रन कीच मचीरी।।२०९।।

विलावल

कहैं न पत्यैहै कोऊ बात।
स्याम काम बस गोरे ह्वै गये, राधा केसे गात।।
जैसौई ध्यान धर्‍यौ तैसैंई भये अधर गंड उरजात।
नख-सिख अंग-अनंग मोहियति, देखत नैंन सिरात।।
वह गुन रूप तोहूमें हैं सखि फूल झरत मुसकात।
गज मराल गति निरखत मोहे रति मनसिज संघात।।

---

१. बबडँर, चक्रवात २. तप्त होना

अपनी जोरिहि भेंट्यौ चाहत, ललिता की बलिजात।
तैंही रसमें बिरसु कियौ अब कौंन काज पछितात।।
कंठ बाहु धरि चली अलीकैं, सुनि अद्‌भुत अकुलात।
व्यासस्वामिनी परसत मोहन, धरनि गिरे लपटात।।२१०।।

देवगन्धार –

कोऊ राधाहिं देहु जनाउ।
ठाड़ी सखी कुंजके द्वारैं कुँवरि बेगि दै आउ।।
कौतुक एक अचंभे कौ सखि, निरखत नैंन सिराउ।
इम तुम अैसे सुन्यौं न देख्यौ कीजै या पर भाउ।।
सुंदरि एक हौंन आई तब, सहचरि करि चित चाउ।
मेटन कहति कुटेव[1] कुँवरिकी, छलबल करति सहाउ।।
यह सुनि आनि पाँउ गहि भेंटि मेटि दुख मुख दिखराउ।
व्यास आस मोहनकी पुजई मिटि गयौ बात बढ़ाउ।। २११।।

देवगन्धार –

किसोरी देखी बन में जात।
ता विनु दीन छीन भयौ डोलत, कोऊ न बूझत बात।।
तेरीसी उनिहारि नारिके, सबै लुभ्यारे गात।
चितवत चलत अधिक छबि उपजत, कोटि मदन सर घात।।
कहि मोसौं ब्यौरो तू अपनौं, अधर नैंन मुसिकात।
व्यासस्वामिनी वार न लाई, स्याम कंठ लपटात।।२१२।।

सारंग –

मोहन मुख देखत छूट्यौ मान।
नैंन लालची हँसि लपटानैं, छबि महँ दब्यौ सयान।।
मंद हँसनि सबकौ धीरज हरि चित चेत्यौ करि गान।
घूँघट पट उभयौ[2] चल सैंननि, लग्यौ मैन कौ बान।।

---

१. मान का स्वभाव २. उभड़ना, उघड़ना

विकल जानि गहि पानि आनि उर, विरच्यौ सुरत बितान।
व्यासस्वामिनी पियहि सुनायौ, रति-रनकौ जु निसान।।२१३।।

बिलावल –

दम्पति कौ सो रूप भेष धरि सहचरि वृंदावन महँ खेलति।
एक स्याम दूजी राधा ह्वै मनसिज बस कंठनि भुज मेलति।।
राधा मान कियौ तिहिं औसर हरि आये दूती ह्वै जु मनावन।
सकुची देखि कहति तब माननि कत आये तुम वदन दिखावन।।
फिरि आतुर चातुरता कीनी, दगा दूती कर पाँइ गहे।
व्यासदासि रसरासि हँसी तब चारयौं लटकि रहे।।२१४।।

मान करि कुंजनि कुंजनि खेलनि।
पिय की पीर जानि व्याकुल ह्वै, स्याम स्याम कहि बोलनि।।
संभ्रम मिलि भेंटत मेंटति दुख चिबुकं चारु टक-टोलनि।
सुनहि न पियकी चिंता तजि मसि सम लै धसत कपोलनि।।
सुनत निकट नटनागर डर करि हसि कंचुकि बँध-खोलनि।
कुच-गहि चुँवन कियौ लियौ मनु लट अंचल झक-झोलनि।।
कोककला कुल प्रगट करन सैंननि मैंननि तक-तोलनि।
व्यासस्वामिनी छल बिनु प्रीतम बस कीनौं बिन मोलनि।।२१५।।

सारंग व विहागरो –

सखि अनुसरत स्याम रिसात।
समुझि अनादर रसिक उजागर, कंठ उर लपटात।।
नेक टेढ़ी भौंह के डर, नैंननि नीर चुचात।
मनहुँ मुक्ता चुनत बाल मराल चिंचु[1] न मात।।
मनहुँ कंचन कमल के रस लोभि अलि अरुझात।
वदन चुंवन करत वरवट[2] सुनत परिभव[3] बात।।
कुटिल लोचन देखि तिहिं छिनु श्रवत श्रमजल गात।
मनहुँ चंद तुषार वरषत, सरद पुरइन[4] पात।।

१. चौंच २. बल पूर्वक ३. अनादर ४. कमल

पीठि दीनैं होत सनमुख करनि, गहि उरजात।
मनहुँ जुग जलजात उपवन हंस चरन सुहात।।
अब न ऐसौ मान कीजै, नमित कैतव[1] गात।
व्यास-प्रभुकी गति न जानत, विरस कवि सनिपात[2]।।२१६।।

कमोद—

कुंज कुंज प्रति रति वृंदावन, द्रुम द्रुम प्रति रति रंग।
बेलि बेलि प्रति केलि फूल प्रति फल प्रति बिमल विहंग।।
कंठ कंठ प्रति राग रागिनी सुर प्रति तान तरंग।
गौर स्याम प्रति स्याम वाम प्रति अँग अंग प्रति सरस सुधंग।।
मुख-प्रति मंदहास्य, नैंननि प्रति सैंन,भौंहनि प्रति भंग।
रास विलास पुलिन प्रति नागर नागरि प्रति कुल संग।।
रूप रूप प्रति गुनसागर, सहचरि प्रति ताल मृदंग।
अधरनि प्रति मधु,गंडनि प्रति विधु उर प्रति उरज उतंग।।
कहत न आवै सुख देखत मुख मोहै कोटि अनंग।
व्यासस्वामिनी राधेहि सेवहिं, स्याम धरे बहु अंग।।२१७।।

सारंग व सूहौ—

विराजमान आन वृषभानकुँवरि गान करति,
रूप गुन निधान, सुभग स्यामभामिनी।
राग तान वान लगत व्यौम जान[3] मान डगत,
कोटि चंद मंद, थकित कामकामिनी।।
अंग वर सुधंग नचति देखि सुघर,
सभा लजति मेघ दामिनी।
भ्रुवविलास मंदहासि, नैंन बल विनोद-रासि,
कुँवरि कंठ पासि दासि व्यासस्वामिनी।।२१८।।

१. छली २. समूह ३. जानकार (गन्धर्व)

सारंग—

अंग अंगप्रति सुधंग रंग गति तरंग संग,
रति अनंग मान भंग मनि मृदंग बाजै।
सुर बन्धॉन गान तान मान जान गुननिधान,
भ्रुवकमॉन नैंन बान सुर विमान छाजै।।
उरप तिरप, सुलप, सुघरि अलग लाग लेति कुँवरि,
वृन्दचाल ताल रसिक लाल लाजै।
व्यासदासि रंगरासि, देखति मुख सुख विलास,
काम विवस स्याम वाम सुरत साज साजै।।२१९।।

अँग अंग सरस सुधंग रंग रचत, नाँचत वृंदावन चारि।
विविधि वरन मन हरन वसन, तन भूषन भूषित पिय प्यारी।।
ताल मृदंग संग ललितादिक ललित वजावति करतारी।
मोहन धुनि सुनि मुनि मन मोहे खग मृग कुल मुनिव्रत धारी।।
राधा गुनसागर अगाध पतिहि रिझावति गति न्यारी।
औघर[1] सुघर मान महँ मोहन धाइ धरी उर सुकुमारी।।
अद्‌भुत छबि कवि कहि न सकत कछु हँसत लसत सोभा भारी।
व्यासस्वामिनी के पटतर कहूँ त्रिभुवन में उपमा हारी।।२२०।।

गौरी—

प्यारी राधाके गावत नाँचत मोहन रीझि रहे सिर नाइ।
तिरप मान बंधान तान सुनि विथकित ब्रज कन्या रहीं मुरझाइ।।
गुन सागर की हो सीमा उमगी, सकत न कोटिक मदन थहाइ।
व्यासस्वामिनि अधर सुधा दै नवलकुँवर लयौ है कंठ लगाइ।।२२१।।

टोड़ी—

देसी सुधंग दिखावति नैंननि,
हस्तक मस्तक गति भुव-भंग।

---

१. विलक्षण

कंठ सुकंठ राग रँग राची,
मान लेत मुख मुखर मृदंग।।
कटि त्रुटि मानहुँ ग्रीव चरन मिलि फिरत,
कुलाल चक्र[1] सो लखत न बनत तरंग।
व्यासस्वामिनि कौ कौतुक देखत विनु पँखियनि,
अँखियाँ पियकी खग सँग फिरत दोऊ श्रवन कुरंग।।२२२।।

सारंग—

कृष्णभुजंगिनि वेंनी नाचति गावति गौरी आसावरी।
नाहु बाहु अंसनि पर विलसति उपजति कोटिक भावरी।।
वलय बालकिन्निरी[2] सी सुनि विछुरत वन मृग मावरी[3]।
खग नग धम पर स्वर बदले पुलकित वन दावरी।।
सुखसागर की सीमा उमगी, विथा तरंगिनि नावरी।
व्यासस्वामिनीकी उपमा कह कौंन कामिनी बावरी।।२२३।।

आसावरी—

नाँचत नव रंग संग अंग छबि न माई
गावति मनभावति गति देसी दिखराई।।
सनमुख रुख स्याम गौर गातनि महँ झाँई।
विकसित वदनारविंद सोभा (अति) अधिकाई।।
चरन पटकि नैंन मटकि वंक भ्रुव चलाई।
हस्तक चल मस्तक कल कुच वर सुखदाई।।
कौतिकनिधि राधाकौ गुनगन कह्यौ न जाई।
काम विवस स्याम व्यासस्वामिनि उरलाई।।२२४।।

कल्याण—

साँवरे गोरे सुभग गात, सुरति रस चुचात,
देखत नैंना सिरात, रोम रोम सुख साँति।

---

१. कुम्हार का चक २. सारंगी ३. मृग माला

सुरंग वीथिनि मँह गावत नाँचत नव अँग अँग रँग भरे,
अँसनि सुख बाहु धरि, लटकति लट पाँति।।
पलटे दुहूँ निचोल, बोलत मधुर बोल,
हस्त कपोल लोल सोभित छबीली भाँति।
बाजत ताल मृदंग, देखि व्यासिदासि,
रंगरासि फूली न अंगनि समाँति।।२२५।।

केदारो—

श्याम नटुवा नटत राधिका संगे।
पुलिन अद्भुत रच्यौ, रूप गुन सुख सच्यौ,
निरखि मनमथ-वधू मान भंगे।
तत्त थेई थेई मान सप्तसुर षट गान,
राग रागिनी, तान श्रवन भंगे।।
लटकि मुँह-मटकि, पद पटकि, पटु झटकि,
हँसि विविध कल माधुरी अंग अंगे।
रतन कंकन क्वनित किंकिनि नूपुरा,
चर्चरीताल मिलि मनि मृदंगे।।
लेति नागरि उरप कुँवर औघर तिरप,
व्यासदासि सुघर वर सुधंगे।।२२६।।

गौरी—

पखावज ताल रबाब बजाइ।
सुलप लेत दोऊ सनमुख मुख-मुसकित नैंन चलाइ।।
पद पटकनि नूपुर किंकिनि धुनि सुनि न नवेरी[१] जाइ।
उरप मान महँ, तिरप मान लै, सुर बंधान सुनाइ।।
देसी सरस सुधंग सुकेसी नाँचत पियहि रिझाइ।
काम-विवस स्यामहि तकि स्यामा रवकि कंठ लपटाइ।।

---

१. अलग अलग करना

गुनसागर की सीवाँ उमगी कवि न छबिहि कहि जाइ।
व्यासस्वामिनी कौ सुख सर्वसु, लूटत मोहन राइ।।२२७।।

सारंग—

बन्यौं वन आजुकौ रस रास।
स्यामा स्यामहि नाँचत गावत, बाढ़्यौ विविधि विलास।।
सरद विमल निसि ससि गो[1] मंडित, दुहुँ दिसि कुसुम विकास।
भूषन पट अटके नट-नागर, उड़त पराग सुवास।।
अंगनि कुँवरि अनंग नचावति, भृकुटि-भंग, मुख-हास।
नवनागरि इक निसान बजावत, सुनत सकल सुख व्यास।।२२८।।

रास रच्यौ बन कुंज-विहारी।
सरद् मल्लिका देखि प्रफुल्लित, बनि आई पिय प्यारी।।
वाम स्यामकैं स्यामा सोभित, जनु चाँदनी अँधियारी।
भूषन गन तारिका तरल वदनचंद छबि उजियारी।।
कोमल पुलिन कमल मण्डल महँ मंडित नवलदुलारी।
बाजत ताल मृदंग संग नव अंग सुधंग सिंगारी।।
रति अनंग अभिमान भँग है, पद-रज घसत लिलारी।
ताँन वाँन सुर जान विमोहत, मोहन गर्व प्रहारी।।
सहज रूप गुन सागर नागर, वलि लीला-अवतारी।
व्यास विनोद मोद रस पीवत, जीवत विवस विहारी।।२२९।।

केदारौ—

पियकौ नाँचन सिखवत प्यारी।
वृंदावन महँ रास रच्यौ है, सरद-चंद उजियारी।।
ताल मृदंग उपंग बजावति प्रफुलित है सखि सारी।
वीन, वेनुध्वनि नूपुर ठुमकत, खग, मृग दसा विसारी।।
मान, गुमान लकुट लियैं ठाढ़ी डरपत कुंजविहारी।
व्यासस्वामिनी की छबि निरखत, हँसि हँसि दै कर तारी।।२३०।।

---

१. किरण

सारंग—

छबीलौ वृंदावन कौ रास।
जापर राधा मोहन विहरत, उपजत सरस विलास।।
जीवनमूरि कपूर धूरि जहाँ उड़ति चहुँदिसि वास।
जल थल कमल मंडली विगसत, अलि मकरंद निवास।।
कंकन किंकिनि नूपुर धुनि सुनि, खग मृग तजत न पास।
तान बान सुर जान विमोहित, चंद सहित आकास।।
सुख सोभा रस रूप प्रीति गुन, अंगनि रंग सुहास।
दोऊ रीझि परस्पर भेटत छाँह निरखि वलि व्यास।।२३१।।

नाचत दोऊ वृंदावन महँ।
स्यामास्याम मिले स्वर गावत छबि उपजति आनन महँ।।
गौर स्याम नट, नील पीत पट, प्रतिविंबित नग तन महँ।
जनु उद्योत[1] वलाहक[2] मनियत धनुष दामिनी दमकति घन महँ।।
सहज स्वरूप सु-गुननिकी सीमा कहत न बनै वचन महँ।
व्यासस्वामिनी कुँवरहि रीझि रिझावत राखि कुचन महँ।।२३२।।

आसावरी तथा सारंग

वृषभाननंदिनी सरदचंदिनी नटति गोविंद संगे।
जगतवंदिनी,सूरनंदिनी[3],तट,बंसीवट नागर मिलि प्रगट सरस सुधंगे।।
रास रच्यौ गुन रूप सज्यौ, न विनोद वच्यौ, देसी अंग अँग अँगे।
ताल, मान, बंधान गति रतिपति निरखि मन मान भंगे।।
कंकन किंकिनि नूपुर धुनि मिलि सुनियत ताल मृदंगे।
हस्तक मस्तक भेद दिखावत उमगत उरज उतंगे।।
भृकुटि विलास, वंक अवलोकनि, मंद-हास उपजत तरंगे।
व्यासस्वामिनीके रस गावत तरु, मृग भँवर विहँगे।।२३३।।

---
१. प्रकाश २. मेघ ३. सूर्य पुत्री यमुना

केदारो

सरद सुहाई जामिनि, भामिनि रास रच्यौ।
वंसीवट जमुनातट सीतल मंद सुगंध समीर सच्यौ।।
बजत मृदंग ताल राधा सँग मोहन, सरस सुधंग नच्यौ।
उरप तिरप गति सुलप लेति अति निरखत विथकित मदन लच्यौ।।
कोककला संगीत गीत रसरूप मधुरता गुन न बच्यौ।
भृकुटि विलास हास अवलोकत, व्यास परम सुख नैंन खच्यौ।।२३४।।

सारंग—

वृषभानकुँवरि गान करति बंशीवट मूले।
नाँचत गोपाललाल अंग संग कूले।।
कुंजभवन कोक-कुसल सुरत डोल झूले।
दसन अधर नैंन निरखि व्यास विकच[1] फूले।।२३५।।

विलावल

प्यारे नाँचत प्रान अधार।
रास रच्यौ वंसीवट नट नागर वर सहज सिंगार।।
पाइनि की पटकार मनोहर, पैजनि की झनकार।
रुनुझुनु नूपुर किंकिनि बाजति, संग पखावज तार।।
मोहन धुनि मुरली सुनि कर तब, मोहे कोटिक मार[2]।
स्थावर जंगमकी गति भूली, भूले तन व्यौहार।।
अंग सुधंग अनंग दिखाइ रीझि सर्वसु दोउ देत उदार।
व्यासस्वामिनी पियसौं मिलि रस राख्यौ कुंजविहार।।२३६।।

सारंग व कान्हरौ

आजु बनी अति रासमंडली नदी जमुना के तीर सहेली।
नाँचति गति वृषभाननंदिनी मकर चाँदिनी राति नवेली।।
मानहुँ कोटिक गोपी धावति फिरत राधिका तरल अकेली।
संभ्रम तितनेई रूपनि धरि हरि आतुर रह्यौ कंठन भुजमेली।।

---

१. विकसित होना २. कामदेव

अद्भुत कौतुक प्रगट करत दोऊ नाँचत माँचत ठेलाठेली।
अति आवेस केस, पट भूषन सिथिल, सिंधुरस झेलाझेली।।
जय जय ध्वनि सुनि खग मृग मोहे, पुलकित धन्य कुंजतर केली।
विविधि विहार व्यासकी स्वामिनि मोहन सौं हिलि मिलि खेली।।२३७।।

कमोद

नमो जुग जुग जमुना तट रास।
शरद सरस-निसि चंद-चंद्रिका, मारुत मदन सुवास।।
नटवरवेष सुरेख राधिका, अंग सुधंग निवास।
देसी सरस सुदेस दिखावति, नैंननि नैंन विलास।।
तिरप मान महँ तान लेत दोऊ सुर बंधान उसास।
औघर सुघर अतीत अनागति[1] रीझि जनावति हास।।
दंपतिकी गुन गति निरखत रति कोटि मदन मद नास।
अति आवेस केस कुल विगलित, वरषत कुसुम विकास।।
बाहुनि बीच नाहु गोरिहि गहि, लेत मधुर मधु ग्रास।
विवस भये रस लंपट जानत, रसमहँ लाज बिनास।।
व्यासस्वामिनी पियहि हियैं दै, लीनौं कुंज अवास।।२३८।।

कान्हरौ —

सुघर राधिका प्रवीन बीना वर रास रच्यौ,
स्याम संग वर सुधंग तरनितनया तीरे।
आनँदकंद, वृंदावन सरदचंद मंद पवन,
कुसुम पुंज ताप दवन धुनित कल कुटीरे।।
रुनित किंकिनी सुचारु, नूपुर मनि वलय हारु,
अंग रव मृदंग तार तरल तिरप चीरे।
गावति अति रंग रह्यौ, मोपै नहिं जात कह्यौ,
व्यास रस प्रवाह वह्यौ, निरखि नैंन सीरे।।२३९।।

---

१. ताल का एक भेद

पूरवी सारंग –

जमुना तट दोऊ नाँचत नागर-नट-कुँवरि नटी।
देखत कौतुक भूलि रह्यौ ससि, आनँद निसि न घटी।।
बाजत ताल मृदंग उपंग, अंग सुधंग ठटी[1]।
लटकति लटपट झटकि पटकि पद, मटकति भृकुटि तटी।।
मानहुँ सनमुख सिंधुहि मिलि रस सरिता भरि उपटी[2]।
हस्तक मस्तक भेद दिखावत, गावत एक गटी[3]।।
तान, बंधान, वेधि सुर वनिता विथकित लाज कटी।
नारद सारद और गुनी की, परदा सबै फटी।।
लोकचतुर्दस माँझ व्यासकीस्वामिनि गुननि गटी[4]।।२४०।।

विलावल –

स्याम वाम अंग संग, नाँचति गति वर सुधंग,
रास लास रंग भरी, सुभग भामिनी।
तरनितनयातीर खचित मृदुल रचित कनक हीर,
त्रिगुन सुख समीर सरदचंद जामिनी।।
चरन रुनित नूपुर, कर कंकन, कटि किंकिनी,
धुनि सुनि खग, मृग मोहि गिरत काम कामिनी।
पंचमसुर गान तान, गनन[5] मगन भये आन,
भगन[6] मगन जान, गिरत मेघ दामिनी।।
झपलात चाल उरप लेति तिरप मान सुखहि,
चंद सुघर औघर वर सुलप गामिनी।
नयन लोल मधुर बोल, भृकुटि भंग, कुच उतंग,
हँसति पियहि विवश करति, व्यासस्वामिनी।।२४१।।

कमोद

नाँचत नंदनंदन वृषभाननंदिनी बनी,
रास रंग अँग सँगीत तरनितनया तीरे।

१. सुशोभित होना २. बाढ़ आना, उफनना ३. रहस्य पूर्ण ४. भण्डार ५. नक्षत्र ६. ग्रह समूह

राकानिसि सरद ससि कर[1] रञ्जित वृंदावन,
फूल जाहिजुही मलय धीर समीरे।।
घुँघरी पद बाजति, कटि किंकिनी, कर कंकन रव,
कंठमाल, श्रवनफूल चल दुकूल धीरे।
मंदहास, मधुर वैंन, भुव विलास, नैंन सैंन,
देखत सुख मुख, भगत ताप, होत हृद सीरे।।
पंचम-धुनि गावत पटु तान सुनि विमान विकल,
वृंदारक[2] वृंद-वधू विगलित चीरे।
कुसुमावलि वरषि हरषि श्याम कहैं हो री हो,
वारि-फेरि देत व्यासहिं भूषन पट पीरे।।२४२।।

जयतिश्री

रच्यौ स्याम जमुनाजल पर रास।
संग राधिका अंग अंग छबि, सब गुन रूप निवास।।
विविधि कमल मंडल की सोभा, जल थल कुसुम विकास।
उडुगन सहित सकल राकानिसि, चरननि तर आकास।।
भूषन धुनि सुनि हंस हंसिनी, मधुप न छाँड़त पास।
पद पटकत वन[3] छीटन छिरकत लेति मान तजि त्रास।।
लेति नाक की भौंरी नागरि, गावत पियहि जिवास।
रीझि सुघर वर कंठ लगाई, पाँइ गहे मुख वास।।
इहि विधि भामिनि भावहि भजि, अवतार-कदंब उदास।
आनंद सिंधु मगन है व्यास, विसरि प्रपंच विलास।।२४३।।

विहागरो —

दोउ मिलि देखत सरद-उज्यारी।
विछी चाँदनी मध्य पुलिन के, तास[4] जरी फुलकारी।।
सेत वादलौ, सेतकिनारी, ऐसी है यह सारी।
हीरन के आभूषन राजत, जो वृषभानदुलारी।।

---

१. किरणें २. देवता ३. जल ४. कारीगरी किया हुआ एक प्रकार का कपड़ा

मोतिनकी मालावलि उरमहँ, पहिरैं कुंज-विहारी।
रतन जटित सिरपेच, कलंगी, मोर चंद्रिका न्यारी।।
सखियाँ संग एकसी सुंदर, मानों चंद्र-कलारी।
बाजे बहु वाजैं अरु गावहिं सखियाँ, निर्त्तत वारी वारी।।
यह सुख देखत नंदलाडिलौ, अरु कीरतिकी प्यारी।
इनकी प्रीति रीति भक्तनिसौं, व्यासदासि वलिहारी।।२४४।।

सारंग

नाँचति नागरि नटवर वेषधरि सुखसागरहि बढावति।
सरद सुखद निसि ससि गो[1] रंजित वृंदावन छबि रुचि उपजावति।।
ताल लये गोपाललाल सँग ललिता ललित मृदंग बजावति।
हरिवंशी हरिदासी गावति, सुघर प्रवीन रबाब बजावति।।
मिश्रित धुनि सुनि खग मृग मोहित, जमुना जल न बहावति।
हरषित रोम तन, सोम[2] थकित धर, व्योम विमान गिरावति।।
लेत तिरप विगलित मालावलि कुसुमावलि वरषावति।
जय जय साधु करत हरि सहचरि व्यास चिराक[3] दिखावति।।२४५।।

केदारौ तथा कल्याण

रसिक, सुंदरि बनी रास रंगे।
शरद ससि जामिनि, पुलिन अभिरामिनी, पवन सुख भवन वन विहंगे।।
नीलपट भूषननि नटवर सुवेष धरि मदन मुद्रा वदन कुच उतंगे।
चरन नूपुर रुनित कटि किंकिनी क्वनित कर कंकन चुरी रव भंगे।।
चरन धरनी धरति, लेत गति सुलप अति, तत्त थेइ-थेई नदति मनि मृदंगे।
चर्चरी तालमें तिरप बाँधति बनी, तरकि टूटी तनी, बर सुधंगे।।
सप्तसुर गान, पट तान बंधान में, मान औघर सुघर अंग अंगे।
सरस मृदुहाँसिनी नैंन सैंननि लसति निरख त्रिभुवन वधू मान भंगे।।
विविधि गुन माधुरि-सिंधु में मगन दोऊ लसति, गोरी वसति पिय उछंगे।
थकित चंदन पवन चंद मंदार कुल सोम वरषत व्यासदास संगे।।२४६।।

---

१. किरण २. चन्द्रमा ३. चिराग

भैरव

स्यामा सँग स्याम नचत, रासरंग गुन न वचत,
सखि अखंड मंडल हँसि सरद जामिनी।
तरनि तनया तीर कछू मृदुल अछत्त सित रज पुनीत,
त्रिविध पवन ताप दवन काम कामिनी।।
चरन चलित, बाहु वलित, ललित गान कलित तान,
मान सुर वँधान तिरप लेत भामिनी।
वर सुधंग रंग ताल मनि मृदँग चंद चाल,
लाल सुघर औघर[1] गजराज गामिनी।
रिझै पतिहि गति दिखाइ,लेत कुँवर कंठ लाइ,
स्याम घटा मांझ मनहुँ दुरति दामिनी।।
नैंन सैंन भ्रूविलास मंदहास, सुख निवास,
सुनि धुनि मुनि बोलत जय व्यासस्वामिनी।।२४७।।

सारंग व गूजरी (चंचरी)

नाँचति वृषभानकुँवरि हंससुता पुलिन मध्य,
हंस हंसिनी मयूर मंडली बनी।
गावत गोपाल लाल, मिलवत झपतार ताल,
लाजत अति मत्त मदन कामिनी अनी।।
पदिक लाल कंठ माल तरल तिलक झलक भाल,
श्रवनफूल वर दुकुल नासि कामनी।
नील कंचुकी सुदेस, चंपकली[2] कलित केस,
मुखरित मनि दाम, वांम कटि सुकाछिनी।।
मरकतमनि वलय राव मुखर नूपुरनि सुभाव,
जावक युत चरनिं नखचंद्रिका घनी।
मंदहास भ्रूविलास, रास लास सुखनिवास,
अलग लाग लेति सुघर राधिका बनी।।

---

१. अद्भुत २. एक विशेष प्रकार का केश विन्यास

काम अंध कितव बंध[1], रीझि रहै चरन गहै,
साधु साधु कहत रहत राधिका धनी।
भेंटति गहि बाँहु मूल, उरज परसि भई फूल,
व्यास वचन सानुकूल रसिक जीवनी।।२४८।।

सारंग

नाँचति गोरी, गोपाल गावै।
कोमल पुलिन कमलमंडल महँ रास रच्यौ,
स्यामा स्यामल सखि मोहन वैंनु बजावै।
सरदचाँदिनी मंद पवन बहै, दुहूँदिसि,
फूल जाति परिमल मन भावै।
कनककिंकिनी-धुनि सुनि खग मृग,
आकर्षत, वन मधु वरषावै।।
लटकति लट भुज मुकुट विराजति,
पटकति चरन धरनि सौं कुंकुमहिं उड़ावै।
उरप तिरप गति मान वढायौ,
हस्तक मस्तक भेद जनावै।।
रूप रासि गुनगनकी सीवां,
भृकुटि विलास हाँस कै प्यारेहि रिझावै।।
विच विच कच कुच परसत हँसिकरि,
परिरंभन चुंवन दै रस-सिंधु वढ़ावै।
नवरँग कुंजविहारी प्यारी खेलति देखि,
जाउँ वलिहारी यह सुख व्यास भागनि पावै।।२४९।।

कान्हरौ

नाँचत नँदनंदन वृषभान-नंदिनी समीप-देखि,
चंद भूलि रह्यौ, कलप जामिनी[2]।

---

१. छलिया २. कल्प के समान रात्री हो गई

नख प्रति प्रतिरूप ठानि, भूषन उड़-वृंद जानि,
आनि चरन भजत, तजत गगन धामिनी[१]।।
नील पीत वर दुकूल, गौरस्याम अंग फूल,
अंग मिले हरषि वरष मेघ दामिनी।
वर सुधंग रंग रचे, दंपति गति रीझि लचे,
विगतगर्व अर्व खर्व काम कामिनी।।
पंचमस्वर गान, मधुर तान सुर बँधान,
मान लेति तिरप राधिका गजराज गामिनी।
वारि-फेरि देत हार हरि उदार कहत रहत,
हो हो हो साधु साधु व्यासस्वामिनी।।२५०।।

जयतिश्री, अल्हैया, विलावल (मूलताल)
मोहन मोहिनीकौ दूलहु।
मोहन की दुलहिनि मोहिनी सखी निरखि निरखि किनि फूलहु।।
सहज व्याह उछाह, सहज मंडप, सहज जमुनाके कूलहु।
सहज सवासिनि गावति नाँचति, सहज सगे समतूलहू।।
सहज कलस कंचन कल भाँवरि, सहज परस भुज मूलहु।
सहज वने सिर-मोर सहज भूषित तन, सहजई नवल दुकूलहु।।
सहज दाइजौ वृंदावन धन, सहज सेज रति झूलहु।
सहज सनेह रूप गुन व्यासहि स्वपनैं हू जिनि भूलहु।।२५१।।

गौरी
सहज दुलहिनी श्रीराधा सहज साँवरौ दूलहु।
सहज व्याहु वृंदावन निरखि निरखि किनि फूलहु।।
सहज कुंज सुखपुंज महल मंडप छाये।
सहज सवासिनि दासिनि हरषि मंगल गाये।।
गाइ मंगल कलस पूज्यौ पाँइ परि विनती करी।
वलिजाऊँ सुखद मुखारविंदहिं देखत तन वेदन हरी।।

---
१. अन्तरिक्ष में रहने वाली

विधि रवानी जगत जानी जमुना-कुल-देवी पूजी।
कंचन मनिमय वनभूमि विराजै और गति नाहीं दूजी।।
विटप बेलि बुलाइ न्यौंते विविध वरन वनैं घनैं।
फल फूल न्यौंते देत लाजे वरषिमधु तन मन सनैं।।
तहाँ बाँधि कंकन सरद विहँसी हरद केसरि छबि लगी।
रति लिखत मृगमद वदन मरुवटि देखि हँसि आपुन ड्गी।।
बाजे बाजत वैनु धुनि सुनि देव मुनि मोहै जू।
ताल पखावज रुंज झाँझ डफ झिरनाँ[1] रव सोहै जू।।
मन सरस अन्हवाइ दोऊ अंग पट भूषन सजे।
निरखि वेष निमेष विसरे कोटि-मनसिज मन लजे।।
मोर मुकुट शिर गुंजा मनि झलक अलक घुँघरारे जू।
श्रवननि कुंडल चमकत सोभित गंड सुढ़ारे जू।।
दसन दार्‌यौं वदन विहसत अधर पल्लव छबि लगी।
सुवा सारी नाँकवेसरि लाल मोती मनि जगी।।
नैंननि अंजनरेख अन्यारी भौंहैं अति चंचला।
पीत पिछौरी, सारी, चोली पर चौकी चल अंचला।।
बाँधि अंचल गाँठि चंचल रास वेदी पर वनैं।
सात-भाँवरिदेत सब निसि अंग-रंगनि मिलि सनैं।।
अधर सुधा जैउँनार करत न अघानैं प्रीतम दोऊ।
दरस परस मुख सुख दूधा भाती करत न लखत कोऊ।।
मोर प्रोहित बोलि जित तित भँवर-भाटन जसु कह्यौ।
कुल-वधू कोकिल गारि दै मनुहार करतनि रस रह्यौ।।
रूप निधाना पलटत मुख पाना, चतुर सुजानी जू।
घर वात लूटाइ मिली वृषभान नंदकी रानी जू।।
करहि कंकन, कटि सु किंकिनि, चरन नूपुर बाजहीं।
मोहनी जोबन चाल देखत हंस, गज-कुल लाजहीं।।

---

१. वाद्य विशेष, झल्लरी

जुग जुग दंपति रति रस वरषत अति हरषत ब्रजवासी जू।
गावत गोपी मिलि नाँचत हरिवंशी हरिदासी जू।।
यह व्याहु वरनत सुनत अति सचु भगति संपति पाइये।
व्यास वृंदाविपिनि वसिकैं बहुरि अंनत न जाइये।।२५२।।

केदारौ, चौतारौ, सारंग

आज अति वाढ्यौ है सखि रंग।
सुघर लेति औघर गति सुलप, सुरेख दिखावति अंग।।
स्यामा स्याम रास बनि, नाँचत, बाजत ताल मृदंग।
गावति सुर बधान तान महँ , नागरि लेत सुधंग।।
हस्तक मस्तक भेद दिखावत, नचावतभृकुटि अनंग।
व्यासदासकौं हित करि दीनौ, चारि चरन रज संग।।२५३।।

सारंग

मोर सिंगारे नाँचति गावति किशोर संग।
आगैं पाछैं कछिनी टिपारे सिर लटकति,
नील पिछौरीन छबि उन्नत नमित वदन सोहै अंग।।
मौहन कौ वेंनु सुनियत है अनुराग वढ्यौ,
नैंन श्रवन तन नीर अधीर दुहु राखत रंग।
व्यासकी स्वामिनि आगैं औसर सब बन्यौं,
पाछैं दामिनी चिराक घन घोर मृदंग।।२५४।।

अडानौ

वंसीवट के निकट हरि रास रच्यौ मोर, मुकुट और ओढ़ैं पीत पट।
वृंदावन नव कुंज सघन घन सुभग पुलिन अरु जमुना के तट।।
आलस भरे उनीदे दोऊ जन, श्रीराधा प्यारी और नागर नट।
व्यास रसिक बलि रीझि रीझि कैं लेत वलैया कर अँगुरिन चट।।२५५।।

धनाश्री

राजत दुलहिनि दूलह संग।
रास रच्यौ राधा मोहन मिलि, गुन-सागर झिलि रंग।।
कमल मंडली पुलिन खंडमें, चंद किरनि अनुषंग[1]।
गावत कोकिल-कल-सुर, बाजत भूषन, ताल मृदंग।।
बीच बीच मुरली मन चुरली, बाजत सुख मुखचंग।
सुघर सुकेकी देसी दिखावत, लालहि फवत सुधंग।।
चंचल चरननि, अंचल अति गति, उपजावति भ्रू-भंग।
स्वेद विंदु गोविंद कलानिधि पौंछत उरज उतंग।।
हस्तक मस्तक भेद दिखावत गावत गिरत अनंग।
गौर छटा छबि में दबि निकसत साँवलके सब अंग।।
विहँसत दुरि दामिनि धुनि सुनि सुनि मोहे वारि विहंग।
सैंननि निरखत फूले व्यासदासिके नैंन कुरंग।।२५६।।

केदारौ

दुलहिन दूलहु खेलत रास।
धीरसमीर तीर जमुनाके, जल थल कुसुम विकास।।
द्वादशकोस मंडली जोरी, फिरत दोउ अनयास।
बाजत ताल मृदंग संग मिलि, अंग सुधंग विलास।।
थके विमान गगन धुनि सुनि सुनि ताननि कियौ विसास।
या रसकौं गोपिनि घर छाँड्यौ, सह्यौ जगत उपहास।।
मोहन मुरली नैंक बजाइ, श्रीपति लियौ उसास।
नूपुरध्वनि उपजाइ विमोह्यौ, शंकर भयौ उदास।।
कंकन किंकिनि धुनि सुनि नारद कीनौं कहूँ न वास।
यह लीला मन-मँह आवतही, शुकदेव विसर्‍यौ व्यास।।२५७।।

---

१. युक्त

धनाश्री

राजत दुलहिनि दूलह संग।
रास रच्यौ राधा मोहन मिलि, गुन-सागर झिलि रंग।।
कमल मंडली पुलिन खंडमें, चंद किरनि अनुषंग[1]।
गावत कोकिल-कल-सुर, बाजत भूषन, ताल मृदंग।।
बीच बीच मुरली मन चुरली, बाजत सुख मुखचंग।
सुघर सुकेकी देसी दिखावत, लालहि फवत सुधंग।।
चंचल चरननि, अंचल अति गति, उपजावति भ्रू-भंग।
स्वेद विंदु गोविंद कलानिधि पौंछत उरज उतंग।।
हस्तक मस्तक भेद दिखावत गावत गिरत अनंग।
गौर छटा छबि में दबि निकसत साँवलके सब अंग।।
विहँसत दुरि दामिनि धुनि सुनि सुनि मोहे वारि विहंग।
सैंननि निरखत फूले व्यासदासिके नैंन कुरंग।।२५६।।

केदारौ

दुलहिन दूलहु खेलत रास।
धीरसमीर तीर जमुनाके, जल थल कुसुम विकास।।
द्वादशकोस मंडली जोरी, फिरत दोउ अनयास।
बाजत ताल मृदंग संग मिलि, अंग सुधंग विलास।।
थके विमान गगन धुनि सुनि सुनि ताननि कियौ विसास।
या रसकौं गोपिनि घर छाँड्यौ, सह्यौ जगत उपहास।।
मोहन मुरली नैंक बजाइ, श्रीपति लियौ उसास।
नूपुरध्वनि उपजाइ विमोह्यौ, शंकर भयौ उदास।।
कंकन किंकिनि धुनि सुनि नारद कीनौं कहूँ न वास।
यह लीला मन-मँह आवतही, शुकदेव विसर्‍यौ व्यास।।२५७।।

---

१. युक्त

खग, मृग, गो, गिरि सलिता विथिकित, मोहे निशि शशि पवन अनंग।
राधा-रवन प्रताप दीप महँ, व्यास मुदित सुख परत पतंग।।२६०।।

प्यारी नाँचत रंग रह्यौ।
पियके वैंनु बजावत गावत, सुख नहिं परत कह्यौ।।
कोमल पुलिन नलिन मंडल महँ, त्रिविधि समीर वह्यौ।
विथकित चंद मंद भयौ पथु चलवे कहँ रथ न रह्यौ।।
कंकन, किंकिनि, नूपुर सुनि, मुनिकन्यनिकौ मन उमह्यौ।
उलट बह्यौ जमुना कौ जल सबही के नैंननि नीर वह्यौ।।
अंग सुधंगनि देखत गर्व पर्वततैं मदन ढह्यौ।
तिरप उरप, सुलपनिकी गतिकौ पति नहिं मरम लह्यौ।।
निरषत स्यामहि काम बढ्यौ, रस भंग न परतु सह्यौ।
व्यासस्वामिनी नैंन सैंन दै नागर विहँसि गह्यौ।।२६१।।

गौड मलार —
वंसीवट जमुनातट नाँचत दोऊ वर सुधंग।
लाघवजुत शब्द कहत मृदु तत् तत् थेई थेई थुँग थुँग तान तरंग।।
जानत संगीत साँचु सरस विरस विरम लेत नैंनलोल लोचन भृकुटि भंग।
चिंद चाल,ताल,सुघर अवघर गति निरखि थकित कोटि अनंग।।
वलित अलित चक्र[1] सम षटचक्र-भेद गगन में अति तिरप प्रवीन अंग-अंग।
रास रसिकनी व्यासस्वामिनी रस राख्यौ, रसिक कुँवर रीझि रहे,
चरन गहे, लै उछंग।।२६२।।

नाँचत नटवा मोर सुधंग अंग तैसे बाजत मेह मृदंग।
कटि चंद्रौंक[2] काछनी चमकति सिरहिं सिखंडि[3] टिपारे चुंग[4]।।
तैसेई कोकिल कुल गाइन गावत, सुरत दिखावत मधुप उतंग।
तैसेई मोहन राग मलारिनि बाजत अभिनय निपुन राधिका कुच तुंग।।

१. जलती लकड़ी को तेजी से घुमाने से बनने वाला घेरा २. मोर पंख ३. मोर ४. कलँगी

साखि जवादि कुमकुमा वरषत, ललितादिकनि उमंग।
कुञ्ज-महल तहँ पवनके हल[१] नहिं व्यास चिराक दिखावत संग।।२६३।।

विहागरो —

देखि सरद कौ चंदा नँदनंदा वन रास रच्यौरी।
विच गोपी विच स्याम छबीलौ, राधा संगहि नच्यौरी।।
मनहुँ नीलमनि कंचनमाला मंडल खंड खच्यौरी।
अंग सुधंग दिखावत गावत सुनि धुनि मदन लच्यौरी।।
भृकुटि विलास हास-रस-वरषत, जमुनापुलिन मच्यौरी।
शीतल मंद सुगंध त्रिविधि, ता सौरभ सरस सच्यौरी।।
नित्य विहार निहार मुकतिपति, तू बेकाज पच्यौरी।
मोद विनोद रास निज दासि व्यास सुखपुंज सच्यौरी।।२६४।।

श्रीराग —

मधुर मधुर धुनि आजु बेनु बजावत।
मुदित उदित तान बंधान रागनि के रसिक कुँवर श्रीराग अलापत।।
देत सुरन मधुकर मोर नाँचत बिथकित चंद मुदित धन गाजत।
उलटि बहति सलिता, सर-उमगत, पुलकित वृंदाविपिन विराजत।।
कुंडल कपोल लोल सोमित अति निचोल, मंदहँसनि देखि रति पति लाजत।
मत्त निरंकुस व्रजराज जोई जोई करत सोई सोइ छाजत।।
वरषत कुसुम मुदित नभ नाइक, जय-जय धुनि सुनि सब ब्रज भ्राजत।
सरद जामिनी रँग, व्यास की स्वामिनि सँग, नटवर अंग सुधंगहि साजत।।२६५।।

सारंग

नाँचत गोपाल बनै गोपिन संग गावैं।
मोहत मन, सोहत वन नैंन सिरावैं।।
पंचमस्वर गान, तान, मान मिलि बढ़ावैं।
उरप, तिरप, सुंलप, सुघर प्यारेहि रिझावैं।।

---

१. वायु के झोंके

चरन-रेनु उर लगाइ रीझि वेनु बजावैं।
मन्दहाँस निरखि, काम स्यामहिं सिर नावैं।।
नागर गुनसागर कौ पार कौंन पावैं।
कहत कोटि व्यास थके देखत बनि आवैं।।२६६।।

केदारो

नाँचत गोपाल वनैं नटवर वपु काछैं।
गावति गति मिलवत अति, राधा के पाछैं।।
किंकिनि कंकन नूपुर धुनि, ताल मृदंग सोहैं।
मन्दहाँस भ्रु-विलास सैंननि मन-मोहैं।।
तरुवर गिरिवर मृग नाद वान पोहैं[1]।
वृंदारक-वृंद-वधू तारक विधु मोहैं।।
समीर नीर पंगु भयौ, बालक न पय प्यावैं।
व्यास सकल-जीव-जंतु नाद स्वाद ज्यावैं।।२६७।।

सारंग

नदित मृदंग राइ, नटत गोपाल राइ,
गावति तरुनिमनि-राधिका बनी।
नागरि नव रूप-गुन-आगरि अलापति तान वितान तनी।।
पंचमकी धुनि सुनि सुक मुनिव्रत धर्‌यौ, थकित मदन अनी।
वछरा न छीरु पियैं नाद के आनंद जीयैं,
उलटी सलिता वहै मोहित फनी[2]।।
द्रुमकुल कुसुमनि-वरषत गुलम लता खग जय जय,
व्यासि स्वामिनी, रसिककुँवर सिरमुकुट मनी।।२६८।।

नाँचत गोपाल बनै राधा संग गावैं।
वृंदावन रास रच्यौ लाल वेंनु बजावैं।।

---

१. भिद गये २. शेषनाग

गौर स्याम बाँहु जोरि मंडली बनावैं।
मनहुँ हेम मरकत मनि-मालहि नचावैं।।
भूषन पट तन छबि, घन-चपलाहि लजावैं।
मोरमुकुट कोटि कोटि मदन मद नसावैं।।
कंकन, किंकिनि, नूपुर ध्वनि, मुनिहि मोह वढावैं।
राग, तान, मान, सुर विमान, वन बुलावैं।।
उरप, तिरप, सुलप, सुघर, औघर गति भावैं।
अंग अंग वर सुधंग, रंग कहि न आवैं।।
चंदवदन मंद विहँसि नैननि मटकावैं।
कबहुँ नाहु प्यारी गहि बाँहु उर लगावैं।।
जय जय धुनि सुनि सुरेस सुमननि वरषावैं।
व्यासदास रंगरास चरन रेनु पावैं।।२६९।।

कमोद

मोहनी मोहनकी प्यारी।
सुरत-सेज, लै चली अली संग, कोटिचंद चाँदनी उज्यारी।।
नारीकुंजरकौ लहँगा सोहै अँगिया कारी, झूमक सारी।
कंकन, किंकिनि, नूपुर बाजत, लाजत कोटि-काम, वलिहारी।।
अंग अंग शोभित नाना-भूषन, सहज रूप, गुन, गान सिंगारी।
दृष्टि कमलदल पंथु रच्यौ पिय, हिलगनि उरज भौंह अनियारी।।
व्यासस्वामिनी के संग विहरत, विरह-चमूँ[1] अनियास विडारी।।२७०।।

रजनीमुख सुखरासि चली।
पिय सुरति-सेज ससि स्याम वाम अंग रंगी अली।।
वदन चंद कर रंजित विविधि सुगंध सुवासित कुञ्ज गली।
कुमकुम रज कर्पूर धूरि पर चरननि परसत चंपकली।।
सेज रचत उझकत द्वारै हँसि भेटत, मोहन करमबली।

१. सेना

लाल तमालहि अरुझी ललना कनकलता, कुच फलनि फली।।
रंग रह्यौ क्यौं कह्यौ परै देखति दुरि सुखहि व्यास वृषली[1]।।२७१।।

केदारौ व विभास

चाँपत चरन मोहनलाल।
परजंक पौढ़ी कुँवरि राधा नागरी नव-बाल।।
लेत कर धरि परसि नैंननि, हरषि लावत भाल।
लाइ राखत हृदैसौं तब गनत भाग विसाल।।
देखि पियकी अधीनता भई कृपासिंधु दयाल।
व्यासस्वामिनी लिये भुज भरि, अति प्रवीन कृपाल।।२७२।।

कल्याण

ललनकी बतियाँ चोज सनी।
परम कृपाल चितै करुनामय, लोचन कोर अनी।।
उमगि ढरे दोऊ सुरत सेज पै, टूटी तरकि तनी।
परमउदार व्यासकी स्वामिनि, वकसति मौज घनी।।२७३।।

सारंग

विहरत नवल रसिक राधा संग।
रचित कुसुम-सयनीय, भामिनी कमल विमल, हरि भृंग।।
नवनिकुंज रति पुंजनि वरषत, सुख सूचत, नखसिख अंग अंग।
अधर पान परिरंभन चुंवन विलसत कर जुग उरज उतंग।।
नीवि निवंधन मोचत, सोचत नाहिंन, नेति वचन सुनि अधिक उमंग।
नयन सयन परिहाँस वचन कहि, हसत लसत पुलकित भ्रुव-भंग।।
कबहुँक प्यारी मुरलि बजावति, मोहन अधर धरत मुखचंग।
बीचि बीचि पंचमस्वर गावत, सुनि धुनि बिथकित व्यास कुरंग।।२७४।।

कल्याण (चर्चरी ताल)

वाम कुंजधाम स्यामसुंदरी ललाम[2]
ललन विहरत अभिराम काम भाम भामिनी।

---

१. सखी २. सुन्दर

आनँदकंद मंद पवन, सरदचंद ताप दवन,
जमुनाजल कमल विमल जाम जामिनी।।
सुरँग कुच उतंग अंग माधुरी-तरंग रंग,
सुरत रंग, मान-भंग काम कामिनी।
मन्दहाँस भ्रू-विलास मधुर वैंन नैंन सैंन,
विवस करत पियहि व्यासदास स्वामिनी।।२७५।।

सारंग

राधेजू अरु नवल श्यामघन विहरत वन उपवन वृंदावन।
ललित लता प्रति ललित माधुरी, कुंज पुंज फूले तिनके तन।।
भँवर गुँज कोकिलाऊ न बोलत, मुनि पंछी बैठे समूह गन।
नैंन चकोर भये देखत हैं, प्रेम मगन भीजे तिनके मन।।
मिथुन हाँस परिहाँस परायन कोक कलानि निपुन राधा धन।
रिझयौ नवलकुँवर वर प्यारौ, लै उछंग पुलकित आनँद घन।।
हरिवंशी हरिदासी बोली[1], नहि सहचरि समाज कोऊ जन।
व्यासदासि आगैंही ठाढी, सुख निरखत बीते तीनौं पन।।२७६।।

कान्हरौ

मंजुलतर कुंज-अयन, कुसुम-पुंज रचित सयन,
विहरत नंदनंदन वृषभान नंदिनी।
आनँदकंद सरदचंद, मंदपवन तापदवन,
सीतलजल तरल पूर सूरनंदिनी।।
अंग अंग सुरत रंग नयन सयन भृकुटि भंग,
कोटि चंद मंद करति सुभग हाँस चंदिनी।
परिरंभन, चुंवन रस उरज करज विविधि परस,
सरस जघन दरस, सुख-समूह कंदिनी।।

---

१. बुलाया

अधर सुधा पान, मत्त मुदित गान, उदित तान,
लटकति लट बाहुँ जुगल कंठ फंदिनी।
गौर स्याम सिंधु नदि संगम जल पावन अति,
रसिक भगत मीन, जीवन व्यासवंदिनी।।२७७।।

विलावल विहागरौ

विहरत गौर स्याम सरीर।
कुसुम कुल सयनीय रची, कमनीय भूषन चीर।।
सीत सीकर निकर मंजुल-कंज कुंज-कुटीर।
नदति भृंग, कुरंग, केकी, कोक, कोकिल, कीर।।
विकच वकुल कुल गुलाब चंपक केतकी करवीर[1]।
तरनिजा जल वीचि कल पटवास[2] वहत समीर।।
चंद्रकिरनि तुषार[3] मंडित विटप दल वा नीर।
हरित गिरि भू-पंथ पंकित श्रवत गोधन छीर।।
अमित नव कर्पूर कुंकुम मृगज मलय उसीर[4]।
विमल वृंदाविपिनि बाढ़ी सुभग नदी गंभीर।।
अंग अंग अनंग सायक[5] सहत नहिं तन पीर।
व्यास त्रास न करति स्यामा स्याम रति रन धीर।।२७८।।

छबीले अंगनि रंग रचे।
बिहरत रसिक निकुंज-भवन महँ, रति सुख पुंज सचे।।
कितव किसोर चोर लौं सर्वसु, लूटत राति पचे।
अति आवेस मदन वैरी पह मारत भले बचे।।
खंडित खंड कपोलनि उमग विदारत कुच न लचे।
जनु रनमें जूझत द्वै जोधा, तामस तमकि तचे[6]।।
आसन करत देत मुखवास, सैंन रस औंन मचे।
मानहुँ रँगमहलमें नटवा, सरस सुधंग नचे।।

---

१. कनेर २. वस्त्रों को सुवासित करने के लिये उनमे रखा गया सुगन्धित चूर्ण ३. चन्द्र किरणों में मिले सूक्ष्म जल—कण ४. खस ५ वाण ६. तपना (सुरत शौर्य से आवेशित हुये)

निरखि विनोद व्यासदासिनिके नैंनकमल विकचे।
पुतरिनि महँ प्रतिबिंबित जनु, मर्कत मनि कनक खचे।।२७९।।

सारंग

क्रीडति कुंज-कुटीर किसोर।
कुसुम पुंज रचि सेज हेज[1] मिलि, बिछुरि न जानत भोर।।
स्याम काम वस तोरि कंचुकी, करजनि गहि कुच-कोर।
स्यामा मुंच मुंच कहि खंडित गंड अधरकी वोर।।
नागर नीवि निबंधनमोचत चरन गहि करत निहोर।
नागरि नेति नेति कहि, कर सों कर पेलति, गहि डोर।।
मत्तमिथुन मैथुन दोऊ प्रगटत, वरवट[2] जोवन जोर।
व्यासस्वामिनीकी छबि निरखि भये सखि लोचन चोर।।२८०।।

वृंदावन कुंज कुंज केलि बेलि फूली।
कुंद कुसुम चंद नलिन विद्रुम छबि मूली।।
मधुकर, शुक, पिक, मराल, मृगज सानुकूली।
अद्‌भुत घन मंडल पर दामिनिसी झूली।।
व्यासदासि रंगरासि देखि देह भूली।।२८१।।

देवगन्धार

विराजत वृंदाविपिनि विहारु।
यह सुख बैंननि कहि न परै, सखि नैननि कौ आहारु।।
गौर स्याम सोभा सागर कौ नाहिन पारावारु।
वलि-वलि कहत, सहत पिय हियपर, पीन पयोधर भारु।।
सनमुख सैंन सरन सहि सुंदर कीन्हे मार सुमारु[3]।
सुधासिंधु मुखमें वरषावति, वरविधु अरुन उदारु।।
भुजनि भेंटि दुख मेटि विरहकौ, विहसत पुस्यौ विडारु।
खर-नख कुंदकली दसननि पहँ, छलवल नहीं उबारु।।

१. प्रीति २. बरबस ३. पराजित

कुच गहि चुंवन करत हरत मनु कछू न राखति सारु।
पट भूषन अंगनि के अंग सुरत रस रंग सिंगारु।।
व्यासस्वामिनी कुँवर कंठ पर मानहुँ चंपक हारु।।२८२।।

सारंग

अति सुख सुनत छबीली बतियाँ।
क्रीड़त कुँवर काम-कुंजनि पर, रति रस पुंज, सरद ससि रतियाँ।।
कंचुकि, नीवि निबंध झटकि पट, नागरनट कर घतियाँ।
गौरस्याम कर कलह करतहूँ, विलसत अपनी थतियाँ।।
छल-बल चुंवन करि परिरंभन, सैंन चलति अनभतियाँ[१]।
हँसत लसत भौंहनि मटकावत, उपजत गुनगन गतियाँ।।
उरतें उरज न टरति हरत दुख, मुख लटकत लट पतियाँ।
देखत व्यासि दासि वड़भागिनि, नैंन सिरावति छतियाँ।।२८३।।

पिय मधुपहि मधु प्यावति ज्यावति राधा कमल-कली।
अधर-माधुरी छिन न तजत, सेवत कुच कुंज-गली।।
मनौं हिमऋतु हित न तज्यौ, चितु दै नहिं विचली।
संतत सरद, वसंत कंत कह रति सुख फलनि फली।।
सहज प्रीति रस रीति सरोवर सोभा अंग भली।
व्यासस्वामिनी के रस बस भये मोहन कर्म बली[२]।।२८४।।

विलावल

स्याम सुन्दरी कहाँ अति कोमल सरल किसोर।
सुनि सुकुँवारि कहाँ अति कठिन कुटिल नखसिख अँग तोर।।
कहाँ कपोल गोल मृदुमंजुल कहां नख खर-कोर।
कहाँ बिंबाधर जलधर सम, कहां दसन अन्यारे ओर।।
कहाँ कुँवरकौ साधु हृदय, कहाँ तव कुच पीन कठोर।
कहाँ अनुराग, सनेह कहाँ दृढ़ बाँहनि बंधन जोर।।

---

१. अपूर्व २. बड़भागी

कहाँ दीन आधीन कहाँ तुव बंक नैंन चित चोर।
व्यासस्वामिनी रसिक प्रीतमके नाते कह्यौ सुथोर।।२८५।।

सारंग व विहागरो

वृंदावन सुख-पुंजनि वरषत कुंजनि कुंज विहार।
तहाँ सेज पै विहरत दोऊ, जीवन प्रान अधार।।
अंगराग, भूषन, पट भूषित, नख सिख सजि सिंगार।
अति आतुर चातुरता विसरी, लूटत मदन विकार।।
सोई सोई करत न डरत हठीले, जोई जोई परत विचार।
मानहुँ कनक-कामिनी कौतुक, जूझत सुभट जुझार।।
किंकिनि नूपुर धुनि सुनि प्रमुदित, उपजत कोटिक मार।
मानहुँ निडर नट पद पटकत तोरत अति गति तार[1]।।
बिंबाधर जलधर झरलायौ, बढ़े सुरतके सार[2]।
व्यासस्वामिनी कुच तुंवनि पर, हरें हरें[3] कीने पार।।२८६।।

मलार

मानौं माई कुंजनि पावस आयौ।
स्याम घटा देखत उनमद हो, मोरन सोरु मचायौ।।
दामिनि दमकति चमकति कामिनि प्रीतम उर लपटायौ।
निसि अँधियारी दिसि नहिं सूझति, काजु भयौ मन भायौ।।
डोलत वग बोलत घन धुनि सुनि चातक बदन उठायौ।
वरषत धुरवा शीतल बूँदनि तन मन ताप बुझायौ।।
कुसुमित-धरनि तरनितनया-तट चंदवदन सुखपायौ।
व्यास आस सबही की पूजी सरिता सिंधु बढायौ।।२८७।।

सुरंग चूँनरी भीजत लाल उढ़ाउ पीतपट।
झला झकझोरत आवत दुहुँदिसि, निशि अँधियारी,
दामिनि कौंधति, वेगि चलहु प्रीतम वंशीवट।।

---

१. ताल २. जल, जलाशय ३. धीरे-धीरे

वीथिनि वीच कीच मचि है, तब मोहि लयौ चाहौगे,
कनियाँ[1], कण्टक विकट घने जमुना तट।
लई उछंग व्यास की स्वामिनि रसिक मुकुटमनि,
धनि धनि मोहन बार बार कर परसत कुच घट।।२८८।।

जब जब कौंधति दामिनी, तब तब भामिनी डराति प्रीतम उरलागति।
उनमद मेघ घटा धुनि सुनि निसि पियहि जगावति आपुन जागति।।
दादुर मोर पपीहा बोलत मदमाती कोकिल वन रागति।
कुंज-कुटीर व्यासके प्रभु पै, श्रीराधा रति रस पागति।।२८९।।

हरषति कामिनि वरषत दामिनि मेघनकी माला पहिरैं तन।
विविधि विराजति गिरिवर ऊपर उडत पताका,
पाँति अरु सोभित सुरराज सरासन[2]।।
बोलत चातक चंद्रमण्डल महँ कुंजित कोकिल कल खेलत खंजन।
रेंगति चंद्रवधू[3] धुरवानि विच विच कीच वन घन मह सौरभ समीरन।।
गजरत सिंघ, विथकित गज, हंस विहरत मीन मधुप मिलि तन मन।
सर, सरिता, सागर भरि उमगे, यह सुख पीवत व्यासहि प्यासन।।२९०।।

प्यारी मोपै कही न जाइ तेरे रूपकी निकाई।
लोक-चतुर्दसकी सुंदरता तेरे एक रोम पर अरुझाई।।
तब राग मलारनि बाजति है तब मोरमंडली नाँचति जु सुहाई।
निविड़ि निकुंज अँध्यारी जामिनि होड़ परी भामिनि,
दामिनि सौं व्यासस्वामिनि हँसि कंठ लगाई।।२९१।।

आजु कछु कुंजनिमें वरषासी।
बादल दल में देखि सखीरी, चमकति है चपलासी।।
नान्हीं नाँन्हीं बूँदनि कछू धुरवा से, पवन बहै सुखरासी।
मंद मंद गरजनि सी सुनियतु, नाँचति मोर सभासी।।

---

१. गोद में २. इन्द्र धनुष ३. वीर बहूटी

इन्द्रधनुषमें बग पंकति डोलति, बोलत है कोकिलासी।
चंद्रवधू छबि छाइ रही मानौं गिरि पर अरुनघटासी।।
रटत व्यास चातृक ज्यौं रसना, रसपीवत हूँ प्यासी।।२९२।।

विलावल

स्याम सुंदरी सुवेष, वदन कमल भँवर केस,
वृंदावन पुन्य देस, नव नरेस प्यारे।
कंठ बाँहु मेलि केलि करत, हरत सबकौ मन डरत,
नाँहिन जोवन जोर विलसत न सम्हारे।।
नव निकुंज, सुखनि पुंज वरषत अति हरषत दोऊ,
मंदहसन दूरि करत कोटिचंद उज्यारे।
गावत कल नाँचत बल भृकुटि भंग, लोचन चल,
अंग अंग रंग भरे भाँवते हमारे।।
विचित्र पत्र सेज रची, विविधि माधुरी न बची,
निरखि मदन घरनि लची, तन पट न सम्हारे।
विनोद रासि राधिकाकौ कौतुक सखिवृंद देखि,
व्यासदासि दारुन दुख मेटि प्रान वारे।।२९३।।

कल्याण

रूपवती रसवती गुनवती राधा प्यारी प्रगट करति अति सरस सुधँग।
उरप तिरप गति भेद लेति अति नटवति, मिलवति तान तरंग।।
रिझवति मोहनलालहिं छाती सों लगाइ लेत देति अधर-मधु प्रीति अभंग।
कोकवती रति विपरीति गति वितरति, निरखत व्यासहि सुख अंग अंग।।२९४।।

विहरत दोऊ ललना लाल।
रसिक अनन्य सरन सुख कारन, वैरिनि के उरसाल।।
कुंजमहल महँ हेज सेज पर चंपक वकुल गुलाल।
उड़त कपूर धूरि कुंकुम रँग, अंगराग वनमाल।।

गौर स्याम परिरंभन राजत, पीवत बाहु मृनाल।
मानहुँ कनक-बेलि बेली[1] सौं, उरझी तरुन तमाल।।
कुच गहि चुंवन करत डरत नहि, पीवत अधर रसाल।
नीवी मोचत नेति वचन सुनि, सोचत नहीं सु लाल।।
जंघनि परसि पुलकावलि वेपथ, कलि कूंजति नव बाल।
भृकुटी विलास हँस मृदु बोलत, डोलत नयन विसाल।।
उरजन पर कच सोभित जनु कमलनि पर चुंग मराल।
रति विपरीत राधा निरतति बाजत नीवी जति ताल।।
अंग सुधंग रंग रस वरषत, हरषित सहचरि जाल।
बृंदाविपिन राधिका मोहन, व्यास आस प्रतिपाल।।२९५।।

गौरी

प्रगटत दोऊ सुरत सुधंग।
नव-निकुंज मंदिर मृदु तालिम[2], उपजत कोटिक रंग।।
मनिमय वलय किंकिनी नूपुर, बाजत ताल मृदंग।
उरप तिरप आलिंगन चुंबन, लेत सुलप अँग संग।।
अलग लाग आतुर नागर नट कर जुग उरज उतंग।
रति विपरीति मानमहँ नागरि, दसन अधर अनुषंग[3]।।
लोचन लोल विलोल चरन, कटि मंदहाँस, भ्रू-भंग।
यह छबि कहत व्यास कवि भूलत, शेष अनंत अनंग।।२९६।।

देवगन्धार

आज वन विहरत जुगल किसोर।
सुरत रास नाँचे सब रजनी, विछुरत नाहिन भोर।।
कामिनि कुटिल तमकि तन झूलति, रति विपरीति हिलोर।
कामी करत वयारि श्रमित अति प्यारी वसनांचल छोर।।
विगलित-केस कुसुम कुल वरषत पिय पर, जनु घन-घोर।
अधरामृत माते कोउ काहू गनत न जोवन जोर।।

---

१. सँगी-साथी २. शैया ३. युक्त

हरि उर ऊपर विलसत दोऊ, पीन पयोधर टोर[३]।
मानहुँ गौर स्याम सुखसागर, तरलित तुंग हिलोर।।
मन्दहाँस परिहाँस परायन, भृकुटि कुटिल चित चोर।
विवि मुखचंद सुधा रस पीवत, लोचन चारु चकोर।।
कबहूँ कामिनि कैं, हरि पाँइन लागत लेत निहोर।
झिलत मिलत सुख निरखत व्यासहि, आनँद बढ्यौ न थोर।।२९७।।

आज़ वन विहरत जुगलकिसोर।
सघन कुंज-भवन महँ विहरत, सहज सयान प्रीति नहिं थोर।।
गौर स्याम तन प्रति नील पीत पट, मोरमुकुट सिरखोर।
भूषन मालावलि सहज मृगमद-तिलक भाल भरि बोर[२]।।
प्रथम आलिंगन चुँबन करि, अधरनिकी सुधा निचोर।
मानहुँ सरद-चंद की मधु चातृक तृषित चकोर।।
मंद हँसनि मन मोह्यौ भृकुटी सैंननि चितु-वितु चोर।
करजनि जुगल उरज रस आतुर, कसि कंचुकि बँद तोर।।
कोमल मधुर वचन रचना-रचि, नागर नीबीबंधनि छोर।
सरस जघन परसत सुख उपजत,कुँवरि हँसी मुख मोर।।
कोक सुरत रस वीर धरी दोऊ, कहत रहत हो होर।
सिथिल नैंन पियके देखत, बिपरीति व्यास रस रति गोर[३]।।२९८।।

विलावल —

निरखि सखी विविमुख नैंन सिरात।
रति विपरीति मीत स्यामल पर, सोभित गोरे गात।।
लटमें लट, पटमें पट अरुझे, उरमें नव उरजात।
मुखमें अधर नाहु बाँहनिमें सुदृढ़ बँधे बलिजात।।
चन्दवदन रसकंद किसोर चकोर पिवत न अघात।
व्यासस्वामिनी पिय सँग बिहरत मान सीस दै लात।।२९९।।

१. मर्म भेदी शस्त्र २. शिरो भूषण विशेष ३. विशाल पात्र

बिहरत राधा कुंज लसीरी।
शीत सुगंध मंद मलयानिल सीतल सरद ससी री।।
करुना-रस वरुनालय[1] नखसिख मोहन अंग गसी री।
मानहुँ पावस रितु कौ आगम, घन दामिनि बिगसी[2] री।।
रूप सील गुन सहज माधुरी, रोम रोम बरसीरी।
यह छवि व्यास शेष, चतुरानन, वरनत वैस खसी री।।३००।।

सारंग —

वन बिहरत वृषभान किसोरी।
कुसुम पुंज सयनीय कुंज कमनीय स्याम रँग रस बोरी।।
नीवी निबँधन छोरत मुख मोरत, पिय चिबुक चारु टकटोरी।
ओली-ओडि[3] खोलि चोली दुख मेटि भेटि कुच जोरी।।
सरस जघन दरसन लगि चरन पकरि हरि कुँवरि निहोरी।
मदन सदनकौ वदन विलोकत, नैंननि मूँदति गोरी।।
केसकरषि आवेस अधर-खंडित गंडनि झकझोरी।
रति विपरीति पीत छबि स्यामहि, फबि गई अंगनि रोरी।।
विविधि विहार माधुरी अद्‌भुत, जो कोई कहै सु थोरी।
जाहि प्यास या रसकी तासौं, व्यास प्रीति जिन तोरी।।३०१।।

जयतिश्री

गोरी गोपाललाल विहरत वनवासी।
सघन कुंज तिमिर-पुंज हरत, करत हाँसी।।
अधर पान मत्त नैंन सैंन भ्रुव विलासी।
अकोर उरज दै किसोर बाँधे लट पासी।।
कच धरि हरि चुँबन करि भुजन वीच गाँसी।
कैर अंचल चंचल अति हित चितकी निजुदासी।।
विपरीति रति रंग रचे, अंगनि छवि भासी।
व्यास निरखि मुदित निगम सिन्धु सींव नासी।।३०२।।

---

१. सागर २. उल्लसित होना ३. आँचल पसार कर याचना करना

षट

मानौं माई काम कटकई[1] आवति।
मद गयंद चंचल आगैं दै, अंचल ढ़ाल ढुलावति।।
घूँघट छत्र छाँह विगलित कच मानौं चौंर ढुरावति।
कुच-जुग कठिन सुभट, कवची पट सजि, लट असि चमकावति।।
कोकिलसी धुनि गावति कीर धीर सहनाइ बजावति।
झाँझि भारही, रुंज भँवर, नूपुर निसान बजावति।।
अंग अंग चतुरंग सैंन रव नव नागरहि चुरावति।
व्यासस्वामिनिहि बाँह बोल दै सहचरि हरिहि मिलावति।।३०३।।

मदनदल साजैं प्यारी आवति।
रजनीमुख मोतन मुख कीनैं सघन निसान बजावति।।
कवची पहिर सुभट आगैं करि मदन गयंदै सनमुख लावति।
नैंन वाँधि बानैंत[2] बनैं अति उर काँपतु जब असि चमकावति।।
सनमुख धनुष बान अनियारे अैंचति पनच[3] कानलौं लावति।
मोहि प्रवीन जानिकैं इकलौ निदरति रागमलारनि गावति।।
जोवन मदमाती नहि सकुचति, कोऊ बीचु करहु डरपावति।
कहि व्यौरौ हँसि जोरि वसीठी व्यास सखी दै बाँह मिलावति।।३०४।।

मारु

आजु अति कोपे स्यामा स्याम।
वीर खेत वृन्दावन दोऊ, करत सुरत संग्राम।।
मर्मनि कंचुकि वर्म[4] सुदृढ़ कुच चर्मनि[5], लट करवाल[6]।
अंग अंग चतुरंग सैंन वर भूषन रव दुंदुभि जाल।।
गौर स्याम बानैत बनैं निजु बिरुदावलि प्रतिपाल।
अंचल चंचल ध्वजा पताका, छबि केस चमर विकराल।।
भौंह धनुष तैं छूटत चहुँ दिसि, लोचन बान विसारे[7]।
भेदत हृदय कपाटनि निर्दय, तोवर[8] उरज अन्यारे।।

---

१. सेना २. निश्चयी, सैनिक ३. प्रत्यंचा, धनुष की डोरी ४. कवच ५. ढाल ६. तलवार ७. बिखेरना, विषाक्त ८. भाले की तरह का एक अस्त्र

दसन सक्ति[1] नख सूलनि वरषति, अधर कपोल विदारे।
घूँघट, घूघी[2], मुकुट, टोपा कवची, कंचुक भये न्यारे।।
जीती नागरि, हारे मोहन, भुज संकल में घेरे।
पीन-पयोधर, हार नितंब, प्रहार किये बहुतेरे।।
प्रनय कोप बोली, कैतव, अपराध किये तैं मेरे।
परमउदार व्यासकीस्वामिनि, छाँड़ि दिये करि चेरे।।३०५।।

सुरत रन स्यामा स्याम जुझारु।
वीर खेत वृंदावन विरचे, कुंजराज के द्वार।।
नखसिख अंग सुभट दल साजैं, भूषन पट सिंगार।
सेज सुरति आरूढ़ गूढ़ गति, उपजति कोटि विकार।।
कर उरजन सौं लरत टरत नहिं, लागत नख सर सार[3]।
सन्मुख अधर दसन सहि जूझत, खंडित गंड उदार।।
घूँमि घूँमि सुभट दोऊ जन रोसभरे न टरे सुकुँवार।
अति आवेस केस-विगलित गिरत न लागी वार।।
बाँधि चतुर भुजपासि परस्पर गौर स्याम सुख लार[4]।
व्यासस्वामिनी के रसवस हरि कीने मार सुमार।।३०६।।

विहागरो

सुरत रन वीर दोउ धीर सनमुख लरत।
इतहि नागरि कुँवरि, उतहि नागरु कुँवर,
मल्ल प्रति मल्ल अँग संग तालिम[5] करत।।
अंग प्रति अंग सैंनिक सुभट साजि दल,
वलय नूपुर घोष रोष निसान हत।
दसन तोवर शक्ति शूल लागत हूल[6],
अधर खंडित गंड पीक श्रोनित श्रवत।।

१. एक प्रकार का शस्त्र २. लड़ाई में सिर की रक्षा के लिये पहने जाने वाली टोपी ३. दृढ़
४. साथ ५. शैया ६. हर्षध्वनि, ललकार

कुंजसयनीय रथ रूढ़ सारथि सखी गूढ,
विगलित केस चँवर ध्वज फहरत।
खर नखर वान छूटत, कवच कंचुकी सुदृढ़,
फूलत उरज सूर नहिं डर डरत।।
बाँहु जुग बंधननि बाँधि नंदनंदनहि,
राधिका जयति आचरति विपरीत रत।
रमित संग्राम भरि श्रमित स्यामहि जानि,
व्यास निजु दासि करकमल अंचल चलत।।३०७।।

सारंग

विहरत वृंदाविपिन विहारी।
दूलहु लाल लाड़िली-दुलहिन, कोटि प्रान ते प्यारी।।
वाम गौर स्यामल कल जोरी, सहज स्वरूप सिंगारी।
कुसुम-पुंज कृत सैंन कुंज महँ, चंद वृंद अधिकारी।।
कुँवर कुँवरि गहि चोली खोली, तिरनी[१] तरलित सारी।
नागरनटके पटहि झटकि, हँसि मटकति नवलदुलारी।।
सुरत-समर महँ सन्मुख रहत, दोऊ अनी अन्यारी।
व्यास काम बल जीते रति रन विहसि बजावत तारी।।३०८।।

कल्याण

मेरे तनु चुभि रहे अंग अन्यारे।
टारेहूँ तें टरत न सुंदरि, उरतें पीन पयोधर भारे।।
मेरे नैंन कुरँगनि बेधत, तेरे लोचन बान विसारे[२]।
तेरे दसन प्रचंडनि मेरे अधर, गंड खंड करि डारे।।
अति निसंक तेरे खर नखरनि मेरे गातनि अंग सिंगारे।
नख-सिख कुसुम विसिख सर[३] वरषत, व्यासस्वामिनी तोसौं हारे।।३०९।।

---

१. नीवी २. बिखेरना, विषाक्त ३. कामदेव के पुष्प-बाण

षट व आसावरी

बाँके नैन अन्यारे वान।
चितवनि फंदनि महँ मोहन-मृग अरुझि गिर्‌यौ विनु गान।।
कियौ सहाउ अधर करुनाकरि दियौ सुधाधर पान।
गहि भुजमूल कुचनि बिच राखे, बाहु नाहुके प्रान।।
रति रन मिथुन लरत भट दोऊ, बाजत दाम[1] निसान।
व्यासदासिके नैंन चकोरी पीवत कोकिल गान।।३१०।।

षट

गौर स्याम बानैत[2] नैंन सजि सन्मुख चमूँ[3] चली।
वाम अंग तामस तकि तमके सुनत दामंत बली।।
अपनी जय जस कहँ ममता करि, जूझत जुगल बली।
विरद विवस चमकनि आयुधकी, सोभा लगति भली।।
कुच कपोल कर अधर नैंन भ्रुवकी मति गति बदली।
श्रमित परस्पर अमृत पिवावत ज्यावत मिथुन थली।।
व्यास किसोर भोर नहिं विछुरत, कोक-कला-कुसली।
रसिकनि की रसना रस चाखत, विकल विरस वगली।।३११।।

जोबन बल दोऊ दल साजत राजत खेत खरे।
गौर स्याम सैनिक सनमुख, रजनीमुख कोप भरे।।
दस-नख बाँन प्रहार सहत दोऊ, उरज सुभट न टरे।
भागत नहिं लागत छत अधरनि दसनायुध निदरे।।
नैंन सिलीमुख[4] छूटत अंगनि, फूटत उरनि उरे।
मानहुँ मत्त गयंद-गयंदिनि वन अहंकार परे।।
तनसौं तन मनसौं मन अरुझ्यौ, धीर न प्रभु विचरे।
व्यास हँसत दोऊ कुंज-सैन तें प्रात समै निकरे।।३१२।।

१. किंकणी २. दृढ़ निश्चयी (किसी कार्य के लिये बाना धारण करने वाला) ३. सेना ४. बाण

विलावल

ठाढ़े दोऊ कुंजमहलके द्वारै।
राधामोहन मोहि लागत है तू देखियौ,
नैंकु नैंनभरि सोभित अंग सुढ़ारैं।।
अतिआतुर तोही तन चितवत इकटक,
पलक लगत नहिं लोचन, मीन लगैं ज्यौं गारैं[१]।।
व्यासस्वामिनी चितवत ही चूँवित ललित,
विहसि उरसि पिय लई विहरत राख्यौ रंग अँध्यारैं।।३१३।।

कमोद

उनीदे नैंननि रसु।
सुरत-रंग रँगमगे लोल डोल कछुक आलसु।।
सिथिल पलक अलक झलक झलमलात किरीट पसु[२]।
कमल में अलि अरुझे जनु प्रात करत गवन सहसु।।
गर्व इतरात अति गावति गति रन जय जसु।
स्यामस्वामिनी स्याम-छबि[३] व्यास रसिक सर्वसु।।३१४।।

विहागरौ

मुख छबि देखत नैंन लचे
मान कृत अपमान विसरे, पलक प्रेम नचे।।
अधर, दसन कपोल, भौंहनि, रूपसिंधु सचे।
मनहुँ मुक्ता लाल कंचन इंद्रनील खचे।।
लोल लोचन सैंन सर पै, मैन ओल[४] बचे।
अलक झलकनि नासिकामनि हँसनि रंग रचे।।
भोर जुगल किसोर जोवन, जोर तमकि तचे।
व्यासदासहि रंग रासिहि, देत मार मचे।।३१५।।

---

१. बंशी में लगने वाला चारा २. प्रस्वेद, श्रम-जल ३. शृंगार मई छवि, काजल अस्त व्यस्त होने की छवि ४. ओट

सारंग

सुरत रँग राचे ललित कपोल।
मधुर मधुर कल रंग नागरहि छबिन फवति गति गोल।।
अधर दसन नख अंक पीक रस पंकिल करत कलोल।
अलक पलक प्रतिबिंबित, झलकत मनिताटंक बिलोल।।
विहसत लसत वसत पिय नैंननि माँगत मैननि ओल।
छूटी लट लटकति कुच घट पर नाहिन नील निचोल।।
जानि कमलदल आनि लचे लंपट मधुपनके टोल।
व्यासस्वामिनी भ्रुवविलास लव मोहन लीने मोल।।३१६।।

देवगन्धार

राधाही आधीन किसोर।
गौर अंग के रंग सिंधु कौ पावत नाहिन हरि आदि-ओर।।
महामाधुरी अधर-सुधाविधु पियत जियत उर चामुये कोर[1]।
मेघ सुदेस केस-कुल देखत, नाँचत गावत मोहन मोर।।
मानसरोवर ऊपर निवसतु लाल-मराल कमल-कुच कोर।
स्वेद सलिल-सरिता महँ विहरत, मीन मनोहर चंचल चोर।।
वरषत मेह सनेह बूँद चुनि हरि चातिक मधु जोवन जोर।
व्यास वैस वस लूटत दोऊ, छूटत नाँहिन जानत भोर।।३१७।।

सारंग

बनी वृषभान जान की बेटी।
निविड़ निकुंज कुसुम-पुंजनि पर स्याम वाम अंग लेटी।।
रति निसि जगी सोवत नहिं भोर किसोर जोर गुजरेटी[2]।
पियके हियमें जिय ज्यौं राजति, नाहु बाँहु बल भेटी।।
विहँसनि नैंननि की सैंननि मनु मनमथ अनी खखेटी[3]।
लोभी लाल व्यास-स्वामिनी जनु, कंचन-रासि समेटी।।३१८।।

---

१. चकोर २. ग्वालिन ३. भगा देना

कल्याण

देखौ गौरिहि स्याम झुलावहि।
वर्षारितु वृंदावन हित करि, हरषि हिंडोरना गावहिं।।
डोलत वग, बोलत चातक, पिक, घन दामिनि वनि वन आवहिं।
रिमिझिमि बूँद परत तन भीजत, मन परिताप बुझावहिं।।
कबहूँ हिलि मिलि प्रीतम दोऊ, जोबन जोर मचावहिं।
उरसौं उरज परसि हँसि रसिया, अधर-सुधा मधु प्यावहिं।।
वरषत विटप कुसम-कुल व्याकुल, सुर-वनिता सिर नावहिं।
ताल, मृदंग बजावति दासी, व्यास निरखि सचु पावहिं।।३१९।।

सारंग

मेह सनेही स्यामके वृंदावन पर्वत।
दामिनि दमकति चमकति कामिनि, झूलत दंपति तन मन हर्षत।।
ललना लाल हिंडोरा गावत, सुनि धुनि मुनिव्रतकौ मन कर्षत।
कुलकि पुलकि वेपथजुत भेटत, उर उरजनि सौं घर्षत।।
झूका सहत न डांड़ी गहत न कर गहि चुंवन लेत न लर्षत।
नैंन सैंन दै हँसत लसत दोऊ व्यासदासि विवि मुख सुख वर्षत।।३२०।।

मलार

झूलत फूलत कुंजविहारी।
दूसरी ओर किसोरवल्लभा श्रीवृषभान दुलारी।।
कुलकत हँसत खसत कुसुमावलि सुंदर झूमक सारी।
कबहुँक पटतरि झुलवति गावति प्यारिहि पिय रसिया री।।
देखति नैंन सफल करि खेलत, कोटि व्यास वलिहारी।।३२१।।

हिंडोलना झूलत नवलकिसोर।
वरषत मेह हर्‌यारौ साँवन, जहँ तहँ नाँचत मोर।।
दामिनि दुरति भामिनि छबि निरखत, चंचल अंचल छोर।
डोलत वक बोलत पिक चातक, सुनत मंद घनघोर।।

हियसौं पियहि लगाइ मचायौ अबला जोबन जोर।
सीकत[1] स्याम गिरत तें उबरे, करगहि उरज कठोर।।
पट, भूषन, लट, उरझि न छूटति, बाढ़ी प्रीति न थोर।
कुच गहि चुंवन करि मुख देखत, सुखसागर झकझोर।।
गावति नाँचति सखी झुलावति गति उपजत चितचोर।
राख्यौ रंग व्यासकी स्वामिनि, रतिरस-सिंधु-हिलोर।।३२२।।

धनाश्री

जाकैं राधिका सी घरनि, तरनिजा-तट घर,
सो नारि नटु काहि न फूलै।
वृंदावन सुख झिलि, ललितादिक दासी गावति,
मुदित झुलावति, सुरत हिंडोला निसदिन झूलै।।
सो अवतार कदंब-मुकुटमनि सुंदर सुघर स्याम तन पीत दुकूलै।
रास विलास हाँस रस वरषत, सपने हूँ जिनि व्यासहि भूलै।।३२३।।

जयति श्री

झूलत फूलत रंग भरे मैंन।
सहचरि रंग भरी गानकरत कल, पावति अति सुख,
झुलवति हैं, सब समुझति हैं सैंन।
नख-सिख छवि विवि जु परस्पर,
अधर अरुन वीरी विवि दैंन।।
नासा-मोती थकित न चकित रहे,
गहे सेजु जद्दपि चपल अन्यारे नैंन।
उर नग मुकुर विलोकति नागरि,
हँसत लसत छबि कहत बनैंन।।
उपमा जिती तिती सब वारी, तुच्छ करि डारी,
या छबि उपर अब कहाकहौंलहैकछुवैं न।

[1]. विथकित

हरिवंशी हरिदासी सनमुख,
कान लगै कछु बोलत बैंन।।
व्यासदास कैं चुभी, खुभी ग्रीवा भुज,
किलकि किलकि प्रीतम उर लैंन।।३२४।।

वसन्त

देखि सखी अति आज वन्यौंरी, वृंदाविपिन समाज।
आनंदित ब्रज लोग भोग सुख, सदा श्याम कौ राज।।
राधा-रवन वसंत रचायौ, पंचम धुनि सुनि कान।
धरनि गिरत सुर, किन्नर-कन्या विथकित गगन विमान।।
कुलकित कोकिल कुंजनि ऊपर, गुंजत मधुकर पुंज।
बाजत महुवरि, बेंनु, झाँझ, डफ, ताल पखावज, रुंज।।
केसरि-भरि-भरि लै पिचकारी, छिरकत स्यामहि धाइ।
छिरकि कुँवरि बूका भरि चोवा, लई कंठ लपटाई।।
मुकलित विविधि विटप कुल वरषत पावन पवन पराग।
तन, मन, धन, न्यौछावर कीनौं, निरखि व्यास बड़भाग।।३२५।।

चलि चलिहि वृंदावन वसंत आयौ।
झूलत फूलनि के झँवरा[1], मारुत मकरंद उड़ायौ।।
मधुकर कोकिल कीर केकी मिलि, कोलाहल उपजायौ।
नाँचत स्याम बजावत गावत, राधा राग जमायौ।।
चोवा चंदन बूका वंदन, लाल गुलाल उड़ायौ।
व्यासस्वामिनी की छबि निरखत, रोम रोम सचु पायौ।।३२६।।

रितु-वसंत मयमंत कंत सँग गावति कुँवरि-किसोरी।
सुर बंधान तान सुनि मोहन रीझि कहत हो, होरी।।
रंग छीट छबि अंग विराजत, मंग जलजमनि, रोरी।
वीथिनि बीच कीच मची, मानसरोवर केसरि घोरी।।

---
१. गुच्छे

बाजत ताल मृदंग बेनु डफ मन मुहचंग उमंग न थोरी।
उड़त गुलाल अबीर कीर पिक बोलत मोरन मोरी।।
छूटी-लट, टूटी मालावलि विगलित-कंचुकि, कटि-डोरी।
व्यासस्वामिनि स्याम अंक-भरि, सुख सागर-महँ बोरी।।३२७।।

नाँचत मोहनी मोहन सँग धुनि बाजै,
सुनि सुरत मदन रति गावत वसंत।
राग रंग रह्यौ, रसकौ प्रवाह वह्यौ,
मोपै नहिं परत कह्यौ तान मान गुन गति न अंत।।
मधु अटवी सुवास फुलनि कौ, रंग जाकौ,
कीच वीच वीथिनि के, राजत वृंदावन सुकंत।
गौर स्याम तन छीट, छबीली-छबी फबि गई व्यासहि,
कहि क्यौं आवै, सगन मगन भयौ मन-मयमंत।।३२८।।

खेलत राधिका गावत वसंत।
मोहन संग रंग सौं देखत सब सोभा सुखकौ न अंत।।
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ आवज वीना बीन सुकंत।
चोवा चंदन बूका वंदन साखि गुलाल कुँकुम उड़ंत।।
मोरै-आम काम उपजावत, गावत कोकिल मनौं मयमंत।
गुंजत मधुप पुंज कुंजनि पर, मंजु-रैन मलयजु वहंत।।
गौर स्याम तन छीटन की छबि, निरखि विमोहे कमलाकंत।
व्यासस्वामिनिके वन-विहरत आनंदित सब जीव जंत।।३२९।।

खेलत वसंत कंत कामिनि मिलि हो हो बोलत डोलत फूले।
सुखसागर गावत दोऊ नाँचत नट नागरि वंसीवट मूले।।
मोरै-आँमनि कोकिल कुंजति, फूल झूमकनि अलि-कुल झूले।
विविधि रंग छिरकत छबि अंगनि, भूषन भूषित चित्र दुकूले।।
पर-नारी पर-नाहु बाहु गहि, विगत लाज जोवन-मद भूले।
व्यासस्वामिनि सँग हरि विहरत, विलपत पथिक वधू जन सूले।।३३०।।

वसंत खेलत विपिन विहारी।
ललित लवंग-लता-वीथिनिमें संग बनी वृषभानुदुलारी।।
सखिनि ओट दै कुँवरहि छिरकति राधा भरि पिचकारी।
लाल गुलाल चलावत तकि तकि कुँवरि बचावति दै हँसि तारी।।
वरषानै तैं गोपी आई स्यामहिं देत काम-बस गारी।
छल करि आँकौ भरि काजर लै आँखि आँजि पहिरावति सारी।।
सैंननिही मनकी जिय पाई, रुख कीनौं है राधा प्यारी।
व्यासस्वामिनी विहँसि मिली मोहनकी छबि करत न न्यारी।।३३१।।

बसंत खेलत राधिका प्यारी।
गावत नाँचत बैंनु बजावत, अंस-भुजा-धरि कुंज विहारी।।
साखि, जवादि कुमकुमा, केसरि, छिरकति मोहन झूमक-सारी।
उड़त अबीर पराग गुलालहि, गगन न दीसै दिनु भयौ भारी।।
मधुकर कोकिल कुंजनि गुंजत, मानौं देत परस्पर गारी।
नखसिख अंग बनी सब गोपी गावति, देखत चढ़ीं अटारी।।
ताल, रवाब, मुरज डफ बाजत, मुदित सबै वृंदावन नारी।
यह सुख देखत नैंन सिरावैं व्यासहि, रोम रोम सुख भारी।।३३२।।

लाल विहारी प्यारीके सँग, वसंत खेलत वृंदावनमें।
गौर स्याम सोभा सुखसागर मोद विनोद समात न मनमें।।
तनसुख की चोली कुंकुम रँग, भीजि रही न देखियत तनमें।
उरज उघारे से अनियारे, चुभि रहे नागरके लोचनमें।।
धाइ धरी भामिनि मोहन-पिय हियैं लसति, दामिनि ज्यौं घनमें।
व्यासस्वामिनीकी छबि छीटैं प्रतिबिंबित मोहन आनन में।।३३३।।

खेलत राधिका मोहन मिलि माइ आईरी बसंत-पंचमी।
कंठ बाहु धरि नाहु छबीलौ, छिरकत अरगजा,
गावत नाँचत हो हो होरी हो धमारि जमी।।
मौरे आम काम उपजावत फूले फूलनिकी न कमी।
व्यास विपिन वैभव अवलोकत, नारायण बिसरी लछमी।।३३४।।

वसन्त (इकताल)

ऋतु वसंत दुलहिन दूलह सँग खेलत बाढ्यौरी रंग निवाहि।
दुहुँ-दिसि फूलनि देखि भयौ सुख गावत नाँचत सैंननि चाहि।।
बाजत ताल मृदंग झाँझि डफ देखति सुनि आनंद न चाहि।
केसरि भरि पिचकारिनि छिरकत, मोहन धाइधाइ गहत राधाहि।।
परिरंभन चुंबन मिलि विहरत, सुखसागर महँ अवगाहि।
करि न्यौछावर वलि वलि जाइ,
तृनु तोरि जोरि कर मधुकरसाहि।।३३५।।

गौरी

आजु बनी नव रंग किसोरी।
कुँवर कंठ भुज मेलत झेलत खेलत फाग कहत हो होरी।।
बाजत ताल, मृदंग झाँझ, डफ सहचरि गावति कीरति कोरी।
उड़त अबीर गुलाल चहूँ दिसि, चंदन, बंदन चोवा, रोरी।।
कारी अँगिया झूम्मक सारी, तन भूषित-भूषन सिर डोरी!
प्रथम मंगलाचरन कियौ पिय, मंगल कलस पूजि झकझोरी।।
केसरि भरिभरि पिचकारी छिरकत लूटत विधि खूटति, नहिं थोरी।
साखि, जवादि, कपूर, धूरि मिलि मुदित उडावति भरि भरि झोरी।।
नाहिंन कोऊ काहू सूझत चतुर सखीनु चुराई गोरी।
करि हाँसी ललितादिक दासी, अँचलु गाँठि कुँवर सौं जोरी।।
चाहत फिरत राधिका स्यामहि निरखि हसी सुंदरि मुख मोरी।
मनभायौ फगुवा लै छाँड्यौ मोहन ठग्यौ गाँठि तव छोरी।।
विहँसि मिली प्रीतम कौं प्यारी, जनु आनंद सिंधु महँ बोरी।
चरननि गहि नागरिके नागर करि आलिंगन चिबुक टटोरी।।
वरषत विटप पराग फूल फल मधु धारा महँ धरनि हिलोरी।
पुलकि पुलकि गोपी कुल सर उमगत सरिता गति अति थोरी।।
इहि विधि डोलत बसंत माधुरी सुंदर वृंदावन महँ घोरी।
स्याम तुम्हारे राज लाज तजि व्यास निगमदृढ़ सीवाँ तोरी।।३३६।।

सारंग

अब हौं हरि प्यारेसौं खेलहुँ।
आँकौ भरि भेटौं दुख मेटौं सुखसागर उर झेलहुँ।।
कुँवर नाँह की वाँह पानि गहि, कंठ आपुनैं मेलहु।
व्यासहि यह उपहाँस स्याम लगि लोक वेद पग पेलहु।।३३७।।

खेलत फाग फिरत दोऊ फूले।
स्यामा स्याम काम-वस नाँचत, गावत सुरत हिंडोरैं झूले।।
वृंदावनकी संपति दोऊ, नागरि नट वंसीवट मूले।
चोवा चंदन बंदन छिरकत छींट छबीले गात दुकूले।।
कोलाहल सुनि गोपी धाईं, विसरे गृह-पति, तोक[1] भरूले[2]।
व्यासस्वामिनीकी छबि निरखत नैंन कुरंग रहे तकि भूले।।३३८।।

गौरी

ये चलि ललन भरहि मिलि।
चलि हो, चलि अलि वेगि, गिरिधरन भरहिं मिलि।।
अली चलीं गिरिधरन भरन कौं,पहिरैं सुरँग दुकुल।
नवसत अभरन साजि चली सब अंगनि अंगनि फूल।।
सनमुख आवत होरी गावत, सखन सहित बलवीर।
उभै मदन-दल उमड़े मानहुँ, जुरे सुभट रनधीर।।
महुवरि चंग, उपंग, बाँसुरी, वीना मुरज मृदँग।
ढोलक, ढोल झाँझ, डफ बाजत कह्यौ न परत सुखरंग।।
व्रज जन बाला रसिक गुपाला, खेलत रँग भरे फाग।
तान तरंगनि मुनि गन मोहे, छाइ रह्यौ अनुराग।।
रतन-जटित पिचकारी भरि-भरि छिरकत चतुर सुजान।
कनक-लकुटि छैलनि पर टूटति, फिरत कुँवरिजू की आन।।
छुटत वसन, टूटति मनिमाला, धरत भरत भुज पेलि।
लाल गुलाल आनन पर वरषत, करत चपल कल केलि।।

---

१. बालक २. स्वामी

इक भानपुराकी अमान गूजरी फूली अंग न माइ।
छैलनि खेदि[1] कहूँ लौं आई, हलधर पकरे धाइ।।
आई सिमिट सबै व्रज-बाला, लेति आपनैं दाइ।
मानौं ससि अवनी पर घेर्‌यौ, उड़गन पहुँचे आइ।।
एकै धाइ धरत आँकौं भरि, एक मरोरति कान।
इक सनमुख है साजि आरतौ, बहु पूजा सनमान।।
जोरि सखन मनमोहन धाये दाऊजूकी भीर[2]।
जुवती जूथ सनमुख है उमड़े कूकैं देत अभीर[3]।।
जुवतिनि नैंन सैंन भेदनिमें, मोहन लीने घेरि।
मधुमंगल हँसत दूरि भयौ ठाढ़ौ, सुबल बजावत भेरि।।
मोहन पकरि जूथ में ल्याईं, पूजा रचति बनाइ।
दधि अच्छित रोरीकौ टीकौ गनपति गौरि मनाइ।।
एकै कुच विच लेत लालकौं लाइ रहत उर झेलि।
मानहुँ तरुन तमालहि लपटी कनक-लता वहु वेलि।।
गौर लेपन मोहन मुख लेप्यौ, लिखी छबीली भौंह।
ये ढोटा वृषभानराइके सुबल तुम्हारी सौंह।।
पकरि श्रीदामा चोवा माड्यौ लै आई भरि बाथ[4]।
नंदराइ यह ढोटा जायौ, दयौ हमारे साथ।।
भजि मनसुख जसुमति पै आयौ, कहत आतुरे बोल।
वृषभानपुराकी जोर गूजरी भैयन लैगई बोल।।
चली महरि तब यह सुख देखन, जोरि आपनौं वृंद।
सुरनर मुनिजन एक भये हैं थकित भये रवि-चंद।।
देखति सोभा व्रजपति रानी आनँद मन महँ होइ।
आजु रोहिनी भाग हमारौ, ताहिन पूजै कोइ।।
तब रोहिनी ललिताजू बोली, आगैं आवहु भाम।
करजोरैं हम करहिं विनती चलहु हमारे धाम।।

---

१. खदेड़ कर २. विपत्ति ३. ग्वाल ४. गोद

तब ललिता राधा पै आई बात सुनहुँ दै कान।
बड़ी महरि अपनें गृह बोलति, पायौ चाहति मान।।
तब राधा सखियन पै आई, लगति सबनि के पाँइ।
गावत खेलत हँसत हँसावत, चलहु महरि कैं जाइ।।
इतनौं सुनत सबै जुर आईं, चली महरिके द्वार।
व्रजपति रानी दृष्टि परी तब भाजि गये सब ग्वार।।
आगैं ह्वै रोहिनीजू आईं अरघ पाँवड़े देति।
कंचन थार उतारि आरतौ वारि वलैयाँ लेति।।
रतन जटित सिंहासन आन्यौं, दियौ किसोरिहिं राज।
बाबाजू अब करत विनती मोल लये हम आज।।
अगनित मेवा गनौं कहा लगि, भूषन, वसन अमोल।
प्रेम मगन नँदरानी वरषति कहत वचन मधु बोल।।
नौतन भूषन खुले सबनि तन, उपजत कोटिक भाइ।
प्रथम उतीरन दये व्यासकौं बिमल विमल जस गाइ।।३३९।।

वसन्त व सारंग

स्यामा स्याम बनें वन झूलत, मरकत कनक हिण्डोरै।
रितु बसंत अनुराग फागु सब, खेलत केसरि घोरै।।
बाजत ताल मृदंग झाँझ डफ मुरलिहि मिलिसुर थोरै।
गावत मोहनकी मोहन धुनि, सुनि सबकौ चित चोरै।।
झूका[1] जोबन-जोर देत दोऊ, कुलकि पुलकि झकझोरै।
स्याम काम-बस चोली खोलत, आतुर निसि के भोरै।।
डाँड़ी छाँड़ि करत परिरंभन, चुंवन देत निहोरै।
नैननि वरजति पियहि किसोरी, दै कुच कोर अकोरै।।
खैंचत पट लंपट नटनागर, झटकति नीवी बंधन छोरै।
नेति नेति सुनि रहत न लाल निहोरत चिबुक टटौरै।।

---

१. झोटा

देखि सखीन गुलाल उड़ायौ निरखत छवि कर जोरै।
व्यासस्वामिनी राजत स्यामहि, सुखसागर में बोरै।।३४०।।

सारंग

फूलत दोऊ झूलत डोल।
रच्यौ अलौकिक कौतुक निरखत,रति पति दीजति ओल[1]।।
पिय प्यारी उरसौं उर जोरें, अधरन सौं अधर कपोल।
चार्‍यौं वाहु पीठि कर दीठि, नाँहु पर कुचनि विलोल।।
जोबन जोर देत दोऊ झोका चंचल अलक निचोल।
मुंच मुंच रव नेति नेति नवनागरि बोलत बोल।।
तन सौं तन, मनसौं मन उरझ्यौ, बाढ़ी प्रीति अमोल।
परिरंभन चुंवन रति लंपट, नीवि निबंधनि खोल।।
बाजत ताल पखावज, आवज, डफ ताल दुंदुभि ढोल।
वीथिनि वीच कीच अरगजाकी, गावति सहचरि टोल।।
शुक,पिक,मोर,मराल, मधुप, मृग, मुदित पुलिंदिनी[2] कोल[3]।
व्यासस्वामिनी कौ जसु गावत, मधुरितु होलाहोल।।३४१।।

कल्याण

फूलनिकौ भवन फूलनिकौ पवन बहै,
फूलनिकी सेज रचि, फूलनिके चँदोये।
फूलनि की सारी, चोली, पहिरें प्यारी,
देखत फूलैं मोहन के नैननि के कोये।।
परिरंभन चुंवन तन फूले,
सुरत विवस सब राति न सोये।
फूले उरज करज परसतही,
पान करत फूले अधर निचोये।।
यह सुख निरखि व्यास सखि फूली,
फूले अंग न मात सकल दुख खोये।।३४२।।

१. शरण देना २. एक असभ्य जाती की स्त्रियाँ ३. एक जंगली जाती

फूली फिरति राधिका प्यारी पहिरें फूलनि के डँड़िया[१]।
नखसिख फूलनही के भूषन, पहिरै फूलनि की अँगिया।।
फूले वदन सरोज पयोधर, फूली अलक पलक अँखिया।
नाँचति गावति राग वसंतहि, सुनि फूली मोहन की छतिया।।
चोवा चंदन भरि पिचकारी, छाँडत नंदनँदन रसिया।
केसरि, साषि, गुलाल लाल पर वरषि हरषि वृषभान धिया।।
बजत मृदंग उपंग,ताल,डफ,रूंज,रवाब,झाँझि, डफिया।
हाव भाव परिरंभन चूँवन देखति व्यास भई परवसिया।।३४३।।

अल्हैया, विलावल (मूलताल)

श्रीवृषभानकिसोरी सुंदरि वृंदावन की रानी जू।
चंद्रवदन चंपक-तन-गोरै स्याम घरनि जग जानी जू।।
शुक सनकादिक नारद जाकी, गुपति रति गति पहिचानी जू।
ताकी महिमा श्रीहितहरिवंश, रसिक जयदेव वखानी जू।।
ताहि व्यास कैसैं कै वरनैं, हरि सुंदरि मति दै है जू।
जो नरनारि भक्ति चाहि है सो निसिदिन सुनि कैहै जू।।
राधामंगल नाम अनभतौ[२] पतितनि कौ पावन है जू।
रुचिकरि गावत हरिहि सुनावत, सो वृंदावनमें वसि है जू।।
जो कोऊ कोटि कल्प लगि जीवै रसना कोटिक पावै जू।
तदपि रुचिर वदनारविंद की सोभा कहत न आवै जू।।
कोटि मदन लावन्य सुभग तन मोहनके मन भावै जू।
नाँचति गावति क्रीड़ति नागरि पिय नागरहि रिझावै जू।।
नखसिख सुंदरता की सीवाँ कौतिक अवधि किसोरी जू।
रसना एक अनूप रूप गुन जो कछु कहै सु थोरी जू।।
निसदिन कुंजभवन प्रीतम सँग सुरत सिंधु महँ वोरी जू।
एक-प्रान द्वै-देह रीति यह प्रीति सबनि सौं तोरी जू।।

१. लम्बी लकीरों वाली साड़ी २. अलौकिक

सहज सिंगार लाड़िली सुंदरि उपमा तरुनी कोहै जू।
विविधि विलास हास रस वर्षत सैंननिही मोहन मोहै जू।।
झूमक सारी कारी अँगिया, पीनपयोधर अति सोहै जू।
कनक कमलकी कली अली जुग अनी अन्यारीनि मन पोहै जू।।
केस सुदेस अलक घुँघरारे तरल तिलक भौंहनि मटके जू।
ऐन नैन की सैन अन्यारी, प्रीतम के उर खटकै जू।।
बेसर गजमोती झलकत, उर कारी लट लटके जू।
अरुन कपोल विलोल तरकुली[1] खुटिला[2] चुटिलहि[3] हटके जू।।
दार्यौं दसन बने सरसाधर वदन सदन वीरी है रची जू।
मधुर वचन कोकिल सी कूँजति पिय श्रवननि सुखरासि सची जू।।
वलि वलि जाऊँ मुखारविंद की कोटि मदन सोभा न बची जू।
चितवनि ऊपर सब जग वारौं, जासों विधि बे काज पची जू।।
पोति जंगाली[4] गरे लरै द्वै (मनि) मुक्ताफल उर माला जू।
चौकी चमकति कुच विच मृगमद तिलक कियौ गोपाला जू।।
बने नवैया[5] अति चौपहलू सोभित वाहु मृनाला जू।
कर कंकन पौंची मखतूली चचरि चुरी रसाला जू।।
मेंहदी नखनि अँगुरियनि मुदरी नग अंगनि अति छाया जू।
हरि संसार वासना शृंखलनि तजि, बांधे राधा माया जू।।
आदि अंत छूटत नहिं जैसैं विषयिनि बाँधति जाया जू।
हाव भाव करि पिय पर वरषति रति सुख पोषत काया जू।।
कटि केहरि किंकिनि तिरनी[6] जघन नितंबनि भारी जू।
चरन महावर नूपुर बाजत मनि चूरा चौधारी जू।।
नखसिख पर भूषन सौंधे भूषित पिय कुँवरि सिंगारी जू।
व्यासस्वामिनी के पद नख की कमला करति न सारी जू।।३४४।।

---

१. कान का तरकी नामक गहना २. कर्ण फूल ३. वेणी या जूड़ा, वेणी पर धारण किया जाने वाला गहना ४. नीली ५. आभूषण विशेष ६. नीवी

गौड मलार

गोपी गावति मंगलचार।

कान्ह कुँवर प्रगटे जसुदा कैं, बाजत बैंनु पखावज तार।।
घर घर तैं बनि बनि सब दौरीं, भूषन पट सजि सहज-सिंगार।
फल, मंजरी, दूब, दधि, रोचन, हाथनि सोभित कंचन-थार।।
(श्री) राधा लै वृषभानघरनि-मनि, आई चंचल अंचल हार।
विहसे लटकत ललनहि देखत, लोचन चारु मिलत नहिं वार।।
नाँचत ग्वाल हरषि हेरी दै, गाइ बुलाइ गिरत न सम्हार।
व्रजजन घर घर द्रव्य लुटावत सर्वसु दीनों नंदउदार।।
मागद, सूत, वंदीजन, प्रोहित सबै असीषत सिंहदुवार।
व्यासदासके स्वामी प्रगटे, ताल, उसास कँपे भुव-भार।।३४५।।

गौरी

चलहु भैया हो नंदमहर घर बाजत आजु बधाई।
जनम्यौ पूत जसोदा-रानी, गोकुलकी निधि आई।।
कोऊ वन जिनि जाहु, गाय-लै, आवहु चित्र बनाई।
करहु कुलाहल नाँचहु गावहु, हेरी दै दै भाई।।
छिरकत चंदन चोवा वंदन हरदी दूब सुहाई।
माखन, दूध दहीकौ कादौं, भादौं मास मचाई।।
नाँचत गोपी मंगल गावति घर घर तें सब आई।
विहँसत वदन नैंन तन पुलकित, उर आनन्द न समाई।।
बाजत झाँझ, मृदंग, चंग, डफ, वीना, बैंनु सुहाई।
जय जय धुनि बोलत डोलत पुनि कुसुमावलि वरषाई।।
परमउदार सकल व्रजवासिन घर घर बात लुटाई।
जाचक धनी भये बड़भागी व्यास चरन-रज पाई।।३४६।।

नन्द महरि घर बाजै बधाई, बाजै हो माइ बाजै बधाई।
जनम्यौ पूत जसोदा के उर[1] व्रज की जीवनि आई।।

[1] कोख

नाँचति गोपी ग्वाल रँगीले अँग अँग चित्र बनाई।
माखन दूध दही हरदी लै गोरस कीच मचाई।।
बाजत ढोल, मृदंग, रुंज, आवज, उपंग सहनाई।
राइ गिरि गिरी[1] अरु निसान धुनि तिहूँलोकमें छाई।।
वृषभानराइ सुनि आइ सबनि पहिराइ चले सुख पाई।
रसिक अनन्य साधु सब फूले, आनँद हिय न समाई।।
सुर नर मुनि जै जै बोलत सब चिरुजीवौ जु कन्हाई।
देति वसन पसु मानिक मोती नंदमहरि घर वात लुटाई।।
व्रजवासी लूटत सब हारे, यह लीला अधिकाई।
गोकुल राज नंदनंदन कौ व्यास दास वलिजाई।।३४७।।

टोडी

ग्वाल गोपी नाँचत गावत प्रेम मुदित जसुदा सुत ज्यावत।
फूले अंग न मात परस्पर करत जुहार चारु सिर नावत।।
श्रीवृषभान सुनंद उपनंदहि आनँदमें नँद बबा नचावत।
अति उदार सर्वसु पसु वसु[2] दै रुचि रोचन दधि दूध वधावत।।
नैंननि सैंननि मटक लटकि हँसि, झटकत पटकत कंठ लगावत।
सूपु उलारि[3] उडेंलहिं, मुसकति सुखमय मुख लखि आँखि सिरावत।।
मार मच्यौ माखन, गो-दधिकौ, भादौं झर कादौंहि मचावत।
जयध्वनि सुनि कुसुमावलि वरषत, हरषत देव निसान बजावत।।
कंसहि दुख साधुन सुख तन मन व्यास न त्रास चरन-रज पावत।।३४८।।

टोडी चौताला वा श्रीराग

चिर जीवै यह महरि जशोदा बालक तेरौ माई।
सुनहि नंद व्रजराज भैया से सर्वसु खर्चु वजाउ बधाई।।
जीवन जनम सफल भयौ तेरौ जाकैं जनम्यौ कुँवर कन्हाई।
लोक चतुर्दस भई भैया हौ व्रजवासिनि की आज बड़ाई।।

---

१. सारंगी के आकार का बाजा २. रत्न, स्वर्ण ३. भरे हुये

माखन दूध दही हरदी लै, गोपी ग्वालिन दूब बधाई।
नाँचत गावत करत कुलाहल, हेरी फेरी दै दै भाई।।
तरुनी तरुन तरल फूले सब, अति उदार घर बात लुटाई।
भई भाँवती बात भैया से आजु कृपनता देहु बहाई।।
नारी पर पुरुषै नहिं जानति पुरुष न जानत नारि पराई।
हँसि हाथ दै लै कनियाँ[1] कै करत परस्पर नंद दुहाई।।
भूषन वसन परस्पर लूटत खूटत नाहिं इती बहुताई।
प्रोहित भाट जसोंदी[2] जाचक महा धनिक भये सब सिधि पाई।।
कोऊ वन जिनि जाउ गाइलै, आवहु नखसिख चित्र बनाई।
खग मृग गिरि तरु सलिता फूली व्यास आस करि कीरति गाई।।३४९।।

सारंग

नंद वृषभान के हम भाट।
उदै भयौ व्रज वल्लभकुलकौ, मेटि हमारी नाट[3]।।
भूषन वसननि आज लुटावहु, अरु गायन के ठाट।
ऐसौ देहु जु मोल लैंहि हम मथुरा की सब हाट।।
इंद्र कुवेर हमारे भाऐं, व्रजके गूजर जाट।
बढौ वंश हरिवंश व्यास कौ वास चीर के घाट।।३५०।।

आसावरी (ताल सूधौ)

व्रज-मंडन दुख-कंदन जनम्यौ जसोदा के माई आजु।
रंक मनौ निधि पाई आनँद कह्यौ न जाई, बजत वधाई इकछत-राजु।।
दूध, दधि,दूब लेत देत परस्पर कंचन मान्रिक मोती भूषन गन नाजु।
छिन-छिन लेत देत हू उमह्यौ विमुख नंदकौ नंदन भयौ,गरीब निवाजु।
कंचनकलस रसभरे सिरधरि चलीं मुदित मंगल गावैं जुवति समाजु।
गाइ सँवारि ग्वाल अँग सँग हेरी देत फेरी दै नाँचत, भयौ है मैया सब काजु।
जै जै जै कहत चहुँ दिसि मुनि मानव प्रगट्यौ रसिक कुँवर सिरताजु।
व्यास से पतित अगनित भव तारिवेकौं राधिका-रवन भयौ सिंधुकौ जहाजु।।३५१।

१. गोद २. जस गाने वाले ३. याचना का हट

सूहौ

सुख वृषभान जू के द्वारें।
जहाँ राधिका स्याम विराजत, अंग अनंग सिंगारें।।
विकट साँकरी खोर फिरत दोउ कुँवर कंठ भुज डारें।
गिरत फूल शिरतें पद परसत तरुवर किसलय डारें।।
तिमिर पुंज घन कुंजनि महँ देखत मुखचंद उज्यारें।
दुहुँदिसि सब निसि विहरत कामी, विछुरत नाहिं सकारें।।
वनकी छबि कवि कुल न कहत बनैं न बात विचारें।
व्यासस्वामिनी रूप गुन सीवाँ, नैनन सुखद निहारें।।३५२।।

सारंग

आजु वृषभानकैं आनंद।
वृंदावनकी रानी राधा प्रगटी आनँदकंद।।
जसुदादिक आईं सब गोपी, प्रफुल्लित आनन चंद।
गो धन ग्वाल सिंगारि लै आये, व्रजपति बाबा नंद।।
फूले व्रजवासी सब नाँचत, प्रमुदित गावत छंद।
माखन दूध दही कौ कादौं, तन कुमकुम मकरंद।।
देत परस्पर हीरा हाटक साटक[1] सुरभि अमंद।
प्रगट भये सुख पुंज व्यासके, दूरि गये दुख द्वंद।।३५३।।

प्रगटी हैं वृषभाननंदिनी चलहु वधाई बाजति।
भादौं मास उज्यारी आठें, मंद मंद घन-माला गाजति।।
व्रजवनिता, धावति, कल-गावति, आवति गाउँ गाउँ ते राजति।
विगलित वसन रसन लट लटकत, नाँचति पर पुरुषहि न लाजति।।
फूली फिरत नंदकी रानी, देति वसन पसु भ्राजति।
उदैं भयौ व्रजबल्लभकुलकौ, व्यास सबनि पर छाजति।।३५४।।

---

१. वस्त्र

जयतिश्री व देवगन्धार

आजु बधाई है वरसानैं।
कुँवरि किसोरी जनम लयौ सब लोक बजे सहदानैं।।
कहत नंद वृषभानरायसौं और बात को जानैं।
आजु भैया हम सब व्रजवासी, तेरे ही हाथ बिकानैं।।
या कन्या के आगें कोटिक, बेटनिं कौ अब मानैं।
तेरे भलैं, भलौ सबही कौ आनँद कौंन बखानैं।।
छैल छबीले ग्याल रँगीले, हरद,, दही लपटानैं।
भूषन वसन विविधि पहिरे तन, गनत न राजा रानैं।।
नाँचत गावत प्रमुदित है नर नारिनु को पहिचानैं।
व्यास रसिक सब तन मन फूले, नीरस सबै खिसानैं।।३५५।।

गौरी

बाजत आज बधाई वरसानेमें।
श्रीवृषभानराय की रानी, कुँवरि-किसोरी जाई, वरसाने में।।
गोपी सँग लै महरि-जसोदा मंगल गावति आई, वरसाने में।
नन्दीश्वरतें नाँचति नंद महरि घर बात लुटाई, वरसाने में।।
नाँचत गावत करत कुलाहल, दधिकी कीच मचाई, वरसाने में।
लटकत फिरत श्रीदामा हँसिहँसि दीनी है नंद दुहाई, वरसाने में।।
व्योम विमान अमरगन छाये, कुसुमावलि वरषाई, वरसाने में।
भये मनोरथ व्यासदासके, फूल भई अधिकाइ, वरसाने में।।३५६।।

नाँचत नंद, जसोदा गोरी।
श्रीवृषभाननन्दिनी प्रगटी, नंदनँदन की जोरी।।
व्रजवासिनि कैं होइ कुलाहल, देखति कुँवरि किसोरी।
बाल वृद्ध नर नारिनि कैं सुख व्यासहिं प्रीति न थोरी।।३५७।।

सारंग

भैया आज रावल बजति वधाई।
ढोल, भेरि, सहनाई-ध्वनि सुनि, खबर महावन आई।।

वह देखौ वृषभान-भवन पर, विमल ध्वजा फहराई।
दूब लयैं द्विज आयौ तब ही, कीरति कन्या जाई।।
नन्द जसोदा फूले तन मन , आनँद उर न समाई।
मंगल साज लियैं व्रजवनिता, गावति, गीत सुहाई।।
चौवा, चंदन, अगर, कुमकुमा, भादौं कीच मचाई।
व्यासदास कुँवरि मुख निरखत कुसुमावलि वरषाई।।३५८।।

सारंग (मूलताल व इकतालीताल)

वधाई बाजति रावल आजु।
श्रीवृषभानराइकी रानी, प्रगट कियौ व्रज काजु।।
घर घर तें गोपी आईं बनि, नाँचति गावति करि सब साजु।
गाइ सिंगारि ग्वाल लै आये, रसिक बैंनु वर बाजु।।
हरद, दूब, दधि, रोचन, चरच्यौ नर नारीन समाजु।
दधि काँदौ, भादौं झरि वरषत, मुख देख्यौ लै छाजु[1]।।
जाचक परम धनिक भये, पायौ धनिक इंदिरा लाजु।
व्यासस्वामिनी श्यामहिं दीनौं, कुंजकेलि रसराजु।।३५९।।

आजु वधाई बाजति रावलि।
श्रीवृषभानराय गृह प्रगटी स्यामा, स्याम सुखावलि।।
गृह गृहतें गोपी वनि आईं, आनंदित नंदावलि।
मानौं कनक-कंज-मकरंदहि पीयत जियत मधुपावलि।।
नाँचत गावत बेंनु बजावत हेरी देत गोपावलि।
दधि कादौं, भादौं झरि लायौ, प्रेम मुदित व्यासावलि।।३६०।।

मारु

ढाढिन व्रजरानीजू की कीरतिजू पै आई जू।
भुवन-प्रकाश करन कुल कन्या, भान नृपति घर जाईजू।।
मम पति हौं हरषी आनँद सुनि उर आनँद न समाई जू।
उमहे सब जाचक त्रिभुवनके, सुनि यह सुजस बधाई जू।।

---
१. सूप

कीजै मम अयाचक कुलरानी, याचक अनत न जाई जू।
दीजै मुक्ता रतननि मनि मानिक,नग निरमोल मँगाई जू।।
तौ दीजै, जौ सात पिढ़ीके, दोऊ वंश वखानौं जू।
नंदराय वृषभाननृपतिकी कुल परिपाटी जानौं जू।।
वंस अभीर 'महाबाहु' नृपति भये 'कंजनाभ' कौं गाऊँ जू।
भुवबल 'चित्रसैन' 'अजमीढौ' जस परजन्य सुनाऊँ जू।।
महाभाग, कुलतिलक नंदजू, तिनि कुल कीरति गाई जू।
जिहि कुल सुभग स्यामघन-सुंदर, मंगल मोद बढाई जू।।
अब सुनि गोप-वंशकौ रानी,सर्वोपरि रजधानी जू।
अष्टसिद्धि नवनिधि करजोरैं कमला निरषि लजानी जू।।
भये 'रतिभान' 'सुभान' मेरुसम 'उदैभान' रतिमानी जू।
'भान-अरिष्ट' 'महीभान' जान बड़ 'कंजनाभ' सुखदानी जू।।
वंश-तिलक प्रगटे जाके कुल, श्रीवृषभान विनानी[1] जू।
बड़ौ वंश वर्णन कौं लघुमति कीरति जाति न जानी जू।।
अति आनंदित प्रेम-मगन तन, जस तुव गाइ-सुनाऊँ जू।
कीरति-रानीकी कल-कीरति, आनँद मोद बढ़ाऊँ जू।।
अब तुम मोकौं देहु कृपाकरि, जो हौं माँगन आई जू।
अपनी लली पर करि न्यौछावरि, दीजै रहसि बधाई जू।।
लै ढाढिनि पाटंबर अंबर नग निरमोल मँगाई जू।
देत असीस कहत ढाढिनि यौं दिन दिन रहसि बधाई जू।।
नाँचत गावत चली भवन तें उर आनँद न समाई जू।
तिहि कुल श्रीवृषभान-नृपतिकी कन्या व्यासजु गाई जू।।२६१।।

नाँचत गावत ढाढ़िनिके संग ढाढ़ि हुरक[2] बजावैरे।
नंदराय कौ सत सखियाँ[3] वृषभानहि माथौ नावैरे।।
गोपराज कुल मंडनजू की कीरति को कवि गावैरे।
वरणत वदन थके फनपति के, सारद पार न पावैरे।।

---
१. ज्ञानवान २. छोटा ढोल ३.सात पीढ़ी का ढाँढी

यहै मनोरथ सबही के जिय, कीरति कन्या जावैरे।
होहिं सफल सब सुकृत सबनिके मंगल मोद बढावैरे।।
गोपी सँग लै महरि जसोदा मंगल गावति आवैरे।
व्रजवासी उपनंद नंद सब, घर घर बात लुटावैरे।।
यह सुनियत सब काहूकैं सुत जाये, याचक आवैरे।
यह कन्या कुलमंडन व्यासबचन साँचौ मोहि भावैरे।।३६२।।

देवगन्धार

नन्दीश्वर इकनगर अनूप नंद गोप तहँ जानिये।
संपति हो उनकी कही न जाइ तिहूँलोकमें मानिये।। १ ।।
जाति पाँति कुल उत्तम रीति तिनकौ सुत सुखसागरु।
देखतही जाकौ सजन सिहाँइ, रूपरासि गुन-आगरु।। २ ।।
बोलि लेहु सब मित्र सुबंधु वेगि मतौ इक कीजिये।
कही बात वृषभान विचारि, कुँवरि स्यामकौं दीजिये।। ३ ।।
विप्र लेहु तुम लगन सुदेस दसहू दोष निवारिकैं।
माँगउँ प्रिय पहँ रतन अमोल अरु पटचीर सँवारिकैं।।४ ।।
प्रोहित पठयौ सुघरी साधि, लोग घरनि बहुराइयौ।
पहुँचौ प्रोहित नंदके धाम, सुखदै, पग पखराइयौ।।५ ।।
कीनौं नंद बहुत सनमान, पूछि कुशल सुख पाइयौ।
गावति हो तिय गीत रसाल सभा सु गोप बनाइयौ।। ६ ।।
चंदन हो घिसि अंगन लिपाइ मोतिन चौक पुराइयौ।
बैठे मोहन पाट अनूप अंजुलि करनि जुराइयौ।।७ ।।
पंच विदित भई लगुन प्रमान रोचन तिलक कराइयौ।
वेद मंत्र पढि, कलस पुजाइ, तव कर लगुन धराइयौ।।८ ।।
बाजत द्वार दमामें ढोल भेरि भँवर संग गुंजरैं।
बाजत सरस स्वरनि सहनाइ उपजतिताननि पुंजरैं।।९ ।।

पठये रानी घरनि ते वोर अरुनि[1] व्रत[2] तिल चाँवरी।
पूछी एक त्रिय विप्रहि बात, दुलहिन गोरी कै साँवरी।।१०।।
बोलि नगरके बाँभन भाट मँगत औरनि, को गनैं।
जो जैसौ ताहि तैसौ देत कापै जुगति कहत बनैं।।११।।
कियौ विदा प्रोहित बहु भाँति करजोरैं विनती करी।
विनु दामनि हम लीने मोल सुभ कीजै नीकी घरी।।१२।।
आयौ विप्र जहाँ वृषभान समाचार जे सब कहे।
वर सुंदरता कही न जाइ, श्रवन सुनत अति सुख लहे।।१३।।
प्रथम दुहुँदिसि सुभदिन साधि मंगल फल घर घर दिये।
द्वितीय देव कुल विधिहि वनाइ जुगति जतन जे सब किये।।१४।।
आनन्दसौं गावति वरनारि कुँवरहि तेलु चढाइयौ।
माँगे हो तब हरे हरे बाँस चंदन खंभ कटाइयौ।।१५।।
मंडप रच्यौ विमल वहु भाँति खंभनि दियल वराइयौ।
अंब-मोर, दल वंदन वार, सोभा कहत न आइयौ।।१६।।
नंद बुलाये गोपी गोप वरात, मनभाए वागे दिये।
पुहुपमाल वर बीरी अनूप भाँति भाँति सौंधे लिये।।१७।।
हय, गज, पयदल, रथ आरूढ़ चँवर छत्र, सोभामई।
बाजे अगनित गने न जाँइ लोक-लोकप्रति धुनि छई।।१८।।
नंदमहरिकी चली वरात वरषानें वृषभान कैं।
ज्यौं ज्यौं चलत नगर नियरात त्यौं त्यौं सुख स्याम सुजानकैं।।१९।।
आग्यौनी करि सजननि भेटि वारौठी[3] बहुविधि करी।
देखत श्रीमोहनकौ रूप नर नारिनि की गति हरी।।२०।।
जनवासौ[4] दै चरनपखारि चार हुते जे सब किये।
अंगन लिपाइ उज्यारे दीप सजन बोलि भीतर लिये।।२१।।
गोप जुगतिसौं चरन पखारि बैठारै कर जोरिकैं।
पातरि हरी बहुत अति दौना परसत बहुरि झकोरिकैं।।२२।।

---

१. गुड़ २. भोजन ३. वियाह की एक रस्म ४. वरातियों के ठहरने का स्थान

व्यंजन कौंन गनै पकवान सुवस पछ्यावरि[1] चरपरी।
महलनि चढी देत त्रिय गारि को वरनें आनँद घरी।।२३।।
चौक पूरि विधि वेदि बानि दूलहु स्याम बुलाइयौ।
बैठे पंच सजन सुख पाइ हरिकौं अरघु दिवाइयौ।।२४।।
दक्षिनदिसि दुलहिन बैठारि वेद मन्त्र विधि सब करी।
भयौव्याह सबकैं आनँद साखि दुहूँदिसि उद्धरी।।२५।।
बाजत बहु विधि शब्द निसान सुर नर कौतुक देखियौ।
फूले दंपति अंग न मात, जनम सुफल करि लेखियौ।।२६।।
दुलहिन लै जनवासैं आइ कीनौं आनंद वधावनौं।
मुख देख्यौ दै रतन-अमोल पायौ मनकौ भावनौं।।२७।।
प्रात कियौ पलकाकौ चार, गौर स्याम जोरी बनी।
सोभा हो कछु कही न जाई, भुवन चतुर्दस के धनी।।२८।।
हय गय, हाटक, पट बहु मोल गोप सवै पहिराइयौ।
कलस पचहँड़े[2] अगनित और नग, मनि थार भराइयौ।।२९।।
विदाकरी, विनती करजोरि, हौं सेवकु करि जानिबौ।
कीनी कृपा दीन जियजानि सजन भलैं करि मानिबौ।।३०।।
ज्यौं घन-गरजैं बजैं निसान, नंद कनक जल बरषियौ।
जाचक दान न चातक तूल त्रिपतभये तन हरषियौ।।३१।।
निरख बरात चली ज्यौंनार रानी जसुमति, नन्द की।
मानिकदीप संजोये थार जननी आनन्दकन्दकी।।३२।।
दूलहु दुलहिनि आये पौरि राजति ज्यौं घन दामिनी।
करत आरतौ आनँदरूप महरि महरिकी भामिनि।।३३।।
मान्य जिते तिन रोके दुवार नेग बहुत भाँतिनि दिये।
करे दान पाँवडे अनेक, कनियाँ[3] लै, भाये किये।।३४।।
जो सत शेष सहस मुख होइ गुनगन तौ न कहत बनैं।
वेद उपनिषद् पायौ न पारु और इतर नर को गनैं।।३५।।

---

१ एक प्रकार का शर्बत २. पाँच जगह गोड़कर बनाया हुआ कलश ३. गोद

कंकन छोरत स्यामास्याम निरखि वदन दंपति हँसैं।
ताके भाग कहे नहिं जाँइ जो गावै प्रिय हरि जसैं।।३६।।
चिरजीवै जोरी संजोगु सकल लोक की संपदा।
यह जस गायौ व्यास अघाइ जनम न परसै आपदा।।३७।।
जीवत रसिक जुगल रसु गाइ श्रीवृंदावनके चंदकौ।
नर नारी गावत सुख पाइ दरस करत नहिं द्वंदकौ।।३८।।३६३।।

छन्द त्रिपदी

सरद सुहाई आई राति। दसदिसि फूलि रही वन जाति।।
देखि स्याममन सुख भयौ।।
ससि गो मंडित जमुनाकूल। वरषत विटप सदा फल फूल।।
त्रिविधि पवन दुखदवन है।।
राधा-रवन बजायौ बैंन। सुनि धुनि गोपिन उपज्यौ मैंन।।
जहाँ तहाँ तें उठि चलीं।।
चलत न दीनौं काहु जनाव। हरि प्यारेसौं बाढ्यौ भाव।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।१।।
घरु डरु विसर्‍यौ बढ्यौ उछाहु। मनचिन्त्यौ पायौ हरि नाहु।।
व्रजनाइक लाइक सुन्यौ।।
दूध पूतकी छाँडी आस। गो धन भरता किये निरास।।
साँचौ हित हरिसौं कियौ।।
खान पान तनकी न सँभार। हिलग छुटाई गृह व्यौहार।।
सुधि बुधि मोहन हरि लई।।
अंजन मंजन न अंग सिंगार। पट भूषन सिर छूटे वार।।
रासरसिक गुन गाइहौं।।२।।
एक दुहावत तें उठि भगी। और चली सोवत तें जगी।।
उत्कंठा हरिसों बढ़ी।।
उफनत दूध न धर्‍यौ उतारि। सीझी थूली चूल्हैं डारि।।
पुरुष तज्यौं जैंवतहु तें।।

पय प्यावत बालक धरि चली। पति सेवा कछु करी अनभली।।
धस्यौ रह्यौ भोजन भलौ।।
तेल उबटनौं न्हैवौ भूल। भाग्यन पाई जीवनमूल।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।३।।
अंजन एक नैंन विसस्यौ। कटि कंचुकी, लहँगा उर धस्यौ।।
हार लपेट्यौ चरन सौं।।
श्रवननि पहिरे उलटे तार। तिरनी[1] पर चौकी सिंगार।।
चतुर चतुरता हरि लई।।
जाकौ मन मोहन हरिलियौ। ताकौ काहू कछू न कियौ।।
ज्यौं पति सौं तिय रति करै।।
स्यामहि सूचित मुरली नाद। सुनि धुनि छूटे विषै सवाद।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।४।।
मात पिता पति रोकी आनि। सही न पिय दरसनकी हानि।।
सबही कौ अपमान कै।।
जाकौ मनुवा जासौं अटक्यौ। रहै न छिनहू ता विनु हटक्यौ।।
कठिन प्रीतिकौ फंद है।।
जैसे सलिता सिन्धुहि भजै। कोटिक गिरि भेदत नहि लजै।।
तैसी गति इनकी भई।।
एक जु घरतें निकसी नहीं। हरि करुना करि आये तहीं।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।५।।
नीरस कवि न कहै रस-रीति। रसिकहि लीला-रस पर प्रीति।।
यह सुख शुक मति जानिवौ।।
व्रजवनिता आईं पिय पास। चितवति सैननि भृकुटि विलास।।
हँसि बूझी हरि मानु दै।।
नीकें आईं मारग माँझ। कुलकी नारि न निकसैं साँझ।।
कहा कहौं, तुम जोग्य हौ।।

---
१. नीवी

व्रजकी कुसल कहौ बड़भाग। क्यौं तुम आई सुभग-सुहाग।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।६।।
अजहूँ फिरि अपने गृह जाहु। परमेश्वर करि मानौं नाहु।।
वनमें वसिवौ निसि नहीं।।
वृंदावन तुम देख्यौ आई। सुखद कुमोदिनि प्रफुलित जाई।।
जमुना जल सीकर घनें।।
घरमें जुवती धर्महि फवै। ता विनु सुत पति दुखित जु सवै।।
यह रचना विधिना रची।।
भरता की सेवा सुख सार। कपटै तजै छुटै संसार।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।७।।
वृद्ध अभागो जो पति होइ। मूरख, रोगी तजै न जोइ।।
पतित अकेलौ छाँडियै।।
तजि भरतारहि जारहि लीन। अैसी नारि न होइ कुलीन।।
जस विहूँन नर्कहि परै।।
बहुत कहा समझाँऊँ आज। मोहू गृह कछु करनौं काज।।
तुमतें को अति जान है।।
पियके बचन सुनत दुख पाइ। व्याकुल धरनि परीं मुरझाइ।।
रास रसिक गुनगाइ हौं।।८।।
दारुन चिंता बढ़ी न थोर। क्रूर बचन कहे नंदकिशोर।।
और सरन सूझै नहीं।।
रुदन करत बढ़ी नदी गंभीर। हरि करिया बिनु को जानै पीर।।
कुच तुंबिनु अवलंबदै।।
तुम हरि बहुत हुती पिय आस। विन अपराधहि करत निरास।।
कितव रुखाई छाँड़िदै।।
निठुर बचन बोलहु जिनि नाथ। निज दासी जिनि करहु अनाथ।।
रास रसिक गुन गाइ हौ।।९।।
मुख देखत सुख पावत नैन। श्रवन सिरात सुनत कल वैन।।
तव चितवनि सर्वसु हर्यौ।।

मंदहँसनि उपजायौ काम। अधर सुधा दै करि विश्राम।।
वरषि सींच बिरहानलै।।
जब तें पिय देखे ये पाँइ। तबतैं हमैं न और सुहाँइ।।
कहा करैं व्रज जाइकैं।।
सजन कुटुँब गुरु रही न कानि। तुम विमुखै पिय आतमहानि।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।१०।।
तुम हमकौं उपदेसौ धर्म । ताकौ हम जानत नहिं मर्म।।
हम अबला मति हीन सब ।।
दुख दाता सुत पति गृह बंधु। तुम्हरी कृपा बिनु सब जग अंधु।।
तुम सो प्रीतम और को।।
तुम सौं प्रीति करहिं ते धीर। तिनहिं न लोक वेद की पीर।।
पाप पुन्य तिनकैं नहीं।।
आसा पाँस बँधी हम लाल। तुम बिमुखैं ह्वै हैं बेहाल।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।११।।
बैनु बजाइ बुलाई नारि। सिरधरि आई कुलकी गारि।।
मन-मधुकर लंपट भयौ।।
सोई सुंदर चतुर सुजान। आरजपंथ तजै सुनि गान।।
तो देखत पुरुषौ लजै।।
बहुत कहा बरनैं यह रूप। और न त्रिभुवन तरुन अनूप।।
बलिहारी या रूप की।।
सुनि मोहन विनती दै कान। अपयस है कीनैं अपमान।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।१२।।
विरद तुम्हारौ दीनदयाल। कुच पर कर धरि करि प्रतिपाल।।
भुजदंडनि खंडहु बिथा।
जैसै गुनी दिखाबै कला। कृपन करै नहिं हलहू भला।।
सदय हृदय हम पर करहु।।
व्रज की लाज बड़ाई तोहि। सुख पुजवत आई सब सोहि।।
तुमहीं हमरी गति सदा।।

दीन वचन जुवतिन तब कहे। सुनि हरि नैंननि नीर जु बहे।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।१३।।
हरि बोले हँसि ओली ओड़ि[1]। कर जोरैं प्रभुता सब छोड़ि।।
हौं असाधु तुम साधु हौ।।
मो कारन तुम भई निशंक। लोक वेद बपुरा को रंक।।
सिंघ सरन जंबुक[2] ग्रसै।।
बिनु दामन हौं लीनौं मोल। करत निरादर भई न लोल।।
आवहु हिलमिलि खेलियै।।
मिलि जुबतिन घेरे व्रजराज। मनहुँ निसाकर किरिनि समाज।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।१४।।
हरिमुख देखत फूले नैंन। उर उमगे कछु कहत बनै न ।।
स्यामहि गावत काम वस।।
हँसत हँसावत करत उपहास। मन में कहत करौ अब रास।।
गहि अंचल चंचल चलौ।।
लायौ कोमल पुलिन मझार। नख-सिख नटवर अंग सिंगार।।
पट भूषन जुवतिन सजे।।
कुच परसत पुजई सब साध। सुख सागर मन बढ़्यौ अगाध।।
रास रसिक गुन गाइ हौं ।।१५।।
रसमें बिरस जु अंतरधान। गोपिन कै उपज्यौ अभिमान।।
बिरह कथा में और सुख।।
द्वादस कोस रास परमान। ताकौ कैसैं होत बखान।।
आस पास जमुना झिली।।
ता महि मानसरोवर ताल। कमल विमल जल परम रसाल।।
खग मृग सेबैं सुख भरे।
निकट कलपतरु वंशीवटा। श्रीराधा रति गृह कुंजन अटा।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।१६।।

---

१. अञ्चल फैला कर माँगना २. गीदड़

नव कुंकुम जल वरषत जहाँ। उड़त कपूर धूरि जहाँ तहाँ।।
और फूल फल को गनै।।
तहाँ स्यामघन रास जु रच्यौ। मर्कतमनि कंचन सौं खच्यौ।।
सोभा कहत न आवही।।
जोरि मंडली जुवतिनि बनी। द्वै द्वै वीच आपु हरि धनी।।
अद्‌भुत कौतुक प्रगट कियौ।।
घूँघट मुकट विराजत सिरन। ससि चमकत मनौं कौतिक किरन।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।१७।।
मनिकुंडल ताटंक विलोल। विहसत सज्जित ललित कपोल।।
नकवेसरि नासा बनी।।
कंठ सिरी गजमोतिन हार। चचरि चुरी किंकिनी झनकार।।
चौकी दमकै उरजन लगी।।
कौस्तुभमनि तैं पोतिन जोति। दामिनि हू तैं दसननि दोति।।
सरस अधर पल्लव वनै।।
चिवुक मध्य अति साँवल विंदु। सबनि देखि रीझे गोविंदु।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।१८।।
नील-कंचुकी मांडनि लाल। भुजनि नवैया उर वनमाल।।
पीत पिछौरी स्याम तन।।
सुंदर मुँदरी पहुँची पानि। कटि तट कछनी किंकिनि वानि।।
गुरु-नितंब वैनी-रुरै।।
तारामंडल सूथन जघन। पाइनि पैजनि नूपुर सघन।।
नखनि महावर खुलि रह्यौ।।
श्रीराधा मोहन मंडल माँझ। मनहुँ विराजत संध्या साँझ।।
रास रसिक गुन गाइहौं।।१९।।
सघन विमान गगन भरि रह्यौ। कौतिक देखन जग उमह्यौ।।
नैन सफल सबके भये।।
बाजत देवलोक नीसान। वरषत कुसुम करत सुर गान।।
सुर किन्नर जै धुनि करैं।।

जुवतिन विसरे पति गति देखि। जीवन जनम सुफल करि लेखि।।
यह सुख हमकों है कहाँ।।
सुंदरता गुन गन की खानि। रसना एक न परत वखानि।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२०।।
उरप लेति सुंदर भामिनि। मानौं नाँचत घन दामिनि।।
या छबिकी उपमा नहीं।।
राधा की गति पिय नहिं लखी। रस-सागर की सीवाँ नखी।।
वलिहारी या रूप की।।
लेत सुघर औघर में मान। दै चुंवन आकर्षत प्रान।।
भेटत मेटत दुख सबै।।
राखत पियहि कुचनि विच वान। करवावत अधरामृत पान।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२१।।
भूषन बाजत ताल मृदंग। अंग दिखावत सरस सुधंग।।
रंग रह्यौ न कह्यौ परै।।
कंकन, नूपुर, किंकिनि चुरी। उपजत धुनि मिश्रित माधुरी।।
सुनत सिरानै श्रवन मन।।
मुरली, मुरज, रवाव, उपंग। उघटत शब्द विहारी संग।।
नागर सब गुन आगरौ।।
गोपिन मंडल मंडित स्याम। कनक नीलमनि जनौं अभिराम।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२२।।
पग पटकत लटकत लट बाँहु। भौंहन मटकत हँसत उछाहु।।
अंचल चंचल झूमका।।
मनिकुंडल ताटंक विलोल। मुख सुखरासि कहै मृदु बोल।।
गंडनि मंडित स्वेदकनि।।
चौरी[1] डोरी विलुलित केस। घूमत लटकत मुकुट सुदेश।।
कुसुम खिसे सिरतें घनें।।

---

१. चोटी

कृष्णवधू पावन गुन गाइ। रीझत मोहन कंठ लगाइ।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२३।।
हरषित वैंनु वजायौ छैल। चंदहि विसिरी घर की गैल।।
तारागन मन में लजे।।
मोहन धुनि वैकुंठहि गई। नारायन मन प्रीति जु भई।।
वचन कहै कमला सुनौं।।
कुंजविहारी विहरत देखि। जीवन जनम सफल करि लेखि।।
यह सुख हमकौ है कहाँ।।
श्री वृंदावन हमते है दूरि। कैसे कर उड़ि लागै धूरि।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२४।।
धुनि कोलाहल दसदिसि जाति। कलप समान भई सुखराति।।
जीव जंत मैमंत सब।।
उलटि वह्यौ जमुना कौ नीर। बालक वच्छ न पीवत छीर।।
राधारवन ठगे सबै।।
गिरिवर तरवर पुलकित गात। गो धन थन तै दूध चुचात।।
सुनि खग, मृग मुनिव्रत धर्‌यौ।।
फूली महि भूल्यौ गति पौन। सोवत ग्वाल तज्यौ नहिं भौंन।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२५।।
राग रागनी मूरतिवंत । दूलह दुलहिन सरद वसंत।।
कोककला संगीत गुरू।।
सप्तस्वरनकी जाति अनेक। नीकै मिलवत राधा एक।।
मन मोह्यौ हरिकौ सुघर।।
चंद धुवनि के भेद अपार। नाँचत कुँवरि मिले झपतार।।
सबै कह्यौ संगीत में।।
सरस सुमति धुनि उघटत शबद। पिकन रिझावत गावत सुपद।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२६।।
श्रमित भई टेकत पिय अंस। चलत सुलप मोहे गज, हंस।।
तान मान मुनि मृग थके।।

चंदन चर्चित गोरे बाँहु। लेत सुवास पुलकित तन नाँहु।।
दै चुँवन हरि सुख लह्यौ
साँवल गौर कपोल सुचारु। रीझ परस्पर खात उगारु।।
एक प्रान द्वै देह है।।
नाँचत गावत गुनकी खानि। राखत पियहि कुचनि विच वानि।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२७।।
अलि गावत पिक नादहि देत। मोर चकोर फिरत सँग हेत।।
घन रु जुन्हाई है मनौं।।
कुच, कच, चिकुर, परसि हँसि स्याम। भौंह चलत नैंननि अभिराम।।
अंगनि कोटि अनंग छबि।।
हस्तक भेद ललित गति लई। पट भूषन तनकी सुधि गई।।
कच विगलित वाला गिरी।।
हरि करुना करि लई उठाइ। श्रमकन पौंछत कंठ लगाइ।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२८।।
तिनहि लिवाय जमुनतट गयौ। दूरि कियौ श्रम अति सुख भयौ।।
जलमें खेलत रँग रह्यौ।।
जैसैं मद गज कूल विदार। ऐसैं खेल्यौ सँग लै नार।।
संक न काहू की करी।।
ऐसैं लोक वेदकी मैंड़। तोरि कुँवर खेल्यौ करि ऐंड़।।
मन में धरी फवी सबै।।
जल थल क्रीडत व्रीडत नहीं। तिनकी लीला परत न कही।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।२९।।
कह्यौ भागवत शुक अनुराग। कैसैं समझैं विनु बड़भाग।।
श्रीहरिवंश कृपा बिना[1]।।
व्यास आस करि बरनौं रास। चाहत है वृंदावन वास।।

---

१. व्यास वाणी की उपलब्ध प्रतियों में सर्वाधिक प्राचीन प्रति वि. सं. १७६१ की है जो प. वासुदेव जी खेमरिया (कोलारस जि. शिवपुरी) के पास सुरक्षित है। इस प्रति में यही पाठ है, जबकि अन्य कई प्रतियों में 'श्री हरिवंश कृपा बिना' के स्थान पर 'श्री गुरु सुकुल कृपा करी' पाठ मिलता है।

करि राधे इतनी कृपा।।
निजु दासी अपनी करि मोहि। नित प्रति स्यामा सेऊँ तोहि।।
नव निकुंज सुख पुंजमें।।
हरिवंसी हरिदासी जहाँ। मुहि करुनाकरि राखौ तहाँ।।
नित्य विहार अधार है।।
कहत सुनत बाढ़ै रसरीति। श्रोतहि वक्तहि हरिपद प्रीति।।
रास रसिक गुन गाइ हौं।।३०।।३६४।।

गौड मलार
श्रीवृषभानसुता पति वंदे। उदित मुदित मुख सुखमय चंदे।।
विगत विरह रोग स्याम भँवर भोग, उरज जलज मादक मकरंदे।
कुंज भवन हित, कुसुम-सयन-कृत, सुरत-पुंज रस आनंदकंदे।।
वलित नयन-भ्रुव, ललित वयन जुव दलित मदन मद हाँस सु मंदे।
सहजस्वरूप दंपति, व्यास निरास संपति, दीन विपतिहर वर आनन्दे।।३६५।।

सारंग
नमो नंदनंदनि-घरनि व्रजजुवति मुकुटमनि,
राधिका सकलगुन रस निवासे।
राग रागिनी गान सप्तस्वर पट ताल,
शूलक लागनि मान रंगे रासे।।
सरद-ससि-विमल निसि मृदुल पुलिनस्थली,
नलिन अलि, हंस कुल पिक विलासे।
अंग सुधंग मय निपुन अभिनय,
नौतन वयनि, कल सयनि, मुख-मंदहाँसे।।
कुसुम सयनीय पर कुँवर कमनीय भुज,
कुचनि बिच अधर-मधु-रस विकासे।
सुरत रस सिन्धु मन मगन राधारवन,
निरखि सखि वृंदावन व्यास दासे।।३६६।।

देवगन्धार

सर्वोपरि स्यामकी दुलहिनि बहू।
श्रीवृषभानभूप की बेटी, नंदराइकी पुतबहू।।
वृंदावन मंदिर की देवी, सुख रति रत-रसद हू।
रूप-अवधि गुनकी निधि राधा चरनकमल सरनै रहू।।
रसिक अनन्य धर्म आराधन साधन की धारा गहू।
केलि रँगीली वेलि, उरज फल, गंड अधर मेवा महू[1]।।
अंग संग सत रंग भोगिया, भोग भवन भामिनि सहू।
वन अनत मुनि मनुज सुरासुर पदकौ व्यास उपानहू[2]।।३६७।।

गौरी

मेरे भाँवते की भाँवती।
जाति अहीरी आहि कुँवर सँग, सुघर अहीरी गावती।।
रास धरनि पर तरनिसुता-तट अंग सुधंग दिखावती।
नदति मृदंग संग ललितादिक, करतल ताल बजावती।।
रसिक-अनन्य न होते जो, वृषभान घरनि नहिं जावती।
व्यासस्वामिनी विनु वृंदावन, व्रजगोपी न कहावती।।३६८।।

धनाश्री (अठताल)

कौन भामिनि त्रिभुवन महँ सुंदरि,राधिका नागरि सौं करि सकै सारी।
रूप गुन सील उदार मुकुटमनि, आलसवस किये कुंजविहारी।।
वायस, हंसहि को पटतरि करै, कंचन काँचहि अंतर भारी।
अमिली, आँमहि, रावन रामहि, केसर गेरू छबि रुच न्यारी।।
कामदुधा गाड़रहि[3] न गाथौ[4] हय रासभ[5] सौं उपमा न्यारी।
मेवा खारी हींग कपूरहि खीर खाँड कै सम न सवारी।।
रविउदौ ता सरि न अमावस जामिनि कोटि चंद उजियारी।
चंपक, सेंमर से धन, राजा रंकहि उमगन न्यारी।।

---

१ महुआ २. जूती ३. भेड़ ४. मिलाना ५. गधा

सुर नर मुनि हरिदासनिकैं सब नारी हरिदासी नहिं डारी।
व्यास अजूवा जुवति पा परसति गनिका हू तैं पति न विकारी।।३६९।।

कल्याण

मोहनी कौ मोहन प्यारौ।
आनँदकंद सदा वृंदावन, कोटि-चंद उजियारौ।।
व्रजवासिनकैं प्रान जीवनि धन गो-धन कौ रखवारौ।
नंद जसोदाकौ कुल-मंडन, दुष्टनि मारन वारौ।।
चरन सरन साधारन तारन आरत हरन हमारौ।
नव-निकुंज सुखपुंजनि वरषत, व्यासहि छिन न विसारौ।।३७०।।

कम्मोद

मदन मोहन माई मन मोहनियाँ।
लटकतु हँसि उरके लटकन ज्यौं, चढ़त अचानक कनियाँ।।
सीस-टिपारौ, श्रवननि-कुंडल, कण्ठ सु कंचन मनियाँ।
पीत पिछौरी लाल लाँग कटि कसि किंकिनि मनि तनियाँ।।
विहसि कपोल विलोल विलोचन, नमित भौंह चल अनियाँ।
सुखद मुखारविंद अवलोकत, नाँचत मोर नचनियाँ।।
अंग अंग महँ छबि अति प्रगटित, कोटिक चंदकिरनियाँ।
राई नौंन उतारि तोरि तृन, वारि पिवहु किनि पनियाँ।।
चित-वित हरत, वेनु धुनि करत, मैंन वसु पाँइ लगनियाँ।
व्यास कहै को मानैं यह रस, जानैं जान मिलनियाँ।।३७१।।

सारंग

हरिमुख देखत ही सुख नैंननि।
निरखत रूप अनूप निमेष लगतहीं देत कुचैंननि।।
वारै घर घर बात बात सुनि श्रवन भरत सुख चैंननि।
हंस कोटि दामिनि प्रतिबिंबिति, बिंवाधर रस अैंननि।।

विनु दामनि हौं मोल लई इति स्याम छबीले सैंननि।
भौंह-धनुष तैं चलत नयन-सर, भेदत उरजु गुरैंननि[१]।।
रोम रोमकी छबि पर वारौं, कोटि सोम-छबि मैंननि।
सहज मधुरता व्यास मंद पै कहत बनैं क्यौं वैंननि।।३७२।।

धनाश्री

नंद वृषभानके दोऊ वारे।
वृंदावनकी सोभा संपति, रति सुखके रखवारे।।
गोरी राधा कान्ह साँवरे, नख-सिख अंग लुभारे।
बोलत, हँसत,चलत,चितवत, छबि वरनत कवि-कुल हारे।।
धीर समीर तीर-जमुनाके, कुंज-कुटीर सँवारे।
विविधि विहारहि विहरत दोऊ, सहज स्वरूप सिंगारे।।
रसिक-अनन्य मंडली मंडन प्राननहूँ तें प्यारे।
जुगलकिसोर व्यास के ठाकुर लोक वेद तें न्यारे।।३७३।।

सारंग

अपनैं वृंदावन रास रच्यौ नाँचत प्यारी पिय संग।
शब्द उघटत स्याम नटवर मनौं कल मुखचंग।।
विविधि वरन संगीत अभिनय निपुन नखसिख अंग।
सा रे ग म प ध नी सप्तस्वर गान तान तरंग।।
सिद्ध रागिनी राग सारँग सहित सरस सुधंग।
धंननन तंननन तक तक (थुंग) थुंग रुनित मृदंग।।
तरल तिलक ललाट कुंचित चपल चिकुर सुमंग।
चंद सत सम ताटंक मंडित गंड जुगल सुरंग।।
मंदहास विलास दसननि दमक दामिनि भंग।
हार चंचल प्रगट अंचल मधि उरज उतंग।।

---

१. देखना, घूरना

वलय नूपुर किंकिनी रव वलित ललित सु लंग।
भ्रुव-भंग तक चन्द कर्त्तरि भेद रस अनुषंग[1]।।
थकित शुक पिक हंस केकी कोक भृंग कुरंग।
व्यासस्वामिनि नित्य विहरत प्रनय कोटि अनंग।।३७४।।

गौड मलार

विराजमान कानन वृषभानकुँवरि गान तान,
वान हत विमान काम कामिनी।
प्रान रवन मोहन मन मृग सुमार किये,
हो हो रव बार बार विकच जामिनी।।
राग रंग पवन्न पंग शेष लचन मान भंग,
नारद सिव सारद लजति भाम भामिनी।
निरवधि गुन-जलधि वृंद वृंदावन रस अगाध,
राधा-धव नवविहार व्यास स्वामिनी।।३७५।।

कान्हरौ

ठाडी भई रंगभूमि में रँगीली प्यारी रेख प्रमान सौं।
तत्त थेई शब्द उघटि लाग डाट तिरप बाँधि ऊरु चचमानसौं।।
नेत्र भेद, ग्रीवा भेद, हस्तक भेद करि,रिझावति गावति तान बंधानसौं।
राग रंग रह्यौ अति व्यास के प्रभु स्याम सुजान सौं।।३७६।।

गौरी (अठताली)

नाँचति नागरि सरस सुधंग।
लाल बजावत ताल तरल गति गावत सुघर नचावत अंग।।
तत्त थेई तत्त थेई थुँग थुँग धन्नन तन्ननना बाजत मृदंग।
सप्तस्वर गान रागिनी राग सागर मान नागर तान,
पट वँधान धुनि सुनि विगत गर्व अनंग।।

---

१. युक्त

कोटि-कंदर्प लावण्य मुखचंद मंद सुचि-हास, चल नयन भ्रू-भंग।
रूप गुन-निधान जान दंपति रन समान आन,
व्यासदासि रंगरासि देखत सुख संग।।३७७।।

मारुवौ (अठताल)

नटवति नट अंग प्रति सरस सुधंग,
रंगरासि रसिक सरूप सुजान।
नागर नटवर तार लये कर, उघटि शब्द,
थेई थेई रूपनिधान करत कल-गान।।
उरप तिरप सुलप लेत धुवा,
धरु चंद्र विवि विधि मान।
रीझि मोहन उर लगावत व्यासस्वामिनी,
स्यामा सम भामिनी नहिं आन।।३७८।।

सारंग

विहरत बनैं विहारी विहारिनि।
रास रंग अंग संग रचे गावत नाँचत करतारिनि।।
कुसमित मुकुट काछनी झलमल झूँमक झमकत सारिनि।
पटकत-पद लटकत मुख नैंननि वाँकी सैंन विकारिनि।।
तिरप लेत चंचल रस राख्यौ उरज उघारिनि।
स्याम कामवस उर लपटानौं निरखि निपट सुख नारिनि।।
देखत कौतुक केकि कपोत सुक पिक चढि कुंज-अटारिनि।
व्यासस्वामिनीकी छबि वरनत कैसैं फवै भिखारिनि।।३७९।।

नट व आसावरी

मदन मोहन गावत लाल।
विकट तान बंधान मान सुर, कोऊ न पावै ताल।।
गति महँ गति, मति महँ मति, उपजति गुन गंभीर रसाल।
नारद सारद सिव गंधर्व किन्नरकुल कौ पर्स्यौ चाल।।

सैंननिही समझावति सखियनि राधा परम कृपाल।
श्रीव्यासस्वामिनिहि रीझि कुँवर मिलि उपज्यौ सुरत सुकाल।।३८०।।

गौरी (जयतिताल)

विहसि नैंननि कछु बात कही।
दोऊ सैंननिके सँग सरके, विषय वेलि उलही।।
आतुरता भुलई चातुरता, नाहु सु वाहु गही।
रस बाढ़्यौ तिहिं अवसर परसत, कछु सुधि बुधि न रही।।
स्याम कामवस चोली खोली, रवकि गहत कुच ही।
मनहुँ रंक के हाथ परी निधि अपुन उमगि उमही।।
तनसौं तन, मन सौं मन मिलि झिलि रति रस लै निबही।
व्यास सुरंग तरंगिनि जस सुख-सागर मांझ वही।।३८१।।

गौरी

आजु लवंग लता-गृह विहरत राजत कुंजविहारी।
कुसुम-निकर सचि, ललित सेज रचि, नखसिख कुँवर सिंगारी।।
प्रथम अंग प्रति अंग संग करि, मुखचुंवन सुखकारी।
तव कंचुकि बँध खोलत बोलत, चाटु वचन दुखहारी।।
हस्तकमल करि विमल उरज धरि, हरि पावत सुखभारी।
वधू कपट भुज पटनि दुरावति, कोप भृकुटि अनियारी।।
नीवी बँध मोचत मुंच अलंकृत, नेति कहत सुकुँवारी।
चिवुक चारु टक टोलनि वोलनि पिय, कोपित मन प्यारी।।
नैंन सैंन मधु वैंन हँसत जनु, कोटि चंद उजियारी।
कोक कुसल रसरीति प्रीति वस, रति प्रगटत पिय प्यारी।
अधर सुधा-मद मादिक पीवत, आरज पथ सों सीवँ विदारी।
वृंदावन लीला रस जूँठनि, बाइस व्यास विटारी।।३८२।।

कमोद

क्रीड़त कुंज कुरंगज-नैंनी।
काम चढ़ाइ स्याम अंग कहँ मनुहुँ सुरत रँग चैंनी।।
सोभा सिंधु न मात गातमहँ, कुच श्रीफल रुचि दैंनी।
कुंजनि सुनत मानु करि कोकिल, चाल मरालनि लैंनी।।
चौकी की चमकनि कैं आगैं, दामिनि भई कुचैंनी।
बसि पताल व्याल नहिं आवत, जानि मन्यारी वैंनी।।
उरजनि पर नख अंक मनहुँ विधु सुधा स्रवत घट मैंनी।
मानहुँ कनक कलस पर दीनी, हेम-चौर छबि छैंनी।।
रसना एक अनेक मधुर गुन, वरनत बनहिं न भैंनी[1]।
व्यासस्वामिनीकी चलि सैंननि वाननहूँ तैं पैंनी।।३८३।।

नट व आसावरी

मनोहर मोहनी की भाँति।
पलकनि नैंन समात न देखत, नव विटपनि की पाँति।।
कुंजनि गुंजत मधुप पुंज पिक कूजत कै इतराति।
कुसुमित अमित कुसुम नव बेली, निरझर सुधा चुचाति।।
मंद समीर धीर गति चंद किरनि मनि भुव मुसकाति।
मिथुन प्रगट मैथुन रससिंधु माधुरी सी वरषाति।।
श्रीव्यासस्वामिनी पियके हिय पर, विलसत हू न अघाति।।३८४।।

षट गौरी

सब अँगनि महँ उरज निशंक।
चोली कसैं बसैं अंचलुमें तऊ न होत सशंक।।
आगैं आगैं फिरत सबनि के, सकुचत नहिं सकलंक।
पहिलैं दीठि परतही पीठि न देत लगावत लंक।।
बाल काल तब बालविधु निरखत आँकौ भरि-भरि अंक।
सदाँ सकाम हृदयके भेटत मेटत दारिद अंक।।

१. वाणी से

गौर स्याम सोभा सागर जनु, कंचन मरकत पंक।
व्यासस्वामिनी द्वै निधि बीच बसाये रति रस रंक।।३८५।।

सारंग

तन छबिके फल उरज अन्यारे।
सहज स्वरूप सुवेस सुरेषी, गौर गात सित कारे।।
मनमोहन सुख दोहन देखत, प्रीतम पलक विसारे।
सर्वसु लूटत छूटत मानौं माई मनमथ वान अन्यारे।।
तोरत तनी तमकि चोलीकी, जोबनजोर उघारे।
व्यास न त्रास करत विषयनि सौं रति रन खर नख हारे।।३८६।।

षट

याही ते माई कुचनि के वोर भये कारे।
ये पियके नैंननिमें वसत, इनमें पियके तारे।।
भेटत दुख मेंटत सखि उरमें, नाहिन गड़त अन्यारे।
रति विपरीत मीत से लागत, जद्यपि जोवन भारे।।
हाथनि मांझ सांझ समात, रहत वासर अतिवारे।
अँचर डारि फारि चोली पट, सुभट लौं फिरत उघारे।।
श्रीफल, कनक कलस, गजकुंभ, कविन छवि ऊपर वारे।
व्यासस्वामिनिहिं लागत प्यारे, मोहन के रखवारे।।३८७।।

नट

बने राधा के नैंन सुरंग।
झलकत पलक अंक छबि लागत विडरे मनहुँ कुरंग।।
मानहुँ कमल-परागहि चाखत, तारे चंचल भृंग।
गोलक विमल सरोदक[1] खेलत मीन मानहुँ भ्रुव भंग।।
भृकुटि कटाक्ष-वान मोहन मन बेधत व्याधि अनंग।
व्यासस्वामिनी नागरनटहि नचावति सरस सुधंग।।३८८।।

---

१. सरोवर के जल में

सारंग

मुख देखत सुख पावत नैंन।
काहू चोट पीर अति काहू, मोपै कहत बनैं न।।
संपति विपति निसि की विसरी, भोर भई कत ठैंन।
कपट प्रीतिकौ सिद्ध समात न, हृदय साँकरे अैंन।।
निलज सलज सौं वैर घेरु घर घरहू चलत सुनैं न।
लै उसास पितु पोषि व्यास प्रभु कंठ लगै दै सैंन।।३८९।।

नैंन सिरात गात अवलौकैं।
इनि महँ सोभा सिंधु समात न पलक साँकरी औकैं।।
श्रवन होत सुख भवन हमारे, सुनत तुम्हारी टौकैं।
कहा कहा अनुभव कहिये हौ, सकल कला-कुल कौकैं।।
कुचकौ रस चाखत कर जैसैं, रुधिरहिं पीवत जौकैं।
ऐसैंहि व्यास रसिक रस भोगी विरस दुखित सिर ठौकैं।।३९०।।

पगे रँगीले नैंननि रंग।
अद्भुत छवि कवि कहि न सकत कछु, लाजत निरखि कुरंग।।
मुक्ता मरकत लाल कमल रस रचे कनक जल अंग।
गोलक गति निर्मोल लोल मति देखि लज्यानैं भृंग।।
तारे चंचल पलक पुतरिया, देसी राय सुधंग।
चोज चाव नव हाव भाव लव सैंननि नचे अनंग।।
कहिवैं कहत उपमा सब झूँठी खंजन मीन पतंग।
अनत स्याम सर्वोपरि सकुचत व्यासस्वामिनी संग।।३९१।।

निरखि सखि स्यामा विहरति पियसौं।
मुख महँ अधर, नाहु बाहुनि महँ, विछुरत नाहीं कुच युग हियसौं।।
लटमें लट, पटमें पट अरुझे, तनमें तन मनमें मन जियसौं।
मिलि विछुरी न व्यासकी स्वामिनि ज्यौंव षाँड़ मिलि घियसौं।।३९२।।

धनाश्री

सब गुन गोरी तेरे गातनि।
कछुक कामबस स्यामल हैं कछु मलय चंद निसि प्रातनि।।
मृगज, मीन, खंजन, गज, हंस, हेम कपट के भ्रातनि।
घन दामिनि पंचानन शुक, पिक मधुप सर घातनि।।
नागर राग विराग लयै कछु सुधि कृपन धन-दातनि।
तव विलास छवि कविनु अगोचर, कोटि कविनु के तातनि।।
सवै भाव मनमे क्यौं आवत, कहत सुनत सठ बातनि।
श्रीव्यास रसिक तव फल पायौ निरखत नैंन समातनि।।३९३।।

मानौं भई भूपनि कीसी पट कुटी।
बनी विचित्र उतंग तनी तनि, देखति करति वट कुटी।।
कर गहि चुटी लुटी रति रन महँ, जहाँ जमुन तट कुटी।
व्यासस्वामिनी के आदेस सुदेस भई व लट कुटी।।३९४।।

सारंग

विहरत राख्यौ रंग अँध्यारें।
परे पीठिदै रूसत हूँ दोऊ लपटि भये नहिं न्यारे।।
चंचल अंचल सनमुख है लै उसास दै गारे।
वरवट ही आँकौ भरि बंधन करि हँसि नैंन उघारे।।
अतिआवेस सुदेस देखियत, दूरि करत पट फारे।
व्यासस्वामिनी रूठी तूठति[1] पियके दुखहि विसारे।।३९५।।

कल्याण

ओली ओढ़ति[2] चोली तोसौं।
मम हिय पियके बीच बसत कत, वैर करत विनु काजहिं मोसौं।।
अरुन नैंनके पलक किये जिहिं, ताहि कहाँ लगि कोसौं।
पारति बीच व्यासके प्रभु सौं, ता पापिनि की नार मसोसौं[3]।।३९६।।

---

१. प्रसन्न होना २. आँचल फैला कर माँगना ३. मरोड़ना

देवगन्धार

अब मैं जाने हौ जू ललन,
ताही पै सिधारिये जहाँ नवौ-नेहरा।
मुखकी हला भला मोही सौं करन आये,
जियकी ओरसौं, तुम बिन सूनौ है जू वाकौ गेहरा।।
निसिके चिन्ह प्रगट देखियत अँग प्रति अँग,
काहेकौं दुराव करत नख रेख लागे देहरा।
व्यास के स्वामी स्याम वेगि पाँइ धारियै,
नातर भीजैगौ पीरौ पट आवत है जू मेहरा।।३९७।।

सारंग

आजु पिय काके हाथ बिकानै।
ताही कौ भाग सुहाग छबीलौ, जाके उर लपटानै।।
सुरत रंग की अंगनि उपमा दुरति न बनति वखानै।
उर नख-रेख अँग सोहत मानौं, ससि गन गगन समानै।।
पीक लीक नैननि फिरि आई सोभित फल अलसानै।
मानौं अरुन पाट के फंदनि द्वै खंजन अरझानै।।
पीक अधर अंजन रस राचे परत नहीं पहिचानै।
मानौ सरद ससि निसि के प्रात सुधा कन वारि निधानै।।
वसन रँगमगे केस रँगीले, विगलित स्वेद चुचानै।
मानहुँ भूमि पपीहा कारन घूमि घटा घहरानै।।
गंडनि मनि-ताटंक अंक जनु रथ चकपैया वानै।
वाहनि कुंडल-मकर थके जनु मनसिज कियौ पयानै।।
सनमुख पाँइ न परत इतै धर, कुँवर कहा अकुलानै।
लै धन चले चोर ज्यौं भोरईं, कुसमैहि[1] देखि डरानै।।
उघर गई मुलमाकी[2] बाजी[3] स्याम कपट मन आनै।
करत कितव की आस व्यास सुनि बहुत लोग पछितानै।।३९८।।

१. अनुपयुक्त अवसर २. कलई ३. दावा, प्रयास

धनाश्री

ललिता राधाहिं नैंकु मनाइ दै।
हौं वलिजाँउँ नाम तेरेकी, पर दुखमें सुखहि जनाइ दै।।
नागरि रस-सागर महँ मेरे अंगनि रंग सनाइ दै।
मेरे तीन जाचकनि पाँच-पदारथ वेगि गनाइ दै।।
सुनि हँसि रहसि उरसि लपटानी, मनकी बात बनाइ दै।
व्यासिस्वामिनी रति गुन गति लै सर्वसु पतिहिं रिझाइ दै।।३९९।।

गूजरी (कमर्ठताल)

कह भामिनि तूँ फूली फिरति।
राति जगी नव-रंगराइ सँग, कतहि दुराव करति तूँ नागरि अंग अंग झिरति।।
नैंन कपोल अरुन उर नख छबि, अधरनि रंग कुसुम सिर किरति[1]।
व्यासकी स्वामिनि जोबन मदमाती, गजगामिनि कैसैं घेरी घिरति।।४००।।

गूजरी

अधर सुधा मद मोहन मोह्यौ।
भुज बंधन बँधवाइ, पाइ सुख कुच गिरिवर भरतार चपि सोह्यौ।।
खर नख रेख सुरेख गण्ड छबि खण्डित दशन वसन रति मानत।
गुरु नितम्ब अंग हन आनन्दित कच करषत हरषत हसि जानत।।
रवनी कौ रति रोष रवन कहँ पोष रहतु अरु हरन मानकौ।
व्यास काम गति वाम श्यामहू तृपति न राधा सुरत दानकौ।।४०१।।

कल्याण

मेरौ कह्यौ मानिरी भैंनी।
अटकरु पायौ नटनागर कौ, प्रान तूँही मृगनैंनी।।
हियमें पियहिं राखि तूँ खेलति, कहत पिसुन[2] चल सैंनी।
अंग अंग रति रंग रचेहौ, सूचति अति मो सौं सुखचैंनी।।
खंडित अधर, गंड पुलकावलि, सक सकाति सुख अैंनी।
चोली नेंकु जु खोली सुंदरि, मनौ मदनकी गिरी गुरैंनी।।

१. गिर रहें हैं २. चुगलखोर

दुरत न चोरी कुँवरि किसोरी कहत और सब छूटी वैंनी।
प्रगट पीक नख लीक कुचनि जनु कनक-कमल पर छैंनी।।
वंक विलोकनि, हँसनि छबीली, सकुच परम सुख दैंनी।
व्यासस्वामिनी स्याम संग जनु दूध भातमहँ फैंनी।।४०२।।

सारंग

काम-वधू कंदुकसौं क्रीड़त सुनि राधा, पिय सन्मुख आवति।
कमल पटल[1] तजि, तव मुख सनमुख देखी तूँ मधुपावलि धावति।।
संभ्रम भामिनि चितवतहि पिय चुंवित, ललित रतिहि उपजावति।
छलबल करि हरि राधा विहरत, देखत व्यास सखी सचुपावति।।४०३।।

बिलाबल व विहागरौ

आजु अति सोभित सुंदर गात।
अरुन सु लोचन पिय दुख मोचन, अति आतुर अकुलात।।
डरत न हरत परायौ सर्वसु, मंद मंद मुसिकात।
मानहुँ रंक महा निधि पाई, फूले अंग न मात।।
व्यास कपट फल तब पावहुगे, जबहि मदन सर घात।।४०४।।

नट

बतरस कत बौरावति मान दुरावति मेरौ।
सुमुखि तुहीं दुख पावतु रूसैं प्रान-रवन विलपत री तेरौ।।
तेरौई चरन सरन सुंदर कौं विरह सिंधु तरिवे कहँ वेरौ।
कामहि स्यामहि कठिन परी सखि तोहीतें अब होत निवेरौ।।
हा राधे ! हा प्रान-वल्लभा ! रटतु कुँवर कुंजनि करि फेरौ।
व्यासस्वामिनी रहसि विहसि मिली, रसिक कियौ विनु दामनि चेरौ।।४०५।।

सारंग

मूरतिवंत मान तेरे उर फव्यौ कठिन कुच भेष।
याही तें सुखमें दुखके मुख हँसत न नैंन निमेष।।

---

१. समूह

प्रान रवन की तजि परतीति अनीति बढ़ावत तेष[1]।
सुभग जामिनी घटति भामिनी, रति बिनु जान अलेष[2]।।
व्यास वचन सुनि पियहि दियौ सुख वरनत विथके शेष।।४०६।।

सुखद मुखारविंद विनु सुंदरि स्यामहि लगी चटपटी।
पियकी बाधा मेटति राधा छाँड़हि टेव अटपटी।।
मेरी मिलत वसीठी तेरी सबही बात लटपटी।
व्यासस्वामिनी सुनत पियहि मिलि मेटि विरह घटपटी।।४०७।।

गौरी

लागीरी मोहि तालावेली[3]।
स्याम काम वस विलपत वन वन फिरत हैं अरु राधिका अकेली।।
नैंन चटपटी प्रीतम विछुरैं कहा करौं तन छुटत नाहिनैं सहेली।
सुनत व्यासकी स्वामिनि पियसौं हियौ,
मिलावति सुरत सिंधु में खेलत झेली।।४०८।।

षट (गजतिताल)

सुनहि सुचित है सुंदरि गुपत संदेशौ स्याम कह्यौ।
कठिन दह्यौ जिहि वारक चाख्यौ ताहि न रुचित मह्यौ।।
सुवसु सरोवर सुखि गयेंहू, दादुर धीर रह्यौ।
पावस-ऋतु विछुरें सब सूखें, चातक सबै सह्यौ।।
उपहति[4] बहुत सहति मृग बनसौं, प्रीति रीति निवह्यौ।
एक एक अँग के सुख विनु दुख-सागर नहिं परतु थह्यौ।।
सब कोऊ अपनौं हठ पोषत करि जेहींने जु गह्यौ।
व्यासस्वामिनी सुनत मिली हँसि, करुना-सरु उमह्यौ।।४०९।।

गौरी

छलबल छैल छुवत कत पाइ।
अपनौं काजु सँवारि, औरकौ काज विगारत आइ।।

१. गुस्सा २. निरर्थक ३. छटपटी ४. आपत्ति

सटपटात लपटात कपट दुख देत सुखहिं दिखराइ।
जामहि जाइ दुरावत सोई चोरी देत बताइ।।
मानहुँ कीर चतुरई तुव तन कहत महा पछिताइ।
पोष्यौ भर्‍यौ कहूँ हूँ कैतव कहूँ लगाये धाइ।।
नैंन पिशुनता करत सैंन दै, वरजत तुम अकुलाइ।
कुटिल संग भ्रू-भंग रंग सुख कहत रहै मुसक्याय।।
घरकौ चोर विकारी सौं कछु काहू कौ न वसाइ।
व्यासस्वामिनी विहसत, मोहन कंठ रहे लपटाइ।।४१०।।

कल्याण

राति अकेलें नींद न आवति।
सुनि सखि हौं पियसौं कत रूसी, पावस चितहिं चलावति।।
बोलन लागे मोर, पपीहा, कोयल काम बढ़ावति।
घन घोरत चितुचौरतु कामिनि दूती चमकि मनावति।।
लैकरि अपने साथ नेंकमहँ सूनी सेज न भावति।
प्रीतम बिछुरे कौ दुख तेरे मुखकी छबि विसरावति।।
बोल बँधान भयौ, मिलि पौढ़तु उर सौं उर लपटावति।
कुच बिनु सकुच न जानि व्यासकी स्वामिनि अति सुख पावति।।४११।।

सारंग

किसोरी सहचरि संग चली।
जियकी वाँनि हानि करि मानी सुनि पियकी मुरली।।
सुनत सुरनि सज्जति है लज्जित, उझकति कुंजगली।
मैन विवस है भईठेंन वीचही, मोहन मिलि करम बली।।
उरसौं उरज मिलत न झिलत सुख-सागर वढ़े अली।
हरि मधुपहि मधु प्यावत व्यासस्वामिनी कमल कली।।४१२।।

नट

वसीठी सैंननि ही जोरी।
रूठैंहूँ न तजी चंचलता, जानत चित-वित्त चोरी।।
कुंचित नासा लोल कपोलनि, मोहति मन मुख मोरी।
अंग अंग प्रति रतिरस लालच, साहस चिवुक टटोरी।।
काम कनक सिंहासन तरलित, सिथिल वसन कटिडोरी।
कंपित कुच कर जघन अधर उर श्रमजल पुलक न थोरी।।
नैंननि राची भौंहनि विरची, हँसि पिय कुँवरि निहोरी।
कैतव गुरु गोपाल व्यास प्रभु, चरन गहे लट छोरी।।४१३।।

कल्याण

रुसतहूँ तूषत[1] दोऊ मन मन।
मैंन विवस सैननि दै विहसत, वैंन सुहात न कन कन।।
नीवी छोरि, निहोरति गोरी, मूँदि श्रवन कहै जन जन।
गौर चरन हिय धरि पिय समुझि बजावत किंकिनि खन खन।।
ओलि पसारि खोलि चोली दुख मेटत भेटत थन थन।
जमुना पावस-रितु हित करि दामिनि सौं मिलि घन घन।।
सुरत सिंधु पोष्यौ मोहन मुनि कीनौं जप तप वन वन।।४१४।।

कुंडल जुगल फंदन डर लोल द्वै गोलक घटतें सटके।
सुख पायौ इनि लोभिनि मिलि, मकरंद-वृंद रस गटके।।
मिलत सहेली सुदेसु परिहरि दोऊ सर्वसु देत न मटके।
घूँघट पट पिजँरा महँ निजुकुल निरखत कोरनि ठटके।।
कातरता तजि, चातुरता सजि, निजु कंचुकि महँ लटके।
तोसौं जोरि हितु मोसौं तोरि चितु तातैं मैं नहिं हटके।।
व्यासस्वामिनी तेरे कारन घन वन-कुंजनि-भटके।।४१५।।

---

१. प्रसन्न होना

देवगन्धार

छिड़ाइ लये तैं मेरे नैंन।
बंक विलोकि सुमार विहसि किये भौंह-धनुष सर-सैंन।।
देखत गुन गति मति हरि लीनी दै कजरा महँ अँन।
इनही मेरौ मन मोह्यौ है गई पलक सौं ठैंन।।
तारे तरल पुतरिया कोये रतिरस में ये मैंन।
सहज मोहनी इनही की यह किधौं कियौ कछु तैंन।।
उन वधिकनि ये मृगज गीधे[1] विधये लट फंदनि चैंन।
विलगु न मानैं हिलगि हियेकी व्यासहि कहत बनैंन।।४१६।।

रामकली

सदाँ वन वरषत साँवल मेहुरी।
अरु दामिनि कौंधति दुहुँदिसि निसि टूटे जुड़ात सनेहुरी।।
घूम घुमरि नान्हीं बूँदनि लागत, अति जुडात तहँ देहुरी।
दादुर मोर पपीहा बोलत डोलत छाँड़ै गेहुरी।।
हरित धरनि महँ बूढ़नि[2] रैंगति, निरखत रहत न तेहुरी[3]।
व्यास आस सबही की पूजी, जीवन कौ फल लेहुरी।।४१७।।

सारंग

नाँचत गोप पराग फूल फल मधुधारा महँ धरनिहि बोरी।
पुलकि पुलकि गौ, गिरि, गोपी-कुल सर उमगत, सरिता गति थोरी।।
इहिविधि डोल वसंत माधुरी सुंदर वृंदावन महँ घोरी।
स्याम तुम्हारे राज लाज तजि व्यास निगम दृढ़ सीवाँ तोरी।।४१८।।

धनाश्री

कन्हैया देहि धौं, नेंकु हेरी।
अपनौ राग सुनाउ छबीले हौं बलिहारी तेरी।।

---

१. बस कर लिये २. बीर बहूटी ३. गर्व, मान

मो सन्मुख नेक गाइ बुलाउ, आँखि चाँपि नेकु डेरी।
वैनु बजाउ लटकि मेरे लटकन नाँचहि दै दै फेरी।।
सुनि मोहन, सब कियौ, दियौ सुख, व्यास मोल बिनु चेरी।।४१९।।

गौरी

आवोरे आउ भैया से हे हेरी दीजै।
गाइ बुलाउ दुहाउ छबीले, मथि मथि घैया पीजै।।
आस पास गोपाल मंडली, मिलि कोलाहल कीजै।
मुहुवर वेनु वजावत गावत, आनँद ही तन भीजै।।
गौरस वेचन जाति ग्वालिनी, घेरि दान किन लीजै।
व्यासदास प्रभु झगरत घर वन, आनंदहि सुख जीजै।।४२०।।

ग्वाल चवैनी ग्वाल चवात।
मीठी लागत मोहन के सँग घरकी छाक न खात।।
टोरि पतउआ जोरि पतोखी[1] पय पीवत न अघात।
मधुर दही के स्वाद निवेरत, फूले अंग न मात।।
कबहुँक जमुना जलमें पैरत, मोहन मारत लात।
बूड़क लै उछरत छलबल सौं, स्याम गात लपटात।।
कबहुँक खग मृग भाषा बोलत वन सिंघै न डरात।
अद्‌भुत लीला देखि देखिकैं व्यासदास वलिजात।।४२१।।

कान्ह मेरे सिर धरि गगरी।
यह भारी, पनिहारी कोउ न, मनसा पुजवत सगरी।।
राति परी घरु दूरि डरु बाढ्यौ, मेरी सासुज नगरी।
देहु पीतपट करहु इंडुरी[2], छाँड़हु छैल अचगरी[3]।।
अंचल गहि चंचल बन झगरत बगरत लट बगरी।
विहरत व्यासदासके प्रभुसौं, ग्वालिनि सुख लै डगरी[4]।।४२२।।

---

१. दोना २. सिरपर बोझा उठाने के लिये कपड़े की बनी गोल गद्दी ३. छेड़छाड़ ४. चल दी

जमुना जातिहि हौं पनियाँ।
बीचहिं भई और की औरहि, मिलि गये मनमोहनियाँ।।
मोतन विहँसि विलोक्यौ नागर, चलि नैंननि की अनियाँ।
धीरज रह्यौ न कह्यौ परै कछु रवकि लई हौ कनियाँ[1]।।
चिवुक पकरि चुँवन करि खोली चोली छन तन तनियाँ।
सघनकुंज लै गयौ लालची, हाथ परे कुच मनियाँ।।
परी सुहस्त वैसही भागन, पायौ प्रान-रवनियाँ।
व्यास मिलाये केवल छैलहिं चलत गैल नर धनियाँ।।४२३।।

गौरी (तर्ज तिताला)

आजु जिन जाउरी माई कोऊ पनघटि है मोहन फैंटी।
नंदकिसोर दुस्यौ कुंजनि में, चोर देत है सैंटी।।
वाट चली आवत ही वरवट, नागरनट हौं भैंटी।
परसत ही धीरज न रह्यौ तन, मनसिज आन खसैंटी[2]।।
तोहि निहौरौं सुंदरि मेरौ, वचन मानि गुजरैंटी[3]।
पुजई आस व्यास के प्रभुकी, कुसुम सेज पर लैंटी।।४२४।।

सारंग

भूली भरन गई ही पानी।
गैल बतावहि छैल छबीलौ, तू न परत पहिचानी।।
मेरी सासु त्रासु करिहै घर, मेरौ पति अभिमानी।
कुलकी नारिहिं गारि चढै जो वनमें रैन विहानी।।
झलकति गागरि अलक सलिल भई, सारी स्वेद चुचानी।
शीत भीततें कंपु बढ्यौ, विपति न जात बखानी।।
मेरे भागनि भेट भई तोहीसौं, भारनि चाँदि पिरानी।
नेंकु उतारहि पाँइ परत हौं, तौतें कौंन सयानी।।
दीन वचन सुनि सदय हृदय के, निरखत मुख मुसकानी।
पूजी आस व्यासदासीकी देखत आँखि सिरानी।।४२५।।

---
१. अंक में २. दबा लिया ३. गूजरी

सघनकुंज वन वीथिनि वीथिनि अरुझति पनियाँ जात।
निकट विकट कंटक पट फाटत, दुख पावत सुखगात।।
खूर खुदे तृन पथ भूलत बेपथ नैंन चुचात।
औमल[1] पट खैंचत नीवी, कटि कुच कंचुक न समात।।
खंडत गंड अधर प्रचंड सखि कासौं कहिये बात।
स्यामहि देत अलोक[2] लोक सब, व्यास न मोहि सुहात।।४२६।।

गौरी

ऐसै हाल कीनेरी नागरनट।
गौरस बेचन जाति अकेली,
आनि पर्यौ औचक जमुना तट।।
फोरि मथनियाँ तोरि मोतिनलर, छोरि कंचुकी,
गहि झकझोरि अंचल चंचल लट।
फारत पट, कुच-घट औघटरी,
व्यासहि देखत भागि चढ्यौ वंशीवट।।४२७।।

धनाश्री

चंद्रवदन चन्द्रावलि गावै।
सोने की मटुकिया पाट की इंडुरिया,
सिर धरि गौरस बेचन आवै।।
घेरौ रे भैया हो जैसैं जान न पावै इहि,
सघन कानन वन ऊवट वाट घाट धावै।
आजु नंद बाबा की सौंह दान लै तब छाँड़ौं,
याहि जोबन गर्व यह अधिक कहावै।।
वतरस अटकति भौंह नैंन मटकति,
छलकरि कुचघटनि दुरावै।
अंचल कंचुकी लट गहतहीं रूठ्यौ देत,
मुरली छिड़ाय लेत अँगूठा दिखावै।।

---

१. उज्जवल २. कलंक

आजु हौं कन्हैया लूटी, मोतिन की लर टूटी,
चूरा चाँपि फूटी, घर झूँठी ये बनावै।
व्यास जोर न वीच होतौ, को जानैं कहा यह करतौ,
ऐसी बातें जोरि व्रज माँझि सुनावै।।४२८।।

गौरी

छाँड़िये नागरनटकी नगरी।
गैल साँकरी छैल गही लट, जाति हुती डगरी।।
पनघट गहें उरजघट घाटहिं गहि राखी गगरी।
चुंवन के वदले में दीनी, मुकता-लर सगरी।।
वरवट हौं लैगयौ गहवर वन, अपनौसो हौं झगरी।
मेलि मोहनी वसकरि मोहि, लगाइ टकटकी ठगरी।।
अब कहि कैसैं रहिये व्रजमें, हमहिं ये सबै अचगरी।
व्यास सुनत उपहाँस त्रास नहिं, जोबन जोर उमगरी।।४२९।।

सारंग

नाहिंन काहूकी स्यामहि संक।
आइ औचक लट गहि मेरी चोली चटकि निसंक।।
मुरि मुसकात सकात चोरि चितु, चितै विलोकनि वंक।
भागि चलै छोरै पुनि टोरै कितवनि कहा कलंक।।
अंचल फारि उतारि हार उर दीने खर नख अंक।
कुंज-कुटीर गयौ लै छलबल छैल मोहि भरि अंक।।
रंग रह्यौ न कह्यौ परै मोपै, माँची रतिरन पंक।
व्यास आस पुजई तन मनकी, निधि पाई जनु रंक।।४३०।।

गईही खरिक दुहावन गाइ।
खोरि साँकरी छैल छबीलै अंचल पकर्‌यौ धाइ।।
तैसी निसि अँधियारी, तैसौई स्याम न जान्यौ जाइ।
इहिं गोरे तन घरके भेदी, वनमें देइ वताइ।।

कुच युग-घट अटके नागरनट, कंठ रहे लपटाइ।
सखि सुधि बुधि न रही तिहिं अवसर धरनि परी मुरझाइ।।
सुखमें दुख उपजत उत देखत नैन मुँदे अकुलाइ।
परी हती हौं आरज पथमें, लीनी व्यास बचाइ।।४३१।।

गौरी (तिताला)

आजु मैं मोहनकौ मुख मोह्यौ।
दह्यौ मथत चंचल अंचल महँ, छबि देखि कुँवर जोह्यौ।।
नैन-भँवर कुच-कमलनि अटक्यौ, लटकत लटकन सोह्यौ।
विकल स्याम गैया के धोखैं, लोई[1] वृषभु सौं दोह्यौ।।
चितै विचेत भई मुहिं जानी, पानि निजु हियौ टटोह्यौ।
परवस रसिक व्यासकौ स्वामी, प्रीति रीति सर पोह्यौ।।४३२।।

सांरग

गोविन्द मेरे मन भायौ।
आनँदकंद नंदनंदन सखि भागनहीं मैं पाइ कंठ लपटायौ।।
सुख-सागर महँ मगन भये इहिं रस झरमें जेहिं झर लायौ।
को हौं को वह को निसि वासर वन किहि विसरायौ।।
हिलग बावरी विलग न जान्यौं, विधि संयोग वनायौ।
जौ पै व्यास प्रभुहि भाइ इतनौं कुलोक अलोकु[2] अज्ञायौ[3]।।४३३।।

कल्याण

कान लगि सुनहिं सखी तौ कहौं मते की बात।
हानि कानि दोऊ न रहति री, पाँचनि में पछितात।।
नेंकु अँगुरिया परसत साधु, कुम्हड़े लौं मरि जात।
सुनत मिलैं मुँह चार कनभरा, फूले अंग न मात।।
नाहिंन लाज सकुच डर अपने, गुरहिं दुरायें खात।
कहा द्वारि गरि भागनि वै सौं दूधु पीयत अघात।।

१. दोहते समय गाय के पिछले पैरों को बाँधने की डोरी २. कलंक ३. अज्ञान

सुनत सखी लै उसरि कुंज गई, सुंदरि अति अकुलात।
व्यास त्रास तजि मिलत कपोलनि, चुंबन दै लपटात।।४३४।।

देवगन्धार

मन मोह्यौ मेरौ मोहन माई।
कहा करौं चित लगी चटपटी खान पान घरु वन न सुहाई।।
विहसनि वंक-विलोकनि सैंननि मैन वढ़्यौ कछू कहत न जाई।
अद्‌भुत छवि वदनारविंद की देखति लोक लाज विसराई।।
मेरैं साहस उनके वाहस[1] मनचीती विधि भली बनाई।
पा लागौं यह कहहि कहूँ जिनि विरस न जानैं लाज पराई।।
रह्यौ न परतु, कह्यौ वहुतनि मिलि, है न होहि कबहूँ सुखदाई।
व्यास त्रास करि को अब छाँड़े, भागन पायौ कुँवर कन्हाई।।४३५।।

धनाश्री

जो भावै सो लोगनि कहन दै।
अवनि पिछाड़ौ पाँव न दीजै, न्याव मेटि प्रीति निवहन दै।।
हौं जोवन मदमाती सखीरी, मेरी छतियाँ पर मोहन रहन दै।
नव-निकुंज पिय अंग संग मिलि, सुरति-पुंज रससिंधु थहन दै।।
या सुख कारन व्यास आस कै लोक वेद उपहास सहन दै।।४३६।।

आसावरी

गोविंद सरद चंद वन मंदहास सोहै।
नटवर-वपु वेष निरखि सकल लोक मोहै।।
मेघ स्याम पीत वसन वनमाला सोहै।
वरह[2] धात[3] गुंज-पुंज उपमा कौं कोहै।।
वंसीवट वेनुनाद सबकौ मन-मोहै।
गोरी चितु चोरि लयौ विकल वृषभ दोहै।।
मोहन धुनि सुनत लोहचुंबक विछोहै।
व्यास मंद, स्यामहि तजि और प्रभुहि टोहै।।४३७।।

---

१. उमँग २. मोरपंख ३. गेरू आदि धातुओं से किया गया ग्वालोचित श्रृंगार

गौरी

बजायौ कौंनें बन महँ वैंन।
मोहन धुनि सुनि मुनिमन मोह्यौ, बाढ्यौ नख सिख मैंन।।
मोहन बीर[1] सुरकेताननि बाननि बींधे-उरकौ ऐंन।
तजिये सुत पति संपति हीरा, भजिये कुसुमनि कौ सैंन।।
चली अली सब तजि, सुंदर पहिं आई मेटि कुचैंन।
नैंन चषक भरि पीवत जीवत, हरि दरसन पय फैंन।।
पियकौ हियौ जानि नहिं मानैं वचन परसि पद रैंन।
व्यासस्वामिनीकी सब सहचरि, रास नची दै भैंन[2]।।४३८।।

सारंग

दुँहुँ आतुरन चातुरता भूली।
कुंजगली अनबोले डोलत, भेट भई सुख-मूली।।
स्याम पीतपट सेज करी, स्यामा निजु कंचुकी खूली।
रजनीमुख सुख देख परस्पर, चितवत झूलाहूली।।
अंग टटोरी अँगुरियनि बातैं, कहत कुँवरि सुख फूली।
पिय हिय सुख दै व्यासस्वामिनी, सुरत डोल चढ़ि झूली।।४३९।।

गौरी

भोर किसोर चोर लौं सकुचत, फूले अंग न मात।
चोरी फवी न थोरी, चारी[3] करत तुम्हारे गात।।
नैंन भरे सुख, चोर सैंन दै, कहत गुपित की बात।
सनमुख पाँइनि परत डरत कत, सुखहू में पछितात।।
भागु रावरौ कपट करतहूँ, महँगे मोल विकात।
सुनत अनादर हँसत जात, बरबसही उर लपटात।।
सर्वसु दान व्यास जौ दीजै, तौलौं मीन अघात।।४४०।।

---

१. निपुण २. उद्घोष करती हुई ३. चुगली

सारंग

रंग भरे लालन आए मेरैं हौं देखत भूलि रही।
चित्र विचित्र बनाव कियौ अंग अँग,
अनंग कोटि-वारौं, मोपै सोभा नहि परति कही।।
जब मुसक्याय चितै सैंननि दै,
नैंननि सौं नैन मिलत मेरी वहियाँ गही।
अति नवीन प्रवीन सबही अँग व्यासकौ,
प्रभु चाहत सुरत केलि सुख ही।।४४१।।

धनाश्री व आसावरी

माईरी मेरैं मोहन आये।
बहुत दिननि के बिछुरे भाग बड़े घर बैठे पाये।।
करि न्यौछावरि तन मन धन जोवन, आनँद गीत गवाये।
चोवा चंदन चौक पूरि मैं, मंगल कलस पुजाये।।
मगन भयौ मनमें मनु हँसि, नैंननि सैंन मिलाये।
कछुव न सकुच रही तिहि अवसर उरज उमगि उरलाये।।
भये मनोरथ पूरन मेरे सब परिताप बुझाये।
व्यास काम वस हम दोऊ जन सिगरी राति जगाये।।४४२।।

कल्याण

कठिन हिलग की रीति प्रीति करि लंपट पै न अघात।
अति आतुर चातुरता भूलत प्रीतम कह अकुलात।।
परत तेलमें माखी मरति न, जानत दुख की बात।
चंचल चैंटी चाखि राव रसु प्रान विसरि लपटात।।
चंचल मृग घंट सुनि सिर धुनि, बैठि बँधावत गात।
परत पतंग दीपज्वाला महँ, आरत काहि डरात।।
चोर, चकोर, मोर, निसि, ससि, घन, देखत नैंन सिरात।
सबसौं कपट करत अलि, कमलहिं जीवन दै अरुझात।।

पावत कृपन धनहिं गहि राखत, काहू देत न खात।
जियत महीरुह[1] सरिता चातिक, घन बूँदनि चुचवात।।
जा विनु मीन, जलज नहिं जीवत दादुर नहिं पछितात।
व्यास वचन सुनि कुँवरि कुँवर के कंठ लागि मुसकात।।४४३।।

देवगन्धार

आजु पिय राति न तुम कछु सोये।
कौंन भामिनि के भवन जगे हरि, जाके रस-वस मोये।।
रति-रस उमगि चले नखसिख अँग, नीरस अधर निचोये।
खंडित गंड पीक मुखकी छवि, अरुन अलस अति पोये।।
जावक पीक मषी रस कुमकुम स्वाद वासना भोये।
लटकति सिर पगिया, लट विगलित सुंदर स्वाँग सजोये।।
तन मन कारे हौंहि न गोरे कोटि वारि जो धोये।
खोटी टेव न तजत व्यास प्रभु मैं कै बार विगोये।।४४४।।

धनाश्री

सर्वसु लूटि छूटि क्यौं आये।
सकुचि न कारी सारी ओढ़ैं नैंन न दुरत दुराये।।
लटपटीपाग, सटपटे पाँइ परत ही, तुम लखि पाये।
ता कहँ दुख दै मुख सनमुख कै, हम कहँ अति दुख लाये।।
नाक महावर काजर कौ रँगु अस सुरंग रँगाये।
एक घरी के विछुरैं व्यास त्रास तजि भये पराये।।४४५।।

सारंग

राख्यौ रंग कौंन गोरी सौं।
सुनहु स्याम फवि आइ कितव, तुमहिं लहनौं चोरी सौं।।
चंदन विंदु ललाट इंदु सम, सिर वंदन रोरी सौं।
अधरनि अंजन रेख न मेष नैंन अरुन तेरी सौं।।

---

१. वृक्ष

भोर किसोर चोरलौं आये प्रीति करत भोरी सौं।
सौंह करत चीन्हैं पर कछु वसाइ न वरजोरी सौं।।
नील निचोल प्रगट चोली भूषन चूराडोरी सौं।
जानति सब व्यासके स्वामिहि प्रीति टरा-टोरीसौं।।४४६।।

मौंगे रहहु तुम कहहु जिनि बात।
सुनहुँ किसोर चोर तुम खोटे आये प्रगट प्रभात।।
सकुचत नख कुच अंग दुरावत नील वसन महँ गात।
मनौं द्वय राकानिसि ससि गन घन में मुदित न मात।।
ता महँ अद्‌भुत छवि उपजति उर जावक जुत पद लात।
मनहुँ सुधा मधु वरषि मिले रिपु मति तजि विधु जलजात।।
पीक अधर खंडित मषि मंडित फूले अंग न मात।
मानहु विद्रुम मर्कतमनि मिलि कनक खचित मुसिकात।।
लोचन पीक लीक रस रंजित, अरुन अलस इतरात।
जनु कुमकुम मकरंद सु रंजित भ्रमर भ्रमत न अघात।।
जानतहूँ मानत नहिं चोरी ता ऊपर अनखात।
व्यास न करत त्रास दुख दाता बरबट उर लपटात।।४४७।।

कल्याण

आये माई प्रात कहाँ तैं नाहु।
गात चुचात सुरत रस मोहन, नैंननि बहुत उछाहु।।
खंडित-गंड, अधर-मंडित दर्पन तन धौवाहु[१]।
जैसी प्रभुता दिन दिन बाढ़ी कोटिक हाथ विकाहु।।
वा कहँ सुख अखिल दुख दै मोहि पिय अब जिनि तुम लपटाहु।
जासौं हिलिमिलि राति पगे, अब वेगि तहीं तुम जाहु।।
सुनहु व्यासके प्रभु तुम ऐसौ कीनौं कपट निवाहु।।४४८।।

१. देखना

मोहन न्याउ कहावत स्याम।
भोर किसोर चोर लौं आये, जगे कौंन के धाम।।
कितवनि के भैयनि की लेंहुँ बलैया, हँसनि ललाम।
मुख देखे बिनु सुख न पाइये, दुख न रहत सुनि नाम।।
नखसिख अंग अनंग संग रति रंग रचे अभिराम।
अद्‌भुत छबि की छटा विलोकत लोचन मिलत न वाम।।
महँगे मोल विकानें पर धन, जोबन-बल विनु दाम।
व्यासहि है परतीति तुम्हारी, संगति कौ फल काम।।४४९।।

देवगन्धार

आजु पिय पाये मैं जानि।
कहत वचन वृषभानकिसोरी, तुम्हरी कहाँलगि कीजै कानि।।
सूचत सुरत-प्रसंग सकल अँग, कतहि दिखाये आनि।
अधरनि-अंजन, नयन-पीक-रस, उर नख रेखँ सुवानि।।
कहहु कृपाकरि कैसैं आये, बहुत सही सुख हानि।
मदयंतिका मषि जावक रँग, कहाँ रँगाये पानि।।
जानत हौं परधन रसलंपट कपट सम्हारी थानि।
कैतव कपट तजत नहिं कबहूँ व्यास बृथा पहिचानि।।४५०।।

भोर भयैं आये पिय जीय महँ,
सकुचात हौ न सन्मुखहू चितवत।
वारक चूक परी तौ कहा भयौ अवगुन करि,
अश्रुन भरि कत नैंननि रितवत।।
सब अंग रति रस रंगे लाल तुम,
याके रसवस नहीं जानत रैनिहू बितवत।
काकी आस व्यासके स्वामिहि टेंव परी,
खोटी लोटि पोटि हारेहू जितवत।।४५१।।

सुवरन पलना ललना लाल झूलहु।
अंग अंग प्रति गुन गन निरखत दुख मोचत लोचन अति फूलहु।।
मुख महँ अधर पयोधर उमहे नाहु वाहु महँ तूलहु।
गौर स्याम गंड खंडित नख पद मंडित कबहुँ दुकूलहु।।
सो रस श्रवन सिथिल तन मन सुख बाढ्यौ भालन भूलहु।
व्यासदासि रस रासि दृगंचल चंचल अंचल दूलहु।।४५२।।

षट व आसावरी

स्यामा स्याम वलैया लैहौं।
दुख सुख तजि वृंदावन रहि हौं।।
अति पावन जमुना जल न्हैहौं।
व्रजवासिनिकी जूँठनि खैहौं।।
वंशीवटकी छैयाँ रहैहौं।
कुंजनि छाँड़ि अनत नहिं जैहौं।।
श्रीराधा रूसी वेगि मनैहौं।
क्रीड़ा रस पीवत न अघैहौं।।
सुंदर नाम स्याम गुन गैहौं।
व्यास कहत रासहिं मन दैहौं।।४५३।।